७

श्री धनमुनि 'प्रथम'

• गुरु • अधर्म •
अहिंसा • दया • सत्य •
ईमानदार • मिलावट •
• क्षमा • रिश्वत • ब्रह्मचर्य • दूध
• विनय • घृणा • विवाह • पति - पत्नी • दूध
अभिमान • अपमान पतिव्रता • तृष्णा भूगर्भ • भूगोल •
कषाय • प्रमाद • निद्रा • सती-प्रथा • मानव का कर्तव्य
चिन्ता • घृणा • मूल • स्त्री-सम्मान • संसार • नरक • भारत
गाँव और शहर • दूध • सज्जन • सत्संग • धूर्त • धैर्य •
कायर • अद्भुत बली • कुलीन • गुणज्ञ • गुणहीन • दाता
• कृपण • • धन • सिक्का • आत्मज्ञान • संग्रह •
अमरीका का खजाना • गरीबी • • मन •
संग्रह • आत्म-विकास • आत्म विजय •
इन्द्रियां • मन • भाषा • मनोनिग्रह • स्वास्थ्य
दृढ़ संकल्प • शरीर • वाद विवाद • वक्ता
मौन • श्रोता • रोग • विद्या • विद्यार्थी • मन
औषधि • काल • परीक्षा • आदत
अवसर • कुदरत •

वक्तृत्वकला के बीज

भाग २

वक्तृत्व-कला के बीज

श्री धनमुनि "प्रथम"

वक्तृत्वकला के बीज
दूसरा भाग

समन्वय प्रकाशन

प्र० सं०

* **मोतीलाल पारख**
* **ब्रह्मदेव सिंह**
  गोंडा (प्रतापगढ़ उ० प्र०)

प्रकाशक :

* **श्री मोतीलाल पारख**
  दि अहमदाबाद लक्ष्मी कॉटन मिल्स
  कं० लि०
  पो० बाक्स नं० ४२
  अहमदाबाद-२२

प्रथम आवृत्ति २०००
बसन्त पंचमी, वि० सं० २०२८
जनवरी १९७२

*

मूल्य : [illegible]

संपर्क सूत्र :
संजय साहित्य संगम
दासबिल्डिग न० ५
बिल्लोचपुरा, आगरा-२

मुद्रक :
श्री प्रिंटर्स
राजा की मण्डी,
आगरा-२

उन जिज्ञासुओं को
जिनकी उर्वर-मनोभूमि में
ये बीज
अंकुरित
पुष्पित
फलित हो
अपना विराट् रूप प्राप्त कर सकें !

प्राप्ति केन्द्र :

* **श्री सम्पतराय बोरड़**

  C/o मदनचन्द, सम्पतराय बोरड़

  ४०, धानमण्डी

  श्री गंगानगर (राजस्थान)

* **श्री मोतीलाल पारख**

  दि अहमदाबाद लक्ष्मी कॉटन मिल्स कं० लि०

  पो० बाक्स नं० ४२

  अहमदाबाद-२२

—*—

प्राक्कथन

मानव जीवन में वाचा की उपलब्धि एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। हमारे प्राचीन आचार्यों की दृष्टि में वाचा ही सरस्वती का अधिष्ठान है, **वाचा सरस्वती भिषग्**[1]—वाचा ज्ञान की अधिष्ठात्री होने से स्वयं सरस्वती रूप है, और समाज के विकृत आचार-विचार-रूप रोगों को दूर करने के कारण यह कुशल वैद्य भी है।

अन्तर के भावों को एक दूसरे तक पहुँचाने का एक बहुत बड़ा माध्यम वाचा ही है। यदि मानव के पास वाचा न होती तो, उसकी क्या दशा होती ? क्या वह भी मूकपशुओं की तरह भीतर ही भीतर घुटकर समाप्त नहीं हो जाता ? मनुष्य, जो गूंगा होता है, वह अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए कितने हाथ-पैर मारता है, कितना छटपटाता है फिर भी अपना सही आशय कहां समझा पाता है दूसरों को ?

बोलना वाचा का एक गुण है, किंतु बोलना एक अलग चीज है, और वक्ता होना वस्तुतः एक अलग चीज है। बोलने को हर कोई बोलता है, पर वह कोई कला नहीं है, किंतु वक्तृत्व एक कला है। वक्ता साधारण से विषय को भी कितने सुन्दर और मनोहारी रूप से प्रस्तुत करता है कि श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। वक्ता के बोल श्रोता के हृदय में ऐसे उतर जाते हैं कि वह उन्हें जीवन भर नहीं भूलता।

कर्मयोगी श्रीकृष्ण, भगवान्महावीर, तथागतबुद्ध, व्यास और भद्रबाहु आदि भारतीय प्रवचन-परम्परा के ऐसे महान् प्रवक्ता थे,

---

१ यजुर्वेद १९।१२

जिनकी वाणी का नाद आज भी हजारों-लाखों लोगों के हृदयों को आप्यायित कर रहा है। महाकाल की तूफानी हवाओं में भी उनकी वाणी की दिव्य ज्योति न बुझी है और न बुझेगी।

हर कोई वाचा का धारक, वाचा का स्वामी नहीं बन सकता। वाचा का स्वामी ही वाग्मी या वक्ता कहलाता है। वक्ता होने के लिए ज्ञान एवं अनुभव का आयाम बहुत ही विस्तृत होना चाहिए। विशाल अध्ययन, मनन-चिंतन एवं अनुभव का परिपाक वाणी को तेजस्वी एवं चिरस्थायी बनाता है। विना अध्ययन एवं विषय की व्यापक जानकारी के भाषण केवल भषण (भोंकना) मात्र रह जाता है, वक्ता कितना ही चीखे-चिल्लाये, उछले-कूदे यदि प्रस्तावित विषय पर उसका सक्षम अधिकार नहीं है, तो वह सभा में हास्यास्पद हो जाता है, उसके व्यक्तित्व की गरिमा लुप्त हो जाती है। इसीलिए बहुत प्राचीनयुग में एक ऋषि ने कहा था—**वक्ता शतसहस्रेषु**, अर्थात् लाखों में कोई एक वक्ता होता है।

शतावधानी मुनि श्री धनराज जी जैनजगत के यशस्वी प्रवक्ता हैं। उनका प्रवचन, वस्तुतः प्रवचन होता है। श्रोताओं को अपने प्रस्तावित विषय पर केन्द्रित एवं मंत्र-मुग्ध कर देना उनका सहज कर्म है। और यह उनका वक्तृत्व—एक बहुत बड़े व्यापक एवं गंभीर अध्ययन पर आधारित है। उनका संस्कृत-प्राकृत आदि प्राचीन भाषाओं का ज्ञान विस्तृत है, साथ ही तलस्पर्शी भी ! मालूम होता है, उन्होंने पांडित्य को केवल छुआ भर नहीं है, किंतु समग्रशक्ति के साथ उसे गहराई से अधिग्रहण किया है। उनकी प्रस्तुत पुस्तक **'वक्तृत्वकला के बीज'** में यह स्पष्ट परिलक्षित होता है।

प्रस्तुत कृति में जैन आगम, बौद्धवाङ्मय, वेदों से लेकर उपनिषद ब्राह्मण, पुराण, स्मृति आदि वैदिक साहित्य तथा लोककथानक, कहावतें, रूपक, ऐतिहासिक घटनाएँ, ज्ञान-विज्ञान की उपयोगी चर्चाएँ—

इसप्रकार शृंखलाबद्ध रूप में संकलित है कि किसी भी विषय पर हम बहुत कुछ विचार-सामग्री प्राप्त कर सकते हैं। सचमुच वक्तृत्व-कला के अगणित बीज इसमें सन्निहित हैं। सूक्तियों का तो एक प्रकार से यह रत्नाकर ही है। अंग्रेजी साहित्य व अन्य धर्मग्रंथों के उद्धरण भी काफी महत्वपूर्ण हैं। कुछ प्रसंग और स्थल तो ऐसे हैं, जो केवल सूक्ति और सुभाषित ही नहीं है, उनमें विषय की तलस्पर्शी गहराई भी है और उसपर से कोई भी अध्येता अपने ज्ञान के आयाम को और अधिक व्यापक बना सकता है। लगता है, जैसे मुनि श्री जी वाङ्मय के रूप में विराट् पुरुष हो गए हैं। जहां पर भी दृष्टि पड़ती है, कोई-न-कोई वचन ऐसा मिल ही जाता है. जो हृदय को छू जाता है और यदि प्रवक्ता प्रसंगत: अपने भाषण में उपयोग करे, तो अवश्य ही श्रोताओं के मस्तक झूम उठेंगे।

प्रश्न हो सकता है—'वक्तृत्वकला के बीज' में मुनि श्री का अपना क्या है ? यह एक संग्रह है और संग्रह केवल पुरानी निधि होती है; परन्तु मैं कहूँगा कि फूलों की माला का निर्माता माली जब विभिन्न जाति एवं विभिन्न रंगों के मोहक पुष्पों की माला बनाता है तो उसमें उसका अपना क्या है ? बिखरे फूल, फूल हैं, माली नहीं। माला का अपना एक अलग ही विलक्षण सौन्दर्य है। रंग-बिरंगे फूलों का उपयुक्त चुनाव करना और उनका कलात्मक रूप में संयोजन करना—यही तो मालाकार का कर्म है, जो स्वयं में एक विलक्षण एवं विशिष्ट कलाकर्म है। मुनि श्री जी वक्तृत्वकला के बीज में ऐसे ही विलक्षण मालाकार हैं। विषयों का उपयुक्त चयन एवं तत्सम्बन्धित सूक्तियों आदि का संकलन इतना शानदार हुआ है कि इस प्रकार का संकलन अन्यत्र इस रूप में नहीं देखा गया।

एक बात और—श्री चन्दनमुनि जी की संस्कृत-प्राकृत रचनाओं ने मुझे यथावसर काफी प्रभावित किया है। मैं उनकी विद्वत्ता का प्रशंसक रहा हूँ। श्री धनमुनि जी उनके बड़े भाई हैं—जब यह मुझे

ज्ञात हुआ तो मेरे हर्ष की सीमाओं का और भी अधिक विस्तार हो गया। अब मैं कैसे कहूँ कि इन दोनों में कौन बड़ा है और कौन छोटा ? अच्छा यही होगा कि एक को दूसरे से उपमित कर दूँ। उनकी बहुश्रुतता एवं इनकी संग्रह-कुशलता से मेरा मन मुग्ध हो गया है।

मैं मुनि श्री जी, और उनकी इस महत्वपूर्णकृति का हृदय से अभिनन्दन करता हूँ। विभिन्न भागों में प्रकाशित होने वाली इस विराट् कृति से प्रवचनकार, लेखक एवं स्वाध्यायप्रेमीजन मुनि श्री के प्रति ऋणी रहेंगे। वे जब भी चाहेंगे, वक्तृत्व के बीज में से उन्हें कुछ मिलेगा ही, वे रिक्तहस्त नहीं रहेंगे ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रवक्तृ-समाज—मुनि श्री जी का एतदर्थ आभारी है और आभारी रहेगा।

जैन भवन
आश्विन शुक्ला-३
आगरा

—उपाध्याय अमरमुनि

सम्पादकीय

वक्तृत्वगुण एक कला है, और वह बहुत बड़ी साधना की अपेक्षा करता है। आगम का ज्ञान, लोकव्यवहार का ज्ञान, लोकमानस का ज्ञान और समय एवं परिस्थितियों का ज्ञान तथा इन सबके साथ निस्पृहता, निर्भयता, स्वर की मधुरता, ओजस्विता आदि गुणों की साधना एवं विकास से ही वक्तृत्वकला का विकास हो सकता है, और ऐसे वक्ता वस्तुतः हजारों लाखों में कोई एकाध ही मिलते हैं।

तेरापंथ के अधिशास्ता युगप्रधान आचार्य श्रीतुलसी में वक्तृत्वकला के ये विशिष्ट गुण चमत्कारी ढंग से विकसित हुए हैं। उनकी वाणी का जादू श्रोताओं के मन-मस्तिष्क को आन्दोलित कर देता है। भारतवर्ष की सुदीर्घ पदयात्राओं के मध्य लाखों नर-नारियों ने उनकी ओजस्विनी वाणी सुनी है और उसके मधुर प्रभाव को जीवन में अनुभव किया है।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक मुनि श्री धनराजजी भी वास्तव में वक्तृत्वकला के महान गुणों के धनी एक कुशल प्रवक्ता संत हैं। वे कवि भी हैं, गायक भी हैं, और तेरापंथ शासन में सर्वप्रथम अवधानकार भी हैं; इन सबके साथ-साथ बहुत बड़े विद्वान तो हैं ही। उनके प्रवचन जहां भी होते हैं, श्रोताओं की अपार भीड़ उमड़ आती है। आपके विहार करने के बाद भी श्रोता आपकी याद करते रहते हैं।

आपकी भावना है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी वक्तृत्वकला का विकास करें और उसका सदुपयोग करें, अतः जन-समाज के लाभार्थ आपने वक्तृत्व के योग्य विभिन्न सामग्रियों का यह विशाल संग्रह प्रस्तुत किया है।

बहुत समय से जनता की, विद्वानों की और वक्तृत्वकला के अभ्यासियों की माँग थी कि इस दुर्लभ सामग्री का जन-हिताय प्रकाशन किया जाय तो बहुत लोगों को लाभ मिलेगा। जनता की भावना के अनुसार हमने मुनिश्री की इस सामग्री को धारणा प्रारंभ किया। इस कार्य को सम्पन्न करने में श्री डूंगरगढ़, मोमासर, भादरा, हिसार, टोहाना, नरवाना कैथल, हांसी, भिवानी, तोसाम, ऊमरा, सिसाय, जमालपुर, सिरसा और भटिंडा आदि के विद्यार्थियों एवं युवकों ने अथक परिश्रम किया है। फलस्वरूप लगभग सौ कापियों व १५०० विषयों में यह सामग्री संकलित हुई है। हम इस विशाल संग्रह को विभिन्न भागों में प्रकाशित करने का संकल्प लेकर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुए हैं।

इस पुस्तक की महत्ता और उपयोगिता के अनुसार ही इसकी भूमिका लिखी है जैनसमाज के बहुश्रुत विद्वान तटस्थ विचारक उपाध्याय श्री अमरमुनि जी ने। उनके इस अनुग्रह का मैं हृदय से आभारी हूं।

वक्तृत्वकला के बीज का यह दूसरा भाग पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। इसके प्रकाशन एवं प्रूफ संशोधन आदि में श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' तथा श्री ब्रह्मदेवसिंह जी आदि का जो हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ है—उसके लिए भी हम हृदय से कृतज्ञता-ज्ञापित करते हैं। आशा है यह पुस्तक जन-जन के लिए, वक्ताओं और लेखकों के लिए एक इनसाईक्लोपीड़िया (विश्वकोश) का काम देगी और युग-युग तक इसका लाभ मिलता रहेगा....

●●

आत्म निवेदन

'मनुष्य की प्रकृति का बदलना अत्यन्त कठिन है'—यह सूक्ति मेरे लिए सवा सोलह आना ठीक साबित हुई। बचपन में जब मैं कलकत्ता—श्री जैनेश्वेताम्बर-तेरापंथी-विद्यालय में पढ़ता था, जहाँ तक याद है, मुझे जलपान के लिए प्राय: प्रतिदिन एक आना मिलता था। प्रकृति में संग्रह करने की भावना अधिक थी, अत: मैं खर्च करके भी उसमें से कुछ न कुछ बचा ही लेता था। इस प्रकार मेरे पास कई रुपये इकट्ठे हो गये थे और मैं उनको एक डिब्बी में रखा करता था।

विक्रम संवत् १९७९ में अचानक माताजी की मृत्यु होने से विरक्त होकर हम (पिता श्री केवलचन्द जी, मैं, छोटी बहन दीपांजी और छोटे भाई चन्दनमल जी) परमकृपालु श्री कालुगणीजी के पास दीक्षित हो गए। यद्यपि दीक्षित होकर रुपयों-पैसो का संग्रह छोड़ दिया, फिर भी संग्रहवृत्ति नहीं छूट सकी। वह धनसंग्रह से हटकर ज्ञानसंग्रह की ओर झुक गई। श्री कालुगणी के चरणों में हम अनेक बालक मुनि आगम-व्याकरण-काव्य-कोष आदि पढ़ रहे थे। लेकिन मेरी प्रकृति इस प्रकार की बन गई थी कि जो भी दोहा-छन्द-श्लोक-ढाल-व्याख्यान-कथा आदि सुनने या पढ़ने में अच्छे लगते, मैं तत्काल उन्हें लिख लेता या संसार-पक्षीय पिताजी से लिखवा लेता। फलस्वरूप उपरोक्त सामग्री का काफी अच्छा संग्रह हो गया। उसे देखकर अनेक मुनि विनोद की भाषा में कह दिया करते थे कि "धन्नू तो न्यारा में जाने की (अलग विहार करने की) तैयारी कर रहा है।" उत्तर में मैं कहा करता—"क्या आप गारंटी दे सकते हैं कि इतने (१० या १५) साल तक आचार्य श्री हमें अपने साथ ही रखेंगे ? क्या पता, कल ही अलग विहार करने

का फरमान करदें। व्याख्यानादि का संग्रह होगा तो धर्मोपदेश या धर्म-प्रचार करने में सहायता मिलेगी।"

समय-समय पर उपरोक्त साथी मुनियों का हास्य-विनोद चल ही रहा था कि वि० सं० १९८६ में श्री कालुगणी ने अचानक ही श्रीकेवलमुनि को अग्रगण्य बनाकर रतननगर (थेलासर) चातुर्मास करने का हुक्म दे दिया। हम दोनों भाई (मैं और चन्दन मुनि) उनके साथ थे। व्याख्यान आदि का किया हुआ संग्रह उस चातुर्मास में बहुत काम आया एवं भविष्य के लिए उत्तमोत्तम ज्ञानसंग्रह करने की भावना बलवती बनी। हम कुछ वर्ष तक पिताजी के साथ विचरते रहे। उनके दिवंगत होने के पश्चात् दोनों भाई अग्रगण्य के रूप में पृथक्-पृथक् विहार करने लगे।

विशेष प्रेरणा—एक बार मैंने 'वक्ता बनो' नाम की पुस्तक पढ़ी। उसमें वक्ता बनने के विषय में खासी अच्छी बातें बताई हुई थीं। पढ़ते-पढ़ते यह पंक्ति दृष्टिगोचर हुई कि "कोई भी ग्रन्थ या शास्त्र पढ़ो, उसमें जो भी बात अपने काम की लगे, उसे तत्काल लिख लो।" इस पंक्ति ने मेरी संग्रह करने की प्रवृत्ति को पूर्वापेक्षया अत्यधिक तेज बना दिया। मुझे कोई भी नई युक्ति, सूक्ति या कहानी मिलती, उसे तुरंत लिख लेता। फिर जो उनमें विशेष उपयोगी लगती, उसे औपदेशिक भजन, स्तवन या व्याख्यान के रूप में गूंथ लेता। इस प्रवृत्ति के कारण मेरे पास अनेक भाषाओं में निबद्ध स्वरचित सैकड़ों भजन और सैकड़ों व्याख्यान इकट्ठे हो गए। फिर जैन-कथा साहित्य एवं तात्त्विकसाहित्य की ओर रुचि बढ़ी। फलस्वरूप दोनों ही विषयों पर अनेक पुस्तकों की रचना हुई। उनमें छोटी-बड़ी लगभग २८ पुस्तकें तो प्रकाश में आ चुकी, शेष ३०-३२ अप्रकाशित ही हैं।

एक बार संगृहीत-सामग्री के विषय में यह सुझाव आया कि यदि प्राचीन संग्रह को व्यवस्थित करके एक ग्रन्थ का रूप दे दिया जाए, तो यह उत्कृष्ट उपयोगी चीज बन जाए। मैंने इस सुझाव को स्वीकार किया और अपने प्राचीन संग्रह को व्यवस्थित करने में जुट गया। लेकिन पुराने संग्रह में कौन-सी सूक्ति, श्लोक या हेतु किस ग्रन्थ या शास्त्र के है अथवा किस कवि, वक्ता या लेखक के हैं—यह प्रायः लिखा हुआ नहीं था। अतः ग्रन्थों या शास्त्रों आदि की साक्षियां प्राप्त करने के लिए—इन आठ-नौ वर्षों में वेद, उपनिषद्, इतिहास, स्मृति, पुराण, कुरान, बाइबिल, जैनशास्त्र, बौद्धशास्त्र, नीतिशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, स्वप्नशास्त्र, शकुनशास्त्र, दर्शन-शास्त्र, संगीत-शास्त्र तथा अनेक हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती मराठी एवं पंजाबी सूक्तिसंग्रहों का ध्यानपूर्वक यथासम्भव अध्ययन किया। उससे काफी नया संग्रह बना और प्राचीन संग्रह को साक्षी सम्पन्न बनाने में सहायता मिली। फिर भी खेद है कि अनेक सूक्तियाँ एवं श्लोक आदि बिना साक्षी के ही रह गए। प्रयत्न करने पर भी उनकी साक्षियां नहीं मिल सकीं। जिन-जिन की साक्षियां मिली हैं, उन-उनके आगे वे लगा दी गई हैं। जिनकी साक्षियां उपलब्ध नहीं हो सकीं, उनके आगे स्थान रिक्त छोड़ दिया गया है। कई जगह प्राचीन संग्रह के आधार पर केवल महाभारत, वाल्मीकि रामायण, योग-शास्त्र आदि महान् ग्रन्थों के नाममात्र लगाए हैं; अस्तु !

इस ग्रंथ के संकलन में किसी भी मत या सम्प्रदाय विशेष का खण्डन-मण्डन करने की दृष्टि नहीं है, केवल यही दिखलाने का प्रयत्न किया गया है कि कौन क्या कहता है या क्या मानता है। यद्यपि विश्व के विभिन्न देशनिवासी मनीषियों के मतों का संकलन होने से ग्रन्थ में भाषा की एकरूपता नहीं रह

सकी है। कहीं प्राकृत-संस्कृत, पारसी, उर्दू एवं अंग्रेजी भाषा है तो कहीं हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, पंजाबी और बंगाली भाषा के प्रयोग हैं, फिर भी कठिन भाषाओं के श्लोक, वाक्य आदि का अर्थ हिन्दी भाषा में कर दिया गया है। दूसरे प्रकार से भी इस ग्रन्थ में भाषा की विविधता है। कई ग्रन्थों, कवियों, लेखकों एवं विचारकों ने अपने सिद्धान्त निरवद्यभाषा में व्यक्त किए हैं तो कई साफ-साफ सावद्यभाषा में ही बोले हैं। मुझे जिस रूप में जिसके जो विचार मिले हैं, उन्हें मैंने उसी रूप में अंकित किया है, लेकिन मेरा अनुमोदन केवल निर्वद्य-सिद्धान्तों के साथ है।

ग्रन्थ की सर्वोपयोगिता— इस ग्रन्थ में उच्चस्तरीय विद्वानों के लिए जहाँ जैन-बौद्ध आगमों के गम्भीर पद्य हैं, वेदों, उपनिषदों के अद्भुत मंत्र हैं, स्मृति एवं नीति के हृदयग्राही श्लोक हैं वहाँ सर्वसाधारण के लिए सीधी-सादी भाषा के दोहे, छन्द, सूक्तियाँ, लोकोक्तियाँ, हेतु, दृष्टान्त एवं छोटी-छोटी कहानियाँ भी हैं। अतः यह ग्रन्थ निःसंदेह हर एक व्यक्ति के लिए उपयोगी सिद्ध होगा— ऐसी मेरी मान्यता है। वक्ता, कवि और लेखक इस ग्रन्थ से विशेष लाभ उठा सकेंगे, क्योंकि इसके सहारे वे अपने भाषण, काव्य और लेख को ठोस, सजीव, एवं हृदयग्राही बना सकेंगे एवं अद्भुत विचारों का विचित्र चित्रण करके उनमें निखार ला सकेंगे, अस्तु !

ग्रन्थ का नामकरण—इस ग्रन्थ का नाम 'वक्तृत्वकला के बीज' रखा गया है। वक्तृत्वकला की उपज के निमित्त यहाँ केवल बीज इकट्ठे किए गए हैं। बीजों का वपन किसलिए, कैसे, कब और कहां करना—यह वप्ता (बीच बोनेवालों) की भावना एवं बुद्धिमत्ता पर निर्भर करेगा। फिर भी मेरी मनोकामना तो यही है कि वप्ता परमात्मपदप्राप्ति रूप फल ो

के लिए शास्त्रोक्तविधि से अच्छे अवसर पर उत्तम क्षेत्रों में इन बीजों का वपन करेंगे। अस्तु !

यहाँ मैं इस बात को भी कहे बिना नहीं रह सकता कि जिन ग्रन्थों, लेखों, समाचार पत्रों एवं व्यक्तियों से इस ग्रन्थ के संकलन में सहयोग मिला है—वे सभी सहायक रूप से मेरे लिए चिरस्मरणीय रहेंगे।

यह ग्रंथ कई भागों में विभक्त है एवं उनमें सैकड़ों विषयों का संकलन है। उक्त संग्रह बालोतरा मर्यादा-महोत्सव के समय मैंने आचार्य श्रीतुलसी को भेंट किया। उन्होंने देखकर बहुत प्रसन्नता व्यक्त की एवं फरमाया कि इसमें छोटी-छोटी कहानियाँ एवं घटनाएँ भी लगा देनी चाहिये ताकि विशेष उपयोगी बन जाए। आचार्य श्री का आदेश स्वीकार करके इसे संक्षिप्त कहानियाँ तथा घटनाओं से सम्पन्न किया गया।

मुनिश्री चन्दनमलजी, डूंगरमलजी, नथमलजी, नगराज जी, मधुकरजी, राकेशजी, रूपचन्दजी आदि अनेक साधु एवं साध्वियों ने भी इस ग्रन्थ को विशेष उपयोगी माना। बीदासर-महोत्सव पर कई संतों का यह अनुरोध रहा कि इस संग्रह को अवश्य धरा दिया जाए।

सर्व प्रथम वि० सं० २०२३ में श्री डूँगरगढ़ के श्रावकों ने इसे धारणा शुरू किया। फिर थली, हरियाणा एवं पंजाब के अनेक ग्रामों-नगरों के उत्साही युवकों ने तीन वर्षों के अथक-परिश्रम से धारकर इसे प्रकाशन के योग्य बनाया।

मुझे दृढ़विश्वास है कि पाठकगण इसके अध्ययन, चिन्तन एवं मनन से अपने बुद्धि-वैभव को क्रमशः बढ़ाते जायेंगे—

वि० सं० २०२७ मृगसर बदी ४
मंगलवार, रामामंडी, (पंजाब)

—धनमुनि 'प्रथम'

अनुक्रमणिका

पहला कोष्ठक पृष्ठ १ से ७७

१ ब्रह्मचर्य, २ ब्रह्मचर्य की दुष्करता, ३ ब्रह्मचर्य की महिमा, ४ ब्रह्मचर्य सम्बन्धी उपदेश, ५ ब्रह्मचर्य के फल, ६ ब्रह्मचारी, ७ ब्रह्मचारी को शिक्षा, ८ ब्रह्मचर्य की नव गुप्तियां (बाड़ें), ९ ब्रह्मचर्य सम्बन्धी उदाहरण, १० अब्रह्मचर्य, ११ विषय-वासना, १२ काम, १३ काम के भेद, १४ भोग, १५ काम-भोग, १६ कामासक्त, १७ कामान्धों के उदाहरण, १८ विवाह, १९ विवाह का प्रभाव, २० विवाह का समय, २१ विवाह किसके साथ ? २२ कन्यादान, २३ विवाह के भेद, २४ विवाह के मंत्र, २५ वैवाहिक रीति-रिवाज का रहस्य, २६ विवाह के विचित्र रूप, २७ पुनर्विवाह, २८ विवाह-सम्बन्धी कहावतें, २९ बींद-बींदणी की अद्‌भुत जोड़ी, ३० पति-पत्नी की एकता, ३१ पति-पत्नी का सहवास, अनियमित न हो ! ३२ सहवास के लिए निषिद्ध समय एवं त्याग, ३३ अति सहवास का निषेध, ३४ गर्भाधान के विषय में विवेक ।

दूसरा कोष्ठक पृष्ठ ७८ से १६७

१ परस्त्रीगमन-निन्दा एवं निषेध, २ परस्त्रीगामी, ३ परस्त्री-त्यागी, ४ पति का सर्वस्व पत्नी, ५ पतिव्रता एवं साध्वी स्त्री, ६ सुभार्या, ७ पतिव्रता के लिए पति सर्वस्व, ८ अनेक-पति-प्रथा, ९ सती-प्रथा, १० कुभार्या, ११ कुलटा स्त्री, १२ स्त्री-स्वभाव, १३ स्त्री के दोष, १४ स्त्री के लिए निकृष्ट उपमाएँ, १५ स्त्री की निरंकुशता, १६ स्त्रियों की सबलता, १७ सुस्त्री प्रशंसा, १८ स्त्री-सम्मान, १९ स्त्री-नाश के कारण, २० स्त्रीधन, २१ स्त्री के विषय में कहावतें, २२ वेश्या निन्दा, २३ लन्दन में सवा लाख वेश्याएं, २४ अपरिग्रह, २५ आवश्यकता, २६ परिग्रह, २७ परिग्रह के प्रकार, २८ आशा, २९ आशा की प्रशंसा, ३० इच्छा, ३१ विविध इच्छाएं, ३२ निःस्पृहता, ३३ तृष्णा, तृष्णा विजय, ३४ आसक्ति, ३५ ममता, ३६ ममता और समता, ३७ ममता के विषय में कहावतें।

तीसरा कोष्ठक पृष्ठ १६८ से २४१

१ संतोष, २ संतोष से लाभ, ३ संतोष का उपदेश, ४ संतोषी, ५ असंतोष, ६ लोभ त्याग, ८ लोभी, ९ क्षमा, १० क्षमा का उपदेश, ११ क्षमावान्, १२ असह्य बातें, १३ क्षमा के उदाहरण, १४ क्षमापना, १५ शम-शान्ति, १६ शान्ति की महिमा, १७ शान्त, १८ समता, १९ क्रोध, २० क्रोध के दुर्गुण, २१ क्रोध की उत्पत्ति-आदि, २२ क्रोध की स्थिति, २३ क्रोधत्याग, २४ क्रोधी, २५ क्रोध पर काबू पानेवाले महापुरुष, २६ वैर, २७ वैर त्याग, २८ वैरी, २९ वैरी के साथ व्यवहार, ३० वैर के बदले।

चौथा कोष्ठक पृष्ठ २४२ से ३२८

१ ईर्ष्या, २ ईर्ष्यालु, ३ ईर्ष्या सम्बन्धी दृष्टान्त और कहावतें, ४ कलह, ५ कलह से हानि, ६ कलहकर्त्ता ७ पैशुन्य (चुगली), ८ पिशुन

(चुगल), ९ निन्दा, १० निन्दा-निषेध, ११ निन्दा में समभाव, १२ आत्मनिन्दा, १३ निन्दक, १४ द्वेष, १५ राग, १६ अनुरागी, १७ रागद्वेष, १८ राग-द्वेष के क्षय से लाभ, १९ स्नेह, २० स्नेह-त्याग, २१ प्रेम, २२ सहज एवं सच्चा प्रेम, २३ प्रेम की महिमा, २४ प्रेम बन्धन, २५ प्रेम का निर्वाह, २६ प्रेम का नाश, २७ प्रेम के भेद, २८ प्रेम की प्रेरणा, २९ प्रेमी, ३० जाति प्रेम के उदाहरण, ३१ मोह, ३२ मोहक्षय, ३३ मित्र, ३४ मित्र के गुण दोष, ३५ सुमित्र एवं सच्चा मित्र, ३६ मित्र की आवश्यकता, ३७ कुमित्र, ३८ मित्र बनाने के विषय में, ३९ मित्रता, ४० शिष्टों और दुष्टों की मित्रता, ४१ मित्रता न करने योग्य व्यक्ति, ४२ मित्रता की प्रेरणा, ४३ संगठन, ४४ भिन्नता ।

चारों कोष्ठकों में कुल १४५ विषय तथा दस भागों में लगभग १५०० विषय हैं ।

दूसरा भाग

वक्तृत्वकला के बीज

पहला कोष्ठक

१ ब्रह्मचर्य

१. वस्तीन्द्रियमनसामुपशमो ब्रह्मचर्यम् । —मनोनुशासन ६।५

जननेन्द्रिय, इन्द्रियसमूह और मन की शांति को ब्रह्मचर्य कहा जाता है । —गाँधी

२. ब्रह्मचर्य का अर्थ है सभी इन्द्रियां और सम्पूर्ण विकारों पर अधिकार पा लेना ।

३. कायेन मनसा वाचा, सर्वावस्थासु सर्वदा ।
सर्वत्र मैथुनत्यागो, ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते ।।
—याज्ञवल्क्य स्मृति

शरीर, मन और वचन से सब अवस्थाओं में सर्वदा और सर्वत्र मैथुनत्याग को ब्रह्मचर्य कहते हैं ।

४. वीर्य आत्म - विद्या प्रवर, अर्थ ब्रह्म रा जोय ।
रक्षण-चिन्तन-अध्ययन, अर्थ चर्य रा होय ।।
प्रथम अर्थ ब्रह्मचर्य रो, वीर्य-सुरक्षा जाण ।
अपर आत्मचिन्तन तदनु; विद्याध्ययन पिछाण ।।
—सावधानी रो समुद्र तरंग ४

ब्रह्म शब्द के तीन अर्थ हैं—वीर्य, आत्मा और विद्या तथा चर्य के तीन अर्थ हैं—रक्षण, चिन्तन और अध्ययन । दोनों शब्दों को जोड़ने से ब्रह्मचर्य के ये तीन अर्थ होते हैं—वीर्य-रक्षण, आत्म-

चिन्तन और विद्याध्ययन। इन तीनों अर्थों में पहला अर्थ जगत्प्रसिद्ध एवं सर्वमान्य है।

५. प्रभूतकार्यकारिणि गुणे वीर्यम्। —सुश्रुत०

अधिक कार्य करनेवाले गुण के अर्थ में वीर्य शब्द प्रयुक्त होता है।

६. रसाद् रक्तं ततो मांसं, मांसाद् मेदः प्रजायते।
मेदसोऽस्थि ततो मज्जा, मज्जातः शुक्रसंभवः॥
—शार्ङ्गधर

रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से चर्बी, चर्बी से हड्डी, हड्डी से मज्जा (हड्डी का सार) एवं मज्जा से वीर्य की उत्पत्ति होती है।

७. जैसे-एक औंस इत्र तैयार करने में ८७५२ रत्तल गुलाब के फूल नष्ट होते हैं। उसी प्रकार वीर्य की एक बूंद बनने में काफी कुछ पदार्थों का विलय होता है।*

८. मरणं बिन्दुपातेन, जीवनं बिन्दुधारणात्।

वीर्यपात करने से मरण एवं वीर्यधारण करने से जीवन है।

९. ब्रह्मचर्य ही जीवन है। वीर्यहानि ही मृत्यु है।
—शिवसंहिता

१०. एकः शयीत सर्वत्र, नः रेतः स्कन्दयेत् क्वचित्।
कामाद्धि स्कन्दयन् रेतो, हिनस्ति व्रतमात्मनः॥
मनुस्मृति २।१८०

ब्रह्मचारी सदा अकेला सोवे। इच्छापूर्वक कहीं भी अपना वीर्य न गिरावे। क्योंकि इच्छापूर्वक वीर्यपात करनेवाला व्यक्ति अपने व्रत का नाश कर देता है।

---

* जीवन-लक्ष्य पृष्ठ १५० के आधार से

२ ब्रह्मचर्य की दुष्करता

१. उग्गं महव्वयं बंभं, धारेयव्वं सुदुक्करं ।

—उत्तराध्ययन १६/२६

जो उग्र महाव्रत है—ऐसे ब्रह्मचर्य को धारण करना अत्यन्त दुष्कर है ।

२. शक्यं ब्रह्मव्रतं घोरं, शूरैश्च न तु कातरैः ।
करिपर्याणमुद्वोढुं, करिभिर्न तु रासभैः ॥

जैसे हाथी का पलाण हाथी ही उठा सकते हैं, वैसे घोर ब्रह्मचर्य व्रत शूरपुरुष ही पाल सकते हैं । कायर नहीं पाल सकते ।

३. नाल्पसत्त्वैर्न निःशीलै - र्नदीनैर्नाक्षनिर्जितैः ।
स्वप्नेऽपि चरितुं शक्यं, ब्रह्मचर्यमिदं नरैः ॥

—ज्ञानार्णव पृष्ठ १३३

अल्पशक्तिवाले, शक्तिरहित, दीन और इन्द्रियों द्वारा जीते गये लोग इस ब्रह्मचर्य को स्वप्न में भी नहीं पाल सकते ।

३ ब्रह्मचर्य की महिमा

१. तवेसु वा उत्तमं बंभचेरं। —सूत्र० ६।२३

ब्रह्मचर्य सभी तपों में उत्तम है।

२. पंचमहव्वय-सुव्वयमूलं, समणमणाइलसाहुसुचिन्नं।
सव्वपवित्ति-सुनिम्मियसारं, सिद्धिविमाण-अवंगुयदारं।
देवणरिन्दणमंसियपूयं, सव्वजगुत्ताम-मंगलमग्गं।

—प्रश्नव्याकरण संवरद्वार ४

ब्रह्मचर्य महाव्रतों और अणुव्रतों का मूल है। शुद्ध हृदय-वाले साधु पुरुषों द्वारा सेवित है। जगत की सब पवित्र वस्तुयें इसके द्वारा पवित्र होती हैं। मुक्ति और स्वर्ग का यह खुला द्वार है। देवेन्द्रों-नरेन्द्रों द्वारा नमस्कृत और पूजनीय है तथा जगत में सर्वोत्कृष्ट मंगलमार्ग है।

३. तं बंभं भगवंतं गहगण-णक्खत्त-तारगाणं जहा उडुवइ, मणि-मुत्त-सिलप्पवाल-रत्तरयणागराणं य जहा समुद्दो, वेरुलिओ चेव जहा मणीणं, जहा मउडो चेव भूसणाणं, वत्थाणं चेव खोमजूयलं, अरविंदं चेव पुप्फजेट्ठं, गोसीसं चेव चंदणाणं, हिमवं चेव ओसहीणं, सीतोदा चेव निन्न-गाणं, उदहीसु जहा सयंभूरमणो, ...एरावण इव कुंज-राणं....कप्पाणं चेव बंभलोए....दाणाणं चेव अभयदाणं... ....तित्थयरे चेव जहामुणीणं....वणेसु जहा नन्दणवणं

पवरं.... —प्रश्नव्याकरण संवरद्वार ४

ब्रह्मचर्य भगवान है। वह ग्रह-गण-नक्षत्र-ताराओं में चन्द्रमा के तुल्य है। चन्द्रकान्तमणि, मोती, प्रवाल व पद्मराग आदि रत्नों के उत्पत्ति स्थानों में समुद्रवत् है अर्थात् जैसे समुद्र में रत्न उत्पन्न होते हैं वैसे ब्रह्मचर्य भी अन्यान्यव्रतों का उत्पत्ति स्थान है।

जैसे मणियों में वैडूर्यमणि श्रेष्ठ है, भूषणों में मुकुट प्रवर है, वस्त्रों में क्षौम-युगल (बहुमूल्य रेशमी वस्त्र) मुख्य हैं, पुष्पों में अरविन्द पुष्प उत्कृष्ट है, चन्दनों में गोशीर्ष चन्दन प्रकृष्ट है, **औषधियुक्त** पर्वतों में हिमवान श्रेष्ठ है, नदियों में सीतोदा बड़ी है, समुद्रों में स्वयम्भूरमण बृहत्तम है तथा हाथियों में ऐरावण, स्वर्गों में ब्रह्मस्वर्ग (पंचमस्वर्ग), दानों में अभयदान, मुनियों में तीर्थंकर और वनों में नन्दनवन जैसे उत्कृष्ट हैं, वैसे व्रतों में ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ है।

४. व्रतेषु वै ब्रह्मचर्यम्। —अथर्ववेद

व्रतों में ब्रह्मचर्य उत्कृष्ट है।

५. ब्रह्मचर्यमहिंसा च, शारीरं तप उच्यते। —गीता १७/१४

ब्रह्मचर्य और अहिंसा-ये दोनों शारीरिक तप कहे जाते हैं।

६. ब्रह्मचर्यं परं तीर्थम्। —दानचन्द्रिका

ब्रह्मचर्य सर्वोत्कृष्ट तीर्थ है।

७. ब्रह्मचर्यम् परं बलम्। —वैद्यशास्त्र

ब्रह्मचर्य उत्कृष्ट शक्ति है।

८. यद् यज्ञइत्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्....
यन्मौनमित्याचक्षते तद् ब्रह्मचर्यमेव।

—छान्दोग्य-उपनिषद् ८/५/१-२

जो यज्ञ कहा जाता है, वह वास्तव में ब्रह्मचर्य है तथा जो मौन कहा जाता है, वह भी ब्रह्मचर्य ही है।

९. तपो वै ब्रह्मचर्यम्। —वेद

ब्रह्मचर्य ही तप है।

१०. शीलं परं भूषणम्। —भर्तृहरि

ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ भूषण है।

११. शीलं दुर्गतिनाशनम्। —चाणक्यनीति ५/११

ब्रह्मचर्य दुर्गति को नाश करनेवाला है।

१२. शीलं भूषयते कुलम्। —चाणक्यनीति

शील कुल की शोभा बढ़ाता है।

१३. कुरूपता शीलतया विराजते। —चाणक्यनीति ८/१४

शील के प्रभाव से कुरूपता भी अच्छी लगने लगती है।

१४. तोयत्यग्निरपि स्रजत्यहिरपि व्याघ्रोऽपि सारङ्गति,
व्यालोप्यश्वति पर्वतोऽप्युपलति क्ष्वेडोऽपि पीयूषति।
विघ्नोप्युत्सवति प्रियत्यरिरपि क्रीड़ा तड़ागत्यापां—
नाथोऽपि स्वगृहत्यटव्यपि नृणां शीलप्रभावाद् ध्रुवम्।

—सिन्दूरप्रकरण-४०

शील के प्रभाव से अग्नि जलवत्, सांप पुष्पमाला वत्, बाघ हिरण-वत्, दुष्टहाथी साधारण-अश्ववत्, पर्वत पत्थर के खण्डवत्, जहर अमृतवत्, विघ्न महोत्सववत्, शत्रु मित्रवत्, समुद्र क्रीड़ा सरोवरवत् और अटवी स्वगृहवत्, बन जाती है अर्थात् अग्नि आदि अपने स्वभाव को छोड़कर आनन्ददायी हो जाते हैं।

४ ब्रह्मचर्यसम्बन्धी उपदेश

१. जंबू ! एत्तो य बंभचेरं तव-नियम-नाण-दंसण-चरित्त -सम्मत्त-विणयमूलं । —प्रश्नव्याकरण सं० ४

हे जम्बू ! यह ब्रह्मचर्य उत्तम तप, नियम, ज्ञान दर्शन, चारित्र, सम्यक्त्व और विनय का मूल है ।

२. एगंमि बंभचेरे, जंमिय आराहियंमि आराहियं वयमिणं सव्वं, सीलं तवो य विणओ य, संजमो य खंत्ती गुत्ती मुत्ती । तहेव य इहलोइय-पारलोइय-जसे य कित्ती य पच्चओ य तम्हा णिहुएण बंभचेरं चरियव्वं ।

—प्रश्नव्याकरण सं० ४

एक ब्रह्मचर्य की आराधना कर लेने पर शील, तप, विनय, संयम, क्षमा, निर्लोभता, गुप्ति आदि सभी व्रतों-गुणों की आराधना हो जाती है । इसीप्रकार इसलोक-परलोक में यश, कीर्ति, और विश्वास की प्राप्ति होती है अतः निश्चलभाव से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए ।

३. दुःख का मूल नाश करने के लिये ब्रह्मचर्यव्रत का पालन आवश्यक है । —बुद्ध

४. जेण सुद्धचरिएण भवइ सुबंभणो सुसमणो सुसाहु । स इसी, स मुणी, स संजए, स एव भिक्खू, जे सुद्धं चरइ-बंभचेरं । —प्रश्नव्याकरण सं० ४

ब्रह्मचर्य के शुद्ध आचरण से ही उत्तम ब्राह्मण, उत्तम श्रमण और उत्तम साधु होता है। वही ऋषि है, वही मुनि है, वही संयत है, और वही भिक्षुक है, जो शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करता है।

५. जंमि य भग्गंमि होइ सहसा सव्वं-संभग्ग-मथिय-चुन्निय-कुसल्लिय-पल्लट्टपडिय-खंडिय-परिसडिय विणासियं विणय-शील-तव-नियम-गुण समूहं....।

— प्रश्नव्याकरण सं० ४

एक ब्रह्मचर्य के भंग होने से सहसा विनय, शील, तप, नियम, आदि समस्त गुणों का समूह मर्दित, मथित, चूर्णित, कुसलित्त, (टुकड़ा-टुकड़ा) खण्डित, गलित और विनष्ट हो जाता है।

५ ब्रह्मचर्य के फल

१. ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभ :। —पातंजलयोगदर्शन २/३८

ब्रह्मचर्य की पूर्ण साधना हो जाने पर अपूर्व-मानसिक एवं शारीरिक शक्ति मिलती है।

२. ब्रह्मचर्येण वै विद्या। — अथर्ववेद

ब्रह्मचर्य से विद्या आती है।

३. ब्रह्मचर्येण तपसा, देवा मृत्युमुपाघ्नतः।

—अथर्ववेद ११/५/१९

ब्रह्मचर्य व तप से देवों ने मृत्यु का नाश किया है।

४. ब्रह्मलोकं ब्रह्मचर्येणानुविन्दति —छान्दोग्य उपनिषद् ८/४/३

ब्रह्मचर्य से ही ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है।

५. ब्रह्मचर्येण तपसा, राजा राष्ट्रं विरक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते।

—अथर्ववेद ११/५/१७

ब्रह्मचर्य के तप से ही राजा राष्ट्र की रक्षा करने में समर्थ होता है। आचार्य ब्रह्मचर्य के द्वारा ही ब्रह्मचारियों को अपने शिक्षण व निरीक्षण में लेने की योग्यता सम्पादन करता है।

६ ब्रह्मचारी

१. देव-दाणव-गंधव्वा, जक्ख-रक्खस-किन्नरा।
बंभयारीं नमंसंति, दुक्करं जे करंति ते।।

—उत्तराध्ययन १६/१६

ब्रह्मचारियों को देव-दानव-गन्धर्व यक्ष, राक्षस और किन्नर ये सभी नमस्कार करते हैं, क्योंकि वे दुष्कर ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं।

२. ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् बिभर्ति, तस्मिन् देवा अधिविश्वे समोताः।

—अथर्ववेद ११/५/२४

ब्रह्मचारी प्रकाशमान ब्रह्मज्ञान को धारण करता है और उसमें सब देवता ओतप्रोत हैं अर्थात् समस्त दैवी-शक्तियों से वह प्रकाश व प्रेरणा प्राप्त करता है।

३. ब्रह्मचारी....श्रमेण लोकास्तपसा बिभर्ति।

—अथर्व० ११/५/४

ब्रह्मचारी तप और श्रम का जीता हुआ जगत है।

४. इत्थियो जे न सेवंति, आइमोक्खा हु ते जणा।

—सूत्रकृतांग १५/६

जो पुरुष स्त्रियों का सेवन नहीं करते (पूर्णब्रह्मचारी हैं,) वे पुरुष आदि-मोक्ष हैं अर्थात् उनका मोक्ष सर्वप्रथम होता है।

५. जे विन्नवणाहिऽजोसिया, संतिन्नेहिं समं वियाहिया।

—सूत्रकृतांग २/३/२

जो स्त्रियों द्वारा सेवित नहीं हैं, वे पुरुष संतीर्ण अर्थात् सिद्धपुरुषों के समान कहे गये हैं।

६. स नैष्ठिको ब्रह्मचारी, यस्य प्राणान्तिकमदारकर्म।

—नीतिवाक्यामृत ५/१०

जो जीवनपर्यन्त विवाह न करके कामवासना से विरक्त रहता है, उसे नैष्ठिकब्रह्मचारी कहते हैं।

७. से हु चक्खू मणुस्साणं, जे कंखाए य अंतए।
अंतेण खुरो वहई, चक्कं अंतेण गच्छइ।
अंताणि धीरा सेवंति, तेण अंतकरा इह।

—सूत्रकृतांग १५/१४-१५

जो मनुष्य (भावना बल से) भोगेच्छा-वासना का अंत करता है, वह अन्य मनुष्यों के चक्षुरूप होता है—मार्गदर्शक बनता है। जैसे उस्तरा एवं गाड़ी का पहिया अपने अन्तभाग-धारा पर चलता हैं, वैसे ही महापुरुषों का जीवन अन्तिम-सत्यों पर चलता है एवं संसार का अन्त करनेवाला होता है।

७ ब्रह्मचारी को शिक्षा

१. अवि धूयराहिं सुसहाहिं, धाईहिं अदुव दासीहिं ।
महईहिं कुमारीहिं, संथवं से न कुज्जा अणगारे ॥
—सूत्रकृतांग ४/१/१३

चाहे पुत्री हो, पुत्रवधू हो, धाय हो या दासी हो, विवाहित हो या कुमारी हो—साधु को इन सब में से किसी भी स्त्री का सहवास नहीं करना चाहिये ।

२. इत्थी-निलयस्स मज्झे, न बंभयारिस्स खमो निवासो ।
—उत्तराध्ययन ३२/१३

जिस घर में स्त्री रहती हो, उसमें ब्रह्मचारी को रहना ठीक नहीं है ।

३. कुसीलवड्ढणं ठाणं, दूरओ परिवज्जए ।
—दशवैकालिक ६/५९

ब्रह्मचारी को वह स्थान दूर से ही त्याग देना चाहिये, जहां रहने से कुशील की वृद्धि होती हो ।

४. अदंसणं चेव अपत्थणं च, अचिंतणं चेव अकित्तणं च ।
इत्थीजणस्सारिय झाणजुग्गं, हियं सया बंभवएरयाणं ॥
—उत्तरा० ३२/१५

स्त्रियों को रागपूर्वक न देखना, उनकी अभिलाषा न करना तथा उनका चिन्तन एवं कीर्तन न करना-उपर्युक्त नियम उत्तमध्यान में सहायक हैं और ब्रह्मचारियों के लिए सदा हितकारी हैं ।

५. मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा, न विविक्तासनो भवेत् ।
बलवानिन्द्रियग्रामो, विद्वांसमपि कर्षति ।

—मनु० २/२१५

ब्रह्मचारी को मां, बहिन और पुत्री के साथ भी एकान्तस्थान में नहीं बैठना चाहिए, क्योंकि इन्द्रियों का समूह बलवान है, वह विद्वानों को भी खींच लेता है।

६. नय रूवेसु मणं करे। —दशवै० ८/१६

ब्रह्मचारी स्त्रियादिक के रूपों में मन को संलग्न न करे!

७. चित्तभित्तिं न निज्झाए, नारिं वा सुअलंकियं।
भक्खरं पिव दट्ठूणं, दिट्ठिं पडिसमाहरे॥

—दसवै० ८/५४

स्त्रियों के चित्रों से चित्रित भींत या आभूषणों से सुसज्जित स्त्री को टकटकी लगाकर न देखें! उन पर दृष्टि पड़ जाए तो उसे वैसे ही खींच ले, जैसे मध्याह्न के सूर्य पर पड़ी हुई दृष्टि स्वयं खिच जाती है।

८. निगाहें नीचीं रखो! —कुरान० २४/३०

९. रसा पगामा न निसेवियव्वा। —उत्तरा० ३२/१०

ब्रह्मचारी को अधिक मात्रा में रस का सेवन नहीं करना चाहिए।

१०. नाइमत्तं तु भुंजिज्जा, बंभचेररओ सदा।

—उत्तरा० १६/८

ब्रह्मचर्य में अनुरक्त साधक को मात्रा से अधिक भोजन नहीं करना चाहिए।

११. हत्थपायपडिछिन्नं, कन्ननासविगप्पियं।
अवि वाससयं नारीं, बंभयारी विवज्जए ॥
—दसवैकालिक ८/५६

जिसके हाथ, पैर, कान एवं नाक कटे हुए हैं और वह भी सौ वर्ष की वृद्धा है—ऐसी विकृतांग स्त्री का भी ब्रह्मचारी को त्याग करना चाहिए।

१२. जहा कुक्कुडपोयस्स, निच्चं कुललओ भयं।
एवं खु बंभयारिस्स, इत्थीविग्गहओ भयं ॥
—दशवैकालिक ८/५४

जैसे मुर्गी के बच्चे को बिलाव का सदा भय रहता है, वैसे ही ब्रह्मचारी को स्त्री के शरीर से भय रहता है।

१३. अदु साविया पवाएणं, अहमंसि साहम्मिणी य समणाणं।
जतुकुंभे जहा उवजोइ, संवासे विऊ विसीएज्जा ॥
—सूत्रकृतांग ४/१/२६

अथवा श्राविका होने से मैं श्रमणों की सहधर्मिणी हूं- यह कहकर स्त्रियां साधु के पास आवे, पर जिस प्रकार अग्नि के निकट रहने से लाख का घड़ा पिघलने लगता है, उसी प्रकार विद्वान पुरुष भी स्त्री के संवास से द्रवित हो जाता है।

१४. प्रमायन्तु ब्रह्मचारिणः, दमायन्तु ब्रह्मचारिणः,
शमायन्तु ब्रह्मचारिणः। —तैत्तिरीय उपनिषद् १/४/३

ब्रह्मचारियों को चाहिये कि वे प्रमा-यथार्थज्ञान को धारण करें इन्द्रियों का दमन करें और मन को वश में करें!

८ ब्रह्मचर्य की नव गुप्तियाँ (बाड़ें)

१. नव बंभचेर गुत्तीओ पन्नत्ताओ तं जहा—

१ नो इत्थी-पसु-पंडग संसत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ,

२ नो इत्थीणं कहं कहित्ता भवइ,

३ नो इत्थीणं ठाणाणि सेवित्ता भवइ,

४ नो इत्थीणं इंदियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ,

५ नो पणीयस्स भोइ भवइ,

६ नो पाण-भोयणस्स अइमायाए आहारइत्ता भवइ,

७ नो इत्थीणं पुव्वरयाइं पुव्वकीलियाइं समरइत्ता भवइ,

८ नो सद्दाणुवाई, नो रूवाणुवाई, नो गंधाणुवाइ, नो रसाणुवाई, नोफासाणुवाई, नोसिलोगाणुवाई भवइ ॥

९ नो साया-सुक्खपडिबद्धे आवि भवइ, —उत्तराध्ययन १६

ब्रह्मचर्य की नवगुप्तियाँ (रक्षा के उपाय) बताई गयी हैं यथाः—

१ ब्रह्मचारी पुरुष स्त्री-पशु-नपुंसकयुक्त शयनासन का सेवन न करे !

२ कामराग बढ़ानेवाली स्त्रियों की कथा न कहे !

३ स्त्रियोंवाले स्थानों का सेवन न करे !

४ स्त्रियों की मनोहर एवं मनोरम इन्द्रियों का अवलोकन व ध्यान न करे !

५ प्रणीत—अतिस्निग्ध आहार न करे !

६ मात्रा से अधिक आहार-पानी न ले !

७ स्त्रियों के साथ पूर्वकाल में की हुई रति और क्रीड़ाओं का स्मरण न करे !

८ विकार उत्पन्न करनेवाले शब्द-रूप-गन्ध-रस स्पर्श में तथा अपनी श्लाघा-प्रशंसा में आसक्त न बनें !

९ भौतिक सुख-सुविधा में आसक्त न बने !

२. सेवो थानक शुद्ध, कथा न करो रस कामण।
त्रिय-संग आसन तजो, भरी दृग निरख म भामण।
बस मत अन्तर वास, जिहाँ त्रियशब्द सुणीजै,
कृतक्रीड़ा न संभार- सरस-आहार चित्त न दीजै ।।
परिमाण लोप अधिको उदन, उद्भटवेष म आदरो,
तज शब्द रूप रस गन्ध फरस, धीरज सूं ए व्रत धरो ।।

—जयाचार्य

३. सुखशय्या नवं वस्त्रं, ताम्बूलं स्नान-मज्जने।
दन्तकाष्ठं सुगन्धं च, ब्रह्मचर्यस्य दूषणम् ।।

—महाभारत शान्तिपर्व

सुखकारी शय्या, नया भड़कीला वस्त्र, ताम्बूल, स्नान, मंजन-दातन और सुगन्धित द्रव्य—ये ब्रम्हचर्य के दूषण हैं।

४. मलस्नानं सुगन्धाद्यैः, स्नानं दन्तविशोधनम्।
न कुर्यात् ब्रह्मचारी च, तपस्वी विधवा तथा ॥

—शिवपुराण-विद्यासंहिता

मलस्नान-मैल उतारना, सुगन्धित द्रव्यों से नहाना, दांतन-मंजन आदि से दांतों को साफ करना--ब्रह्मचारी को, तपस्वी को और विधवा स्त्री को ये काम नहीं करने चाहिए।

५. वर्जयेद् मधु-मांस-गन्ध- माल्यादि- वासरस्वप्नाञ्जना-भ्यञ्जन-यानोपानच्छत्र-काम -क्रोध-लोभ-मोह - वाद्यवादन-स्नान-दन्तधावन-हर्ष-नृत्य-गीत-परिवाद-भयानि ।

—गौतमस्मृति

मधु, माँस, सुगन्धितद्रव्य, फूलमाला, दिन में शयन, अञ्जन, उबटन, सवारी, जूता, छत्र, काम, क्रोध, लोभ, मोह, बाजा बजाना, स्नान दन्तधावन, उत्सुकता, नृत्य गीत, निन्दा और भय-ये बातें ब्रह्मचारी को त्याग देनी चाहिए।

९ ब्रह्मचर्य-सम्बन्धी उदाहरण

१ अर्जुन से मोहित अप्सरा ने कहा—मैं आप जैसा पुत्र चाहती हूं। उत्तर मिला—माताजी! आप मुझे अपना ही पुत्र समझ लें।

२ शिवाजी ने "कल्याण" को लूटा। सैनिकों ने एक सुन्दर स्त्री हाजिर की। उसे देखकर शिवाजी ने कहा—मेरी माता यदि ऐसी सुन्दर होती तो मैं भी सुन्दर होता। यह कहकर शिवाजी ने उस स्त्री को अपने पति के पास भेज दिया।

३ सुन्दर स्त्री और शिवाजी का संवादः—

सारे झगड़े छोड़ के, मेरी निगाहवाँ बनजा।
मैं तेरा पुत्र बनं, तू मेरी माँ बनजा॥

४ बर्नाडशा से एक रूपवती महिला ने कहा—अपन विवाह करके ऐसा पुत्र उत्पन्न करें, जो मेरे तुल्य सुन्दर हो एवं आप जैसा बुद्धिमान हो। बर्नाडशा ने कहा—इससे ठीक उल्टा अर्थात् तेरे जैसा अक्लदार और मेरे जैसा रूपवान् हो जाय तो? (बर्नाडसा बदसूरत थे)

५ याकूब का बेटा यूसुफ सदाचारी था। भाइयों ने ईर्ष्यावश उसे कूप में डाल दिया। किसी ने निकाला। भाइयों ने

उसे १७ दिरहमों में बेचा। एक व्यापारी **'अजीज'** ने खरीदा। मिश्र जाकर गोद लेने की नीयत से अपनी बीबी **'जुलेखा'** को सौंपा। वह मोहित हुई। डिगाने की चेष्टा की। कमीज़ खींची, फट गई, वह भाग निकला। जुलेखां ने शोर किया। उसे कैद करवाया, कुछ समय के बाद रहस्य प्रकट हुआ, राजा ने उसे छोड़ा और अपना मन्त्री बनाया। —कुरान १२,

६ **पैर कटा हुआ साधु**—जु-उल-नून के पूछने पर साधु ने कहा—एक सुन्दरी को जाते देख कर मेरा मन डोल गया। मैंने उसके पीछे दौड़ने हेतु ज्यों ही एक पैर उठाया, मेरे अन्दर से आवाज आई। विवेक का उदय हुआ। मैं समझ गया और स्त्री के पीछे उठने वाले पैर को काट गिराया।

—इस्लाम धर्म से

१० अब्रह्मचर्य

१ मैथुनमब्रह्म । —जैनसिद्धांतदीपिका ७/६

स्त्री-पुरूष के जोड़े की कामराग-जनित सभी प्रकार की चेष्टायें मैथुन—अब्रह्मचर्य है ।

२ अठारसविहे अबंभे पण्णत्ते । —समवायाङ्ग १८

अब्रम्हचर्य अठारह प्रकार का है—
नौ प्रकार का औदारिकशरीर-सम्बन्धी और नौ प्रकार का वैक्रियशरीर-सम्बन्धी ।

३ तिविहे मेहुणे पण्णत्ते तं जहा ।
दिव्वे-माणुस्से,तिरिक्खजोणिए ।

तओ मेहुणं गच्छंति-तंजहा—देवा, मणुस्सा, तिरिक्ख-जोणिया ।

तओ मेहुणं सेवंतितंजहा—इत्थी, पुरिसा नपुंसगा ।
—स्थानांगसूत्र ३/१/१२३

तीन प्रकार का मैथुन कहा है—देवसम्बन्धी, मनुष्य-सम्बन्धी और तिर्यञ्च-सम्बन्धी । तीन मैथुन सेवन करते हैं-देवता, मनुष्य और तिर्यञ्च तथा स्त्री, पुरुष और नपुसंक ।

४ स्मरणं, कीर्तनं केलिः, प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् ।
संकल्पोऽध्यवसायश्च, क्रियानिष्पत्तिरेव च ।

एतन्मैथुनमष्टाङ्गं, प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ —दक्षसंहिता

ब्रह्मचर्य के आठ अङ्ग हैं। जैसे:—

१ स्त्री आदि का स्मरण करना

२ उनके रूप आदि का वर्णन करना अथवा शृंगार के ग्रन्थ पढ़ना गीत गाना आदि।

३ स्त्री आदि के साथ चोपड़-तास-होली आदि खेलना।

४ उन्हें रागदृष्टि से देखना।

५ उनके साथ एकान्त में बात करना।

६ उन्हें प्राप्त करने के लिए संकल्प—निश्चय करना।

७ उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना।

८ प्रत्यक्ष सहवास करना।

५ से जहाणामए केई पुरिसे रूयनालियं वा बूरनालियं वा तत्तेणं कणएणं समभिधंसेज्जा। एरिसएणं गोयमा! मेहुणं सेवमाणस्स असंजमे कज्जई। —भगवतीसूत्र २/५

जिस प्रकार कोई पुरुष रुई से या बूर से भरी हुई नली में तप्त स्वर्णशलाका डालकर उसे जला देता है, हे गौतम! उसी प्रकार मैथुन-सेवन करता हुआ पुरुष स्त्रीयोनिगत जीवों का नाश करता है।

६ योनियन्त्र - समुत्पन्नाः सुसूक्ष्मा जन्तुराशयः।
पीड्यमाना विपद्यन्ते, यत्र तन्मैथुनं त्यजेत् ॥

—योगशास्त्र २/७९

मैथुन का सेवन करने से योनिरूपी यन्त्र में उत्पन्न होनेवाले अत्यन्त सूक्ष्म जीवों के समूह पीड़ित होकर विनाश को प्राप्त होते हैं, इसलिये मैथुन का त्याग करना ही उचित है।

७ अबंभचरियं घोरं, पमायं दुरहिट्ठियं। —दशवै० ६/१७

अब्रह्मचर्य घोर प्रमाद-पाप है।

८ मूलमेय-महम्मस्स, महादोससमुस्सयं। —दशवैकालिक ६/१७

अब्रह्मचर्य सब अधर्मों का मूल है और महादोषों का समूहरूप है।

९ कम्पः स्वेदः श्रमो मूर्च्छा, भ्रमिर्ग्लानिर्बलक्षय :।
राजयक्ष्मादिरोगाश्च, भवेयुर्मैथुनोत्थिता :॥
—योगशास्त्र २/७८

मैथुन से कम्प—कँप-कँपी, स्वेद-पसीना, श्रम-थकावट, मूर्छा-मोह भ्रमि-चक्कर आना, ग्लानि—अंगों का टूटना, शक्ति का विनाश, राजयक्ष्मा—क्षयरोग तथा अन्य खाँसी, श्वास आदि रोगों की उत्पत्ति होती है।

१० व्यभिचार के पास मत फटको! निश्चय ही वह गलत और गन्दा रास्ता है। —कुरान० १७/३२

११ Thou Shalt not Commit adultry.
दाउ शैल्ट नॉट कमीट एडलटरी। —बाइबिल

व्यभिचार मत करो!

१२ मेहुणसुमिणे अट्ठसयं। —जीतकल्प

साधु को यदि मैथुन का स्वप्न आ जाय तो १०८ श्वासप्रमाण कायोत्सर्ग करना चाहिये।

११ विषय-वासना

१ विषीदन्ति—धर्मं प्रति नोत्सहन्ते एतेष्विति विषयाः ।

—उत्तरा० अ०४ टीका

जिनमें पड़ने से प्राणी धर्म के उत्साह से हीन हो जाए, वे विषय हैं ।

२ विषीयन्ते निबध्यन्ते विषयिणोऽस्मिन्निति विषयः ।

—भगवती ८/२ टीका

जिसमें विषयी प्राणी बंध जायें, उसका नाम विषय है ।

३ दृढ़भावनयात्यक्त-पूर्वापरविचारणम् ।
यदादानं पदार्थस्य, वासना सा निगद्यते । —योगवासिष्ठ

आगे-पीछे का विचार छूटकर भावना के तीव्र आवेग से जो पदार्थों का ग्रहण होता है, उसे वासना कहा जाता है ।

४ जे गुणे से आवट्टे, जे आवट्टे से गुणे । —आचारांग १/५

जो गुण—विषयवासना है, वही आवर्त-संसार है और जो आवर्त है, वही गुण—विषयवासना है ।

५ जे गुणे से मूलट्ठाणे, जे मूलट्ठाणे से गुणे ।

—आचारांग २/१

जो गुण है, वही मूलस्थान अर्थात् कषाय है और जो कषाय है वही गुण अर्थात् विषयवासना है ।

६ वासनाओं के रहते सपने में भी सुख नहीं मिलता।

—रामायण

७ उस आदमी से बढ़कर रास्ते से भटका हुआ और कौन है, जो अपनी ख्वाहिश (वासना) के पीछे चलता है।

—कुरान

८ निःसन्देह मुझे अपने लोगों के लिये जिस बात का सबसे अधिक डर है, वह है विषयवासना और महत्वाकांक्षा। विषयवासना मनुष्य को सत्य से हटा देती है और महत्वाकांक्षा में पड़कर मनुष्य परलोक को भूल जाता है।

—हजरतमुहम्मद

९ इन्द्रियों के विषयों की लालसा छोड़ दे तो मन शान्त रहेगा। —ताओ उप० ३

१० आपातरम्या विषयाः, पर्यन्तपरितापिनः।

—किरातार्जुनीय ११/१२

इन्द्रियों के विषय केवल प्रारम्भ में रमणीय लगते हैं किन्तु अन्त में दुःख देनेवाले हैं।

११ बद्धो हि को ? यो विषयानुरागी। —शंकरप्रश्नोत्तरी २

बँधा हुआ कौन ? विषयों का अनुरागी व्यक्ति।

१२ विषया विश्ववञ्चकाः। —त्रिषष्ठि०

ये विषय जगत को ठगनेवाले हैं।

१३ विषस्य विषयाणां च, दूरमत्यन्तमन्तरम्।
उपभुक्तं विषं हन्ति, विषयाः स्मरणादपि ॥

—उपदेशप्रासाद

विष और विषयों में बहुत बड़ा अन्तर, है विष तो खाने से मारता है किन्तु विषय तो स्मरण-मात्र से नष्ट कर देता है।

१४ जे इंदियाणं विषया मणुन्ना, न तेसु भावं निसिरे कयाइ।

—उत्तराध्ययन ३२/२१

इन्द्रियों के मनोज्ञ-विषयों में चित्त को कभी संलग्न मत करो !

१५ विसएसु मणुन्नेसु, पेमं नाभिनिवेसए।

—दशवैकालिक ८/५६

मनोज्ञ-शब्दादि विषयों में प्रेम मत करो !

१६ भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं,
शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रम्।
वस्त्रं च जीर्णशतखण्डमलीनकन्था,
हा ! हा ! तथाऽपि विषया न परित्यजन्ति॥

—भर्तृहरि वैराग्यशतक १९

वह मनुष्य जो भीख माँगकर दिन में एक समय ही नीरस अलोना अन्न खाता है, धरती पर सो रहता है, जिसका शरीर ही उसका कुटुम्बी है, जो थेगलियों की गुदड़ी ओढ़ता है--आश्चर्य है कि ऐसे मनुष्य को भी विषय नहीं छोड़ते।

१७ न य विसयेसु विरज्जति गोयम !
दुग्गइगमणपत्थिए जीवे। —महानिशीथ ६

हे गौतम ! दुर्गति में जाने योग्य जीव विषयों से विरक्त नहीं होता।

१८ जे दूमण तेहि णो णया, ते जाणंति समाहिमाहियं।

—सूत्रकृतांग २/२/२७

जो शब्दादि इन्द्रियों के विषय में प्रविष्ट नहीं हुए हैं, वे ही आत्म-

स्थित समाधि को जानते हैं ।

१६ ध्यायतो विषयान्पुंसः, संगस्तेषूपजायते ।
संगात्संजायते कामः, कामात्क्रोधोऽभिजायते ।।
क्रोधाद्भवति संमोहः, संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।

—गीता २/६२-६३

विषयों का चिन्तन करने से उनमें पुरुष की आसक्ति होती है । आसक्ति होने से उनमें कामवासना जागृत होती है । कामवासना में विघ्न होने से क्रोध उत्पन्न होता है । क्रोध से संमोह-अविवेक उत्पन्न होता है, अबिवेक से से स्मरणशक्ति भ्रमित हो जाती है, स्मरणशक्ति के भ्रमित हो जाने से बुद्धि (ज्ञान-शक्ति) का नाश होता है और ज्ञानशक्ति के नष्ट होने से मनुष्य अपने श्रेय-साधन से गिर जाता है ।

२० अन्धादयं महानन्धो, विषयान्धीकृतेक्षणः ।

—आत्मानुशासन ३५

विषयान्ध व्यक्ति अन्धों में सबसे बड़ा अन्धा है ।

२१ ददति तावदमी विषयाः सुखं,
स्फुरति यावदियं हृदिमूढता ।
मनसि तत्त्वविदां तु विवेचके,
क्व विषयाः क्व सुखं क्व परिग्रहः ?

जबतक हृदय में मूढ़ता-अज्ञान है, तभी तक ये विषय सुख देते हैं । किन्तु तत्त्ववेत्ताओं के विवेचक-हृदय में कहां विषय, कहां उनका सुख और कहां उनका परिग्रह ? अर्थात् ये कुछ भी नहीं रह पाते ।

१ उक्कामयंति जीवं, धम्माओ तेण ते कामा।

—दशवैकालिक नि० १६४

शब्द आदि विषय आत्मा को धर्म से उत्क्रमण करा देते हैं, दूर हटा देते हैं, अतः इन्हें 'काम' कहा है।

२ आभिमानिकरसानुविद्धा यतः सर्वेन्द्रियप्रीतिः स कामः

—नीतिवाक्यामृत ३/१

जिससे समस्त इन्द्रियों-(स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र और मन) में बाधारहित प्रीति उत्पन्न होती है, उसे काम कहते हैं।

३ सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा।

—उत्तराध्ययन ९/५३

ये काम-भोग शल्य के समान है, विष के समान हैं और आशीविष-सांप के समान है।

४ सत्ता कामेसु माणवा। —आचारांग ६/१

मानव-समाज काम-भोगों में आसक्त है।

५ कामे संसार बड्ढणे। —उत्तराध्ययन १४/४७

ये काम-भोग संसार को बढ़ानेवाले हैं।

६ नास्ति कामसमो व्याधिः। —चाणक्यनीति ५/१२

काम के समान कोई रोग नहीं है।

७ संकल्पाज्जायते कामः, सेव्यमानो विवर्धते।

. —महाभारत शान्तिपर्व १६३/८

काम-विकार संकल्प से उत्पन्न होता है और सेवन करने से बढ़ता है।

८ अद्दसं काम ! ते मूलं संकल्पा काम जायसि।
न तं संकप्पयिस्सामि, एवं काम न होहिसि॥

—महानिद्देस पालि १।१।१

हे काम ! मैंने तेरा मूल देख लिया है, तू संकल्प से पैदा होता है मैं तेरा संकल्प ही नहीं करूंगा फिर तू कैसे उत्पन्न होगा ?

९ शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी से राजा ययाति का विवाह हुआ। इधर कामान्ध होकर राजा ने वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा दासी से भी गुप्तविवाह कर लिया। देवयानी ने पिता से कहा। शुक्र ने श्राप दिया। राजा वृद्ध हो गया। क्षमा मांगी। फिर छोटे पुत्र पुरु ने अपनी जवानी दी। ययाति खूब भोग भोगने लगा। (वृद्ध पुरु राज्य-काज देखने लगा) फिर भी तृप्ति न हुई। नन्दन वन में अप्सरा से १००० वर्ष भोग भोगे, लेकिन शान्ति नहीं हुई। तब आकर पुरु से कहने लगा—

न जातु कामः कामाना-मुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूयएवाभिवर्धते॥

—मनुस्मृति २/९४

शब्दादि विषयों के उपभोग से काम विकार की शान्ति कभी नहीं होती, प्रत्युत घृत से अग्नि की तरह वह और ज्यादा बढ़ता है।

१० बूर का लाडू खाय सो पछताय, न खाय सो पछताय।

—राजस्थानी कहावत

११ जहां काम तहां राम नहीं, जहां राम नहिं काम ।
दोऊ कबहुं ना रहे, राम-काम एकधाम ॥
—कबीर

१२ यो कामे कामयति, दुक्खं सो कामयति ।
—थेरगाथा १/९३

जो काम भोगों की कामना करता है, वह दुःखों की कामना करता है ।

१३ काम के भेद

१ चउव्विहा कामा पण्णत्ता, तंजहा--सिंगारा, कलुणा, बीभच्छा, रोद्दा।
सिंगारा कामा देवाणं, कलुणा कामा मणुयाणं, बीभच्छा कामा तिरियाणं, रोद्दा कामा णेरइयाणं।

—स्थानांग ४/४/३५७

चार प्रकार के काम कहे हैं—श्रृंगार, करुण, बीभत्स और रौद्र। देवों के काम-शब्दादि अत्यन्त मनोज्ञ रति-रस के उत्पादक होने से श्रृंगार कहलाते हैं। मनुष्यों का शरीर शुक्र - शोणित से बना हुआ होने से उनके काम क्षणिक हैं, अतः करुण कहे गये हैं। तिर्यञ्चों के काम घृणोत्पादक हैं अतः वे बीभत्स माने गये हैं और नारकों के काम क्रोध के कारण होने से रौद्र गिने गये हैं।

२ मृगयाऽक्षा दिवास्वप्नः, परिवादः स्त्रियो मदः।
तौर्यत्रिकं वृथाट्या च, कामजो दशको गणः॥

—मनुस्मृति ७/४७

१- शिकार, २- जुआ, ३- दिन में शयन, ४- परनिन्दा- ५- स्त्रियों का सम्पर्क, ६- मदिरापान, ७- नाचना, ८- गाना, ९- बाजे-बजाना, १०- व्यर्थ भटकना—ये दस व्यसन काम से उत्पन्न हो जाते हैं।

३ खेत्तं वत्थुं हिरण्णं च, पसवो दासपोरुसं।

चत्तारि काम-खन्धाणि····। —उत्तराध्ययन ३/१७

१- क्षेत्र—खुली जमींन, वास्तु—मकान आदि,

२- हिरण्य—सोना, चाँदी आदि

३- पशु—गाय, भैंस आदि

४- दास—पुरुषों का समूह नोकर आदि

ये चार काम के स्कन्ध—अंग हैं ।

४ कामी कामे न कामए, लद्धे वावि अलद्धं कण्हुई ।
—सूत्रकृतांग १/२/३/६

साधक सुखाभिलाषी होकर काम-भोगों की कामना न करे, प्राप्त भोगों को भी अप्राप्त जैसा कर दे, अर्थात् उपलब्ध भोगों के प्रति भी निःस्पृह रहे ।

५ कामे कमाहि ! कमियं खु दुक्खं । —दसवै० २/५

काम की लालसा को दूर करो । ऐसा करने से निश्चय ही दुःख दूर होगा !

६ सव्वेसु कामजाएसु, पासमाणो न लिप्पइ ताई ।
—उत्तरा० ८/४

आत्मरक्षक सभी काम-विषयों को देखता हुआ भी उनमें लिप्त नहीं होता

७ कामाणुगिद्धिप्पभवं खु दुक्खं । —उत्तरा० ३२/१६

दुःख निश्चित रूप से काम में अनुगृद्ध होने से उत्पन्न होता है ।

८ तावन्महत्त्वं पाण्डित्यं, कुलीनत्वं विवेकिता ।
यावज्जलति नाङ्गेषु हन्त ! पञ्चेषुपावकः ।
—भर्तृहरि शृंगारशतक ५२

बड़प्पन, कुलीनता, पण्डिताई और विवेक–ये सब मनुष्य के हृदय

में तभी तक रह सकते हैं, जबतक शरीर में कामाग्नि प्रज्ज्वलित नहीं होती।

९ कृशः काणः खञ्जः श्रवणरहितः पुच्छविकलो,
व्रणी पूयक्लिन्नः कृमिकुलशतैरावृततनुः।
क्षुधा क्षामो जीर्णः पिठरककपालार्पितगलः,
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि निहन्त्येव मदनः॥
—भर्तृ० वैराग्य १८

दुबला, काना, लंगड़ा कनकटा एवं दुमकटा कुत्ता, जिसके शरीर में अनेक घाव हो रहे हैं, उनसे पीप-राध झर रही है और घावों में हजारों कीड़े पड़े हुये हैं, जो भूख से व्याकुल हैं और जिसके गले में हांडी का घेरा पड़ा हुआ है—ऐसा दयनीय कुत्ता भी कामान्ध होकर कुतिया के पीछे-पीछे दौड़ रहा है। हाय! यह कामदेव बड़ा ही निर्दय है जो मरे हुये को पुनः मार रहा है।

१० हृदय-तृणकुटीरे दीप्यमाने स्मराग्ना—
वुचितमनुचितं वा वेत्ति कः पण्डितोऽपि।
किमु कुवलयनेत्राः सन्ति नो नाकनार्य--
स्त्रिदशपतिरहल्यां तापसीं यत् सिषेवे॥

हृदयरूप तृणों की झोंपड़ी में कामाग्नि प्रज्ज्वलित होने पर पंडित पुरुष भी उचित-अनुचित नहीं सोचता। क्या कमलतुल्य, नेत्रवाली देवाङ्गनायें नहीं थीं, जो देवेन्द्र ने अहल्या तापसी का सेवन किया।

११ उपनिषदः परिपीता, गीतापि च हंत! मतिपथं नीता।
तदपि न हा! विधुवदना, मानससद्नाद् बहिर्याति॥
—भामिनीविलास

उपनिषदों का पान किया, गीता को भी अच्छी तरह समझ लिया

हा ! फिर भी चन्द्रमुखी स्त्री हृदय से नहीं निकलती।

१२ कामेन विजितो ब्रह्मा, कामेन विजितो हरि:।
कामेन विजितः शम्भुः, शक्रः कामेन निर्जितः॥

—आत्मपुराण

कामदेव ने ब्रह्मा, विष्णु, शिव और इन्द्र को जीत लिया।

१३ कामा दुरतिक्कमा। —आचारांग २/५

काम-भोग दुरतिक्रम हैं अर्थात् इन पर विजय पाना बहुत कठिन काम है।

१४ भोग

१ अच्चेइ कालो तूरन्ति राइओ,
न यावि भोगा पुरिसाण णिच्चा।
उविच्च भोगा पुरिसं चयन्ति।
दुमं जहा खीणफलं व पक्खी। —उत्तरा० १३/३१

काल बीता जा रहा है। रात्रियां दौड़ी जा रही हैं। मनुष्यों के भोग नित्य नहीं हैं। फलरहित वृक्षों को पक्षीवत् ये भाग भी अपनी इच्छानुसार पुरुषों को छोड़ जाते हैं।

२ भोगा, भुत्ता विसफलोवमा,
पच्छा कडुय विवागा, अणुबंधदुहावहा।
—उत्तरा० १९/१२

भोगे हुए भोग विषफल के समान हैं–कटुफल वाले हैं एवं दुःखों को लानेवाले हैं।

३ उवलेवो होइ भोगेसु, अभोगी नोवलिप्पई।
भोगी भमइ संसारे, अभोगी विप्पमुच्चई॥
—उत्तरा० २५/४१

भोगों से कर्मों का लेप होता है। अभोगी निर्लेप रहता है। भोगी संसार में भ्रमण करता है और अभोगी मुक्त हो जाता है।

४ जहा किंपागफलाणं, परिणामो न सुंदरो।
एवं भुत्ताणभोगाणं, परिणामो न सुंदरो॥
—उत्तरा० १९/१८

जैसे किम्पाकवृक्ष के फलों का परिणाम सुन्दर नहीं है, उसी प्रकार भोगे हुये भोगों का परिणाम भी सुन्दर नहीं है ।

५ भोगा भुजंगभोगाभाः, सद्यः प्राणापहारिणः ।

भोग सांप के फणवत् शीघ्र ही प्राणनाशक है ।

६ भोगा इमे संगकरा हवंति । —उत्तरा० १३/२७

ये भोग कर्मों का बन्ध करनेवाले हैं ।

७ मा वंतं पुणो वि आविए । —उत्तरा० १०/२६

त्यागी हुई भोग्य वस्तुओं को पुनः भोगने की इच्छा मत कर ।

८ त्यक्त भोगों की गवेषणा से हानि : एक क्षत्रिय की अंगुली को सांप ने काटा । क्षत्रिय ने तलवार से उसे काट कर फेंक दिया । फिर देखने गया, अंगुली जहर से नीली हो रही थी । उसे शूल से हिला-हिलाकर "यह मेरी अंगुली थी--यह मेरी अंगुली थी" ज्यों ही ऐसे कह रहा था, उससे खून की धारा निकलकर आँख में लगी और वह व्यक्ति मर गया । (त्यागे हुए भोगों पर पुनः ध्यान लगाने से व्यक्ति संयम जीवन को खो बैठता है ।)

९ पंडिया पवियक्खणा, विणियट्टंति भोगेसु
—उत्ताराध्ययन ९/६२

पण्डित और प्रवीण पुरुष भोगों से निवृत्त होते हैं ।

१० बुद्धो भोगे परिच्चयइ । —उत्तरा० ९/३

ज्ञानी पुरुष ही भोग को छोड़ता है ।

११ भोगी भोगे परिच्चयमाणे महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ । —भगवती १७/७

भोग-समर्थ होते हुए भी जो भोगों का परित्याग करता है, वह

कर्मों की महान् निर्जरा करता है, उसे मुक्तिरूप महाफल प्राप्त होता है।

१२ वंतं इच्छसि आवेउं, सेयं ते मरणं भवे !

—उत्तरा० २२/४३

हे साधक ! जीवित रहकर यदि तू त्यक्त भोगों की इच्छा करता है तो इसकी अपेक्षा तुझे मरना अच्छा है।

१३ ये हि संस्पर्शजा भोगा, दुःखयोनय एव ते ।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय ! न तेषु रमते बुधः ॥

—गीता ५/२२

संस्पर्श से उत्पन्न होनेवाले भोग के जो सुख हैं, वे सभी दुःख के कारण हैं एवं उत्पन्न होकर नष्ट होनेवाले हैं, अतः विद्वान इनमें रमण नहीं करता।

१४ प्रच्छन्न रोग है प्रकट भोग।
संयोग मात्र भावी वियोग।
हा ! लोभ मोह में लीन लोग।
भूले हैं अपना अपरिणाम,
ओ क्षणभगुंर भव ! राम-राम !

—मैथिलीशरण गुप्त

१५ काम–भोग

१ खाणी अणत्थाण उ काम-भोगा। –उत्तरा० १४/१३

काम-भोग निश्चय ही अनर्थों की खान है।

२ काम-भोगा विषं तालउडं जहा –उत्तरा० १६/१३

काम-भोग साक्षात् तालपुट जहर के समान है।

३ काम-भोगाणराएणं, केसं संपडिवज्जइ।

–उत्तरा० ५/७

काम-भोग में अनुराग रखनेवाले जीव क्लेश को प्राप्त होते हैं।

४ न काम - भोगा समयं उवेंति।

–उत्तरा० ३२/१०१

काम-भोग में आसक्त प्राणी शान्ति नहीं पा सकते।

५ काम-भोगरसगिद्धा, उववज्जन्ति आसुरे काए।

–उत्तरा० ८/१४

(तपोनुष्ठान करनेवाले साधु भी) जो काम-भोग के रस में गृद्ध हो जाते हैं, वे असुरजाति के नीच देवों में उत्पन्न होते हैं।

६ अदक्खु कामाइं रोगवं। –सूत्रकृतांग २/३/२

ज्ञानियों ने काम-भोगों को रोगयुक्त देखे हैं।

७ तणकट्ठेहिं व अग्गी, लवणजलो वा नईसहस्सेंहिं।
न इमो जीवो सक्को, तिप्पेउं काम-भोगेहिं ॥

—आतुरप्रत्याख्यान गाथा ५०

तृण-काष्टों से अग्नि तृप्त नहीं होती, हजारों नदियों से लवण-समुद्र सन्तुष्ट नहीं होता। इसी प्रकार काम-भोगों से भी इस जीव की तृप्ति नहीं होती।

१६ कामासक्त

१ कामकामी खलु अयं पुरिसे से सोयइ जूरइ तिप्पइ परितिप्पइ । —आचारांग २।५

जो पुरुष काम-भोगों का इच्छुक है, निश्चय ही वह पुरुष सोच करता है, झूरता है तथा ताप एवं परिताप को प्राप्त होता है ।

२ कामेसु गिद्धा णिचयं करेंति,
संसिच्चमाणा पुणरेंति गब्भं । —आचारांग ३/२

काम-भोगों में आसक्ति रखनेवाला प्राणी कर्मों का संचय करता है और कर्मों से पूर्ण होकर पुनः गर्भावास के दुःखों में आता है ।

३ कोऽवकाशो विवेकस्य, हृदि कामान्धचेतसः ?

कामान्धपुरुष के हृदय में विवेक को स्थान कहाँ से मिल सकता है ?

४ अपूर्वः कोऽपि कामान्धो, दिवानक्तं न पश्यति ।
—उपदेशमाला

कामान्ध-पुरुष कितना विचित्र है, वह न तो दिन में देखता है और न रात को ।

५ कामातुराणां न भयं न लज्जा ।

कामातुर पुरुषों को न तो किसी का भय होता है और न किसी की लज्जा ।

६　तुलसीदास जी की स्त्री पीहर में थी। मध्यरात्रि के समय काम जागृत हुआ एवं नदी को पार करके ससुराल पहुंचे। द्वार बन्द होने से लटकती हुई रस्सी को (जो सांप था) पकड़कर भींत पर चढ़े एवं स्त्री को जा जगाया। कामातुरता पर विस्मित स्त्री ने कहा—

जितना प्रेम हराम से, उतना हरि से होय।
चला जाय बैकुण्ठ को, पला न पकड़े कोय॥

७　को वा महान्धो ? मदनातुरो यः।

—शंकरप्रश्नोत्तरी ६

बड़ा अन्धा कौन ? जो कामातुर हो, वही।

८　कामासक्तस्य नास्ति चिकित्सितम्।

—नीतिवाक्यामृत ३।१२

कामासक्त व्यक्ति का कोई इलाज नहीं।

९　कोहं च माणं च तहेव मायं, लोहं दुगुंच्छं अरइं रइंच।
हासं भयं सोगपुमित्थिवेयं, नपुंसवेयं विविहे य भावे॥
आवज्जई एवमणेगरूवे, एवं विहे कामगुणेसु सत्तो।
अन्ने य एयप्पभवे विसेसे, कारुण्णदीणे हिरिमे वइस्से॥

—उत्तरा० ३२।१०२-१०३

कामगुणों में आसक्त जीव, क्रोध, मान, माया, लोभ, घृणा, राग, द्वेष, हास्य, भय, शोक, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, और नपुंसकवेद तथा अनेक प्रकार के भाव और अनेक प्रकार के रूपों को प्राप्त होता है और परिणामस्वरूप नरकादि दुःखों को भुगतता है तथा विषयासक्ति से अत्यन्त दीन, लज्जित, करुणाजनक स्थिति वाला होकर घृणा का पात्र बन जाता है।

१० कुतः सत्यं च कामिनाम् ?

—सुभाषितसंचय

कामी पुरुषों के पास सत्य कहाँ से हो सकता है ?

११ कामिनश्च कुतो विद्या ?

कामी व्यक्ति के पास विद्या कहाँ ?

१२ कामिनां कामिनीनां च, संगात् कामी भवेत् पुमान्।

कामी पुरुष और भोगवती स्त्री के साथ रहनेवाला कामी बन जाता है ।

१७ कामान्धों के उदाहरण

१ ब्रह्मा लूनशिरा हरिर्दृशि सरुक् व्यालुप्तशिश्नो हरः,
सूर्योप्युल्लिखितोऽनलोप्यखिलभुक् सोमः कलङ्काङ्कितः
स्वर्नाथोऽपि विसंस्थुलः खलु वपुः संस्थैरुपस्थैः कृतः ।
सन्मार्गस्खलनाद् भवन्ति विपदः प्रायः प्रभूणामपि ॥

अन्ययोगव्यवच्छेद द्वात्रिंशिका ३१

कामान्ध होकर ब्रह्मा ने अपना सिर कटवाया, विष्णु नेत्ररोगी बने, महादेव का शिश्नछेदन हुआ, सूर्य छीला गया, अग्नि सर्वभुक् हुआ, चन्द्रमा सकलङ्क बना तथा इन्द्र का शरीर सहस्रभगयुक्त हुआ । सन्मार्ग से गिरने पर चाहे कितने ही समर्थ व्यक्ति क्यों न हों, विपत्तिग्रस्त हो ही जाते हैं ।

२ सौतेले-पुत्र से माता ने शादी की वि.सं. २०१०देहरादून में ।

३ न्यूयार्क का २६ वर्षीय बढ़ई तीन वर्ष पूर्व डेन्मार्क जाकर डा० हम्बर्गर के निरीक्षण में दो हजार इजेक्शन और छः आपरेशन से पुरुष मिटकर स्त्री बन गया ।

हिन्दुस्तान १९५२ दिसम्बर ६

४ कामान्ध पटियालानरेश के लगभग ३५० रानियाँ थीं । उन्होंने एक साल तक प्रतिसप्ताह दो शादियां कीं । उन्होंने एकबार शिमला में वायसराय की लड़की को पकड़ लिया था अतः उनका शिमला जाना ही बन्द कर दिया

गया। फिर उन्होंने चिल्ला में कोठी बनवायी। एक कुम्हारिन ने एक बार उनसे शिकायत की कि मेरी बड़ी पुत्री से अमुक सिपाही छेड़छाड़ करता है। सुनकर छोटी को अपने पास बुलवा लिया और एक रात भोगकर छोड़ दिया। उनकी खुराक प्रतिदिन एक बकरा व १२ मुर्गों के रस का इंजेक्शन था। आखिर बीमार हुए। बन्दर के फेफड़े लगवायेबुरी तरह से मृत्यु हुई वि० सं० १९९४।

५ वि० सं० १९१० वैसाख सुदी-१ जालन्धर, पंजाब में लड़कियों ने छेड़छाड़ करनेवाले गुंडों की खूब मरम्मत की। नाकों से लकीर खिंचवाकर आखिर में माफी दी।

—हिन्द समाचार

६ एक लड़की कालिज जा रही थी, उसके झीनी साड़ी, मुंह पर पाउडर, होठों पर लिपस्टिक (लालरंग) एवं मस्तक पर बिजली के बल्व लगे थे, जो क्षण-क्षण में जलते बुझते थे।

विवाह

१. दाम्पत्यसूत्र में आबद्ध होने की प्रथा को विवाह कहते हैं।

२. ब्रह्मचर्य सबसे अच्छी चीज है, और व्यभिचार बुरी चीज है—इन दोनों के बीच का विवाह है। —गान्धी

३. व्यभिचार भी व्यभिचारित हो गया है, एक चीज से, वह है विवाह। —नीट्शे

४. विवाह एक जूए के समान है, जिसमें पुरुष को अपनी स्वतन्त्रता और स्त्री को अपनी प्रसन्नता दाँव पर लगानी पड़ती है। —मदम दः रियू

५. विवाह के तीन उद्देश्य हैं—
   १ धर्म-सम्पत्ति
   २ प्रजा-उत्पत्ति
   ३ रति

—धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग १।२-२७०

१९ विवाह का प्रभाव

१. प्रत्येक व्यक्ति विवाह के दूसरे ही दिन स्वयं को सात वर्ष अधिक बूढ़ा अनुभव करता है। —बेकन

२. जब तक विवाह नहीं होता, तब तक पुरुष अर्ध-देह रहता है और विवाह होने के बाद पूर्णदेह बन जाता है। —व्याससंहिता

३. नारी विवाह के पहले क्रन्दन करती है और पुरुष विवाह के पश्चात्। —ए० ड्यू पाई

४. मनुष्य प्रेम के स्वप्नों में खोया रहता है, पर विवाह होते ही उसकी आँखें खुल जाती हैं। —पोप

५. कुमारियाँ पति के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहतीं, जब उन्हें वे मिल जाते हैं, तब वे सब-कुछ चाहने लगती हैं। —शेक्सपियर

२० विवाह का समय

१. चतुर्थमायुषो भाग - मुषित्वाद्यं गुरौ द्विजः ।
द्वितीयमायुषो भागं, कृतदारो गृहे वसेत् ॥

—मनुस्मृति ४।१

ब्राह्मण आयु का चौथा भाग अर्थात् सौ वर्ष की अपेक्षा से २५ वर्ष तक अखण्ड-ब्रह्मचर्ययुक्त गुरुकुल में रहकर, आयु के दूसरे भाग में स्त्री से विवाह कर घर में निवास करे !

२. पञ्चविंशे ततो वर्षे, पुमान् नारी तु षोडशे ।
समन्वागतवीर्यौ तौ, जानीयात् कुशलो भिषक् ॥

—वैद्यकग्रन्थ

वीर्य और रज की अपेक्षा से २५ वर्ष का पुरुष और १६ वर्ष की स्त्री परस्पर समान है, इस बात को कुशल-वैद्य ही जानते हैं ।

३. तएणं से मेहे कुमारे बावत्तरिकलापंडिए नवंगसुत्तपडिबोहिए अट्ठारसविहिप्पगारदेसीभासाविसारए गीयरइयगंधव्वनट्टकुसले, हयजोही, गयजोही, रहजोही, बाहुजोही, बाहुप्पमद्दी अलंभोगसमत्थे साहसिए वियालचारी जाए यावि होत्था । —ज्ञाता सूत्र अ० १

उससमय वह मेघकुमार पुरुष की बहत्तरकलाओं में पंडित

हुआ। उसके नौ अंग (दो कान, दो आखें, दो नाक, जीभ, त्वचा और मन) काम-भोग के लिए जागृत हो गए। वह अठारह देशों की भाषाओं में विशारद हुआ। गीत, रति क्रीड़ा, गंधर्वकला एवं नृत्यकला में दक्ष हुआ। अश्वयुद्ध, गजयुद्ध, रथयुद्ध, बाहुयुद्ध करने लगा। भुजाओं का प्रमर्दन करने लगा। और भोग-भोगने में समर्थ हुआ, साहसी एवं विकालचारी हुआ। (इस वर्णन में विवाह के समय का दिग्दर्शन हैं।)

४. **बाल विवाह :**

क. बालकों का विवाह करना, बछड़ों पर गाड़ी का भार लादना है।

ख. विधवावृद्धि, कुलहानि, व्यभिचारवृद्धि, आत्महत्या, भ्रूणहत्या, अशक्त-संतान–ये सब असामयिक-विवाहों के फल हैं।

ग. कन्या छोटी-सी थी एवं विवाह का समय रात को तीन बजे था अतः वह सो गई। लग्न के समय उस की माता ने कहा—"बेटी, उठ, फेरा खा ले!" कन्या बोली–'मुझे तो नींद आ रही है, तू ही खाले।'

५. **वृद्धविवाह के प्रसंग पर :**

एक नार मर गई, फेर दूजी घर लायो,
दूजी पामी मींच, फेर तीजी कूं ध्यायो।
वरजै कुटुम्बी लोक, सगा - सम्बन्धी - भाई,
अस्सी वरस तन भयो, अब मत करो सगाई।

कामी बोल्यो एम, अवधि आयां हूं मर सूं,
रंडवा कर गई दोय, एक रांड हूं भी कर सूं।
बदलो साधी मर गयो, रही दीवड़ी लार,
"जगन्नाथ" गुरुज्ञान बिन, गयो जमारो हार।

२१ विवाह किसके साथ ?

१. विवाहः सदृशे कुले । —चाणक्य० १।१४

विवाह अपने सदृश कुल में करना चाहिए ।

२. ययोरेव समं वित्तं, ययोरेव समं कुलम् ।
तयोर्मैत्री विवाहश्च, न तु पुष्ट-विपुष्टयोः ।।

—पंचतन्त्र १।१२६

जिनकी आर्थिकस्थिति तुल्य हो और खानदान समान हो, उन्हीं का आपस में दोस्ताना एवं विवाह उचित माना गया है, असमानों का नहीं ।

३. तएणं तस्स मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो मेहं कुमारं........सरिसियाणं सरि (स) व्वयाणं सरि (स) त्तयाणं सरिसलावण्णरूवजोव्वणगुणोववेयाणं सरिसएहिंतो राय-कुलेहिंतो आणि (अ) ल्लियाणं..............अट्ठहिं रायवर कन्नाहिं सद्धि एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु ।

—ज्ञाता सूत्र अ. १

उस समय मेघकुमार के माता-पिता ने समान योग्यतावाली, समान आयुवाली, समान त्वचावाली, समान लावण्य-रूप-यौवन-गुणवाली, समान राजकुलों से प्राप्त की हुई आठ राजकन्याओं के साथ एक ही समय में मेघकुमार का विवाह किया ।

४. अपने से उच्चकुल में विवाह करना अपनी स्वतन्त्रता बेचना है ।
—मेसेंजर

५. अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं, हंस-वारण-गामिनीम् ।
तनुलोम - केस - दशनां, मृद्वङ्गीमुद्वहेत् स्त्रियम् ।
—मनुस्मृति ३।१०

जिसका कोई भी अंग विकृत न हो, सौम्य नामवाली हो, (नक्षत्र वृक्ष, नदी, म्लेच्छ, पर्वत, पक्षी, सर्प, दास या भयानक नामवाली न हो) हंस एवं हाथी के समान गतिवाली हो, सूक्ष्म-लोम—पतले केश एवं छोटे दाँतवाली हो तथा मृदु-अंग वाली हो, उस कन्या से विवाह करना चाहिए। (यह महर्षि मनु का मत है।)

६. कुलशीलसमैः सार्धं कृतोद्वाहोऽन्यगोत्रजैः ।
—योगशास्त्र १।४७

समानकुल और समानशील वाली अन्य गोत्र में उत्पन्न कन्या के साथ विवाह करनेवाला आदर्श गृहस्थ होता है।

१. कुलं च शीलं च सनाथता च,
विद्या च वित्तं च वपुर्वयश्च ।
एतान् गुणान् सप्त विचिन्त्य देया,
कन्या बुधैः शेषमचिन्तनीयम् ॥

—पंचतन्त्र ३।२०६

माता-पिता आदि को दामाद में ये—सात गुण देखकर कन्यादान करना चाहिए—१. कुल—माता-पिता का पक्ष, २. शील-स्वभाव, ३. सनाथता–ठकुराई, ४. विद्या, ५. धन, ६. शरीर की स्वस्थता, ७. आयु । शेष बातें इतनी विचारणीय नहीं है ।

२. न कन्याया पिता विद्वान्, गृह्णीयाच्छुल्कमण्वपि ।
गृह्णञ्छुल्कं हि लोभेन, स्यान्नरोऽपत्यविक्रयी ॥

—मनुस्मृति ३।१५

विद्वान् को कन्या का अणुमात्र भी धन नहीं लेना चाहिए । कन्या का पैसा लेनेवाला मनुष्य संतानबेचनेवाला कहलाता है ।

३. अल्पेनापि हि शुल्केन, पिता कन्यां ददाति यः ।
रौरवे बहुवर्षाणि, पुरीष- मूत्रमश्नुते ॥

—आपस्तम्बस्मृति

जो पिता थोड़ा भी शुल्क-धन लेकर कन्यादान करता है, वह बहुत वर्षों तक रौरव-नरक में मल-मूत्र का भोजन करता हैं।

४. कन्यां यच्छति वृद्धाय, नीचाय धनलिप्सया।
कुरूपाय कुशीलाय, स प्रेतो जायते नरः।

—स्कन्दपुराण

जो मनुष्य अपनी कन्या को धन के लोभ से वृद्ध को, नीच को, कुरूप को या कुशील-व्यक्ति को देता है, वह मर कर प्रेत बनता है।

५. **लड़के-लड़कियों का मोल**—भारत में लड़कों का एवं पाकिस्तान में लड़कियों का मोल धड़ाधड़ बढ़ता ही जा रहा है। आज भारत में सामान्य वर्ग के लड़के का मोल ८ हजार से १५ हजार रुपयों तक हैं। [जिसके घर का कच्चा-पक्का मकान हो, बाप किसी दूकान पर मुनीम हो या किसी कम्पनी में बाबू हो और स्वयं मैट्रिक पास हो, साथ ही क्लर्क या चपरासी बनने का उम्मीदवार हो—वह सामान्य वर्ग कहलाता है]

मध्यवर्ग के लड़के का मोल बीस से चालीस हजार है (मध्यम वर्ग वह माना जाता है, जो लड़का बी. ए. पास है एवं उसके मां-बाप उसके लिए कभी वकील व लैक्चरर बनने की और कभी व्यापार शुरू करने की घोषणा करते रहते हैं। इस वर्ग के लोग ऊपर साफ-सूफ रहते हैं, घर में मेहमानों के लिए सजाया हुआ एक कमरा रखते हैं और आगंतुकों के स्वागत का अच्छा प्रबंध करते हैं। इनका एक-आध सगपन रईसों के यहां अवश्य होता है, जिसे ये बात-बात पर आगे लाते हैं)

उच्च वर्ग का सौदा पचास हजार से पांच लाख तक पटता है। ये लोग कई इन्जिनियर, डाक्टर, प्रोफेसर होते हैं तो कई मकान-

मालिक, मिलमालिक एवं बड़े व्यापारी होते हैं।

भारत में लड़कों की तरह पाकिस्तान में लड़कियां बिक रही हैं। कोई पांच लाख में इंगलैंड जा रही है तो कोई दस लाख में अमेरिका। अभी-अभी एक ६५ वर्षीय अफगान ने १६ वर्षीय कन्या के (जो वजन में ५१ किलो थी) ५१ हजार रुपये दिये हैं।

—हिंदुस्तान २ जून १९६८ यत्र तत्र सर्वत्र, से

२३ विवाह के भेद

१. ब्राह्मो दैवस्तथैवार्यः, प्राजापत्यस्तथाऽसुरः ।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥

—मनुस्मृति ३।२१

विवाह आठ प्रकार का माना गया है—१ ब्राह्म, २ दैव ३ आर्ष ४ प्राजापत्य ५ आसुर ६ गान्धर्व ७ राक्षस, ८ पैशाच। इनमें ८ वाँ सबसे अधम है।

१. **ब्राह्मविवाह**—वर को सत्कारयुक्त कन्या देना।

२. **दैवविवाह**—यज्ञ में विद्वानों का वरण करके उसमें कर्म करनेवाले विद्वान को अलंकृत-कन्या देना।

३. **आर्षविवाह**—एक या दो गाय-बैल का जोड़ा लेकर धर्म-पूर्वक कन्या देना।

४. **प्राजापत्यविवाह**—यज्ञशाला में विधि करके "तुम दोनों विधिवत् गृहि-धर्म पालो" ऐसे कहकर वर को कन्या देना।

५. **आसुरविवाह**—कन्या अथवा वर के सम्बन्धियों को धन देकर विवाह करना।

६. **गान्धर्वविवाह**—वर-कन्या का अपनी इच्छा से मिलना।

७. **राक्षसविवाह**—कन्या के सम्बन्धियों को मार-पीटकर रोती हुई कन्या को बलात् ले जाना।

८. **पैशाचविवाह**—सोती हुई उन्मत्त या पागल कन्या को दूषित करना।

२. ब्राह्मण के लिए प्रथम छः, क्षत्रिय के लिए अन्तिम चार और वैश्य-शूद्र के लिए राक्षस को छोड़कर अन्तिम तीन प्रकार के विवाह धर्मानुकूल माने गये हैं।

—मनुस्मृति ३।२३

१. समञ्जन्तु विश्वेदेवाः, समापो हृदयानि नौ।
समातरिश्वा संधाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥
—ऋग्वेद १ ।८५।१७

वर-कन्या यज्ञशालास्थित विद्वानों से कहें कि—हमारे दोनों के हृदय पानी की तरह शान्त और मिले हुए रहेंगे। प्राणों के समान एक-दूसरे के प्रिय रहेंगे। जगत को परमात्मा की तरह एक-दूसरे को हम धारण करेंगे और वक्ता श्रोतओं से जैसे प्रेम करता है, वैसे ही हम आपस में प्रेम करते रहेंगे।

२. ओं गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथा सः।
भगो अर्यमा सविता पुरंध्रिर्मह्यं त्वाऽदुर्गार्हपत्याय देवाः॥१॥
—अर्थववेद १४।११।५०

ओं अमोऽहमस्मि सा त्वँ (घ्वं) सा त्वमस्यमोऽहम्।
सामाहमस्मि ऋक् त्वं, द्यौरहं पृथिवी त्वम्॥
ओं तावेहि विवहावहै, सह रेतो दधावहै।
प्रजां प्रजनयावहै, पुत्रान् विन्दावहै,
बहूंस्ते सन्तु जरदष्टयः, संप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ।
पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं,
शृणुयां शरदः शतम्॥
—पारस्कर ६।३

जीवन के इस पुण्यपर्व में, धरता हूँ मैं हाथ।
रहो सुहागभरी चिरदिन, तुम सुभगे मेरे साथ ॥१॥
सुन्दरि ! तुमसे मुझे मिलाया है, देवों ने आज।
तुमको देता हूं मैं, अपने गार्हपत्य का राज ॥२॥
तुम लक्ष्मी हो, मैं तो अब तक, था लक्ष्मी से हीन।
सचमुच तुम लक्ष्मी हो, मैं था विना तुम्हारे दीन ॥३॥
सुभगे ! तुम हो ऋचा साम की, मैं हूं स्वर का लास।
तुम हो सुजला सुफला धरणी, मैं निर्मल आकाश ॥४॥
आओ बांधें प्राण परस्पर, ले विवाह का सूत।
दें दुनिया को मिलितशक्ति से, रचकर कई सपूत ॥५॥
हम दोनों सुन्दर छवि लेकर, रहें प्रेम में मग्न।
दोनों के मानस हों, मङ्गलमय भावों में लग्न ॥६॥
देखें शत शरदों की शोभा, जिएँ सुखी सौ वर्ष।
सुनें कोकिलों के कलरव में, सौ बसन्त के हर्ष ॥७॥

२५ वैवाहिक रीति-रिवाजों का रहस्य

१. पोंखने का अर्थ पोषण करना है। कुंकुम के तिलक से आरोग्य की कामना की जाती है। ऊपर चावल लगाकर सदा चावलों के समान उज्ज्वल-शुद्ध रहना ऐसे कहा जाता है। नाक खींचकर नाक ऊँचा रखने की शिक्षा दी जाती है। झेरना, मुशल, दंताल, हल आदि फेरकर पशु-धन वगैरह मिल्कत की पृच्छा की जाती है। कन्या पान की पिचकारी थूक कर कहती है कि यह प्रेम का रंग कभी उतारना मत! कच्चे सूत की माला में पारस्परिक प्रेम-तार के संगठन की सूचना है। द्यूत में एकी-दोकी आती हैं, उनमें एकी का मतलब है पति-पत्नी को एक-दूसरे का चिन्तन करते रहना एवं एक पतिव्रत और एक पत्नीव्रत पालना तथा दोकी का अर्थ है कि आज से हम दोनों एक हो गए हैं और हमें एक-दूसरे के सहयोग से ही सुख की प्राप्ति होगी!

२६ विवाह के विचित्ररूप

१. **स्काटलेण्ड**—में सास वर के प्लेट मारती है।

आस्ट्रेलिया—के उत्तरी क्षेत्र में वर को विवाह से पहले पन्द्रह दिन तक बिना खाये-पीये धूप में खड़ा रहना होता है दक्षिण भारत के **टोड़ो** जाति में वर अपना शिर भावि-श्वसुर के पैरों में धरकर वधू की याचना करता है।

सिक्किम—के **लेपचाओं** में सगाई-विवाह के अन्तरकाल में वर को आधे समय तक ससुराल में रहकर नौकर की तरह रहना पड़ता है।

मकुआन—में वर-वधू का युद्ध होता है और वधू के हारते ही उसके माँ-बाप वर को गदा से पीटते हैं।

बाबरद्वीप-वासी—शादी के दिन लड़की को एक अन्धेरे में (जिसमें खड्डे होते हैं एवं कीलें बिछी हुई होती हैं) बन्द कर देते हैं, फिर वर-वधू को ढूंढता है।

कमचटका—के कई भागों में वधू कपड़ों से ढक दी जाती है और वर कपड़े फाड़-फाड़कर उसे निकालता है।

मेडागास्कर—की एक जाति वर को भाला मारती है।

न्यूगिनी—में उसे चाकू से घायल किया जाता है और एक

बोरे में बन्द किया जाता है, जिसमें भीषण चींटियाँ होती हैं।

बालोरिया—में वर-वधू के हाथ बांधे जाते हैं।

—नवभारत १ मई १९५५ ई०

२ (क) भारत की कुछ आदिमजातियों की हर एक बस्ती में एक मकान होता है जो घोटुल, एरपा, जोरा आदि नामोंसे पुकारा जाता है। घोटुल, नृत्यशाला, शयनगृह आदि सुन्दर ढंग से बने हुए होते हैं। उनके आरक्षक "कोटवार" एवं "आरसर" कहलाते हैं। दिन छिपते ही गांव के अविवाहित युवक-युवतियाँ सज-धज कर वहाँ पहुंच जाते हैं। युवक चेलिक एवं युवती मोहियारी कही जाती हैं। रात को वे मिल-जुलकर गीत-गान एवं नृत्य करते हैं तथा फिर सुख से सो जाते हैं। ऐसे करते करते जिस चेलिक-मोहियारी का मन मिल जाता है तब उनका परस्पर विवाह कर दिया जाता है।

(ख) कोरकजाति में लड़की किसी एक युवक के घर में घुस जाती है। लड़के को उससे विवाह करना ही पड़ता है अन्यथा घर छोड़कर भागना पड़ता है और उस घर की मालकिन वह लड़की बन जाती है।

इस जाति में कई जगह लड़की के साथ एक साल लड़का रखा जाता है। अगर एक साल में लड़की गर्भवती हो गई तब तो उससे उसकी शादी कर देते हैं अन्यथा नामर्द समझकर उसे वहाँ से निकाल देते है ("लड़का लमसेना कहलाता है")

(ग) नेवार जाति में लड़की का पहला विवाह भगवान नारायण के साथ किया जाता है और फिर किसी पुरुष के साथ। गौंड जाति का वृद्ध यदि किसी युवती से विवाह करे और खुद मर जाये तो उस विधवा से उसका पोता विवाह कर सकता है।

(घ) गारो जाति के एक कबीले अतोंग लोगों में खास-त्योहारों के दिन रात को अविवाहित युवक-युवतियों को साथ सुलाया जाता है। उस समय यदि कोई कन्या गर्भवती हो जाय तो उसी युवक के साथ उसकी शादी कर दी जाती है।

(ङ) बस्तर जिला की माड़िया जाति में चांदनी रात में "काकसार" पर्व मनाया जाता है। युवक-युवतियाँ अलग-अलग टोली बनाकर नाच करती हैं। नाचती-नाचती युवतियाँ अपनी टोली से छिटक-छिटककर मन पसन्द यवकों से जा जुड़ती हैं और वे उन्हें लेकर झाड़ियों की ओट में चले जाते हैं। फिर उनकी आपस में शादी हो जाती है।

(च) वर्मा में प्रेमी युवक-युवती किसी दिन अचानक घर से भाग जाते हैं। इसका मतलब यह होता कि उन्होंने अपना विवाह सम्बन्धी निर्णय कर लिया, फिर उनकी विधिवत् शादी कर देते हैं।

(छ) हंगरी में कुमारियां एक हाथ में फूल और एक हाथ में भोजन सामग्री लेकर खेत में जाती हैं। वहाँ भोजन बनाकर अपने प्रेमी युवक को खिलाती हैं। वह खा-पीकर

यदि मीठी रोटी का एक टुकड़ा कन्या को दे देता है तो समझ लिया जाता है कि लड़की उसके पसन्द आ गई। फिर उनका विवाह कर दिया जाता है।

(ज) योरोप के कई देशों में यह प्रथा है कि "लीपइयर" के दिनों में कोई भी युवती किसी युवक से यदि आग्रह करती है तो युवक को कानूनन उससे विवाह करना पड़ता है। इनकार करने पर वह राज दण्ड का भागी हो जाता है।

(झ) हिमालय के अंचल में स्थित जौनसार-परिवार में सभी पत्नियों के साथ विवाह केवल बड़े भाई का होता है। वही उसका प्रथम अधिकारी माना जाता है। पुनः वह अन्य सभी भाइयों की पत्नी मान ली जाती है। छोटे भाई द्वारा घर में किसी लड़की के लाने पर भी विवाह का अधिकारी बड़ा भाई ही रहता है।

(ञ) ईरान में अस्थायी विवाह भी होते हैं जो "मुताह-निकाह" कहलाते हैं। वे एक निश्चित अवधि (एक दिन, एक हफ्ता, एक महीना, एक वर्ष) आदि के लिए ही माने जाते हैं। उत्तरी अमेरिका के इण्डियनों में, पश्चिमी अफ्रीका के निग्रो में ग्रीस तथा अरब की कई जातियों में एवं तिब्बत में भी इस तरह के विवाहों का उल्लेख मिलता है। मार्शल द्वीप में सेन्फर साहब को एक बार एक ऐसा व्यक्ति मिला, जो २४ वर्ष की ही अवस्था में ११ पत्नियों के साथ अस्थायी विवाह कर चुका था। यह युवक किसी भी युवती से सिर्फ तीन या छः महीने के लिए अस्थाई विवाह करता था।

(ट) नाइजीरिया की कई जाति की महिलायें महिलाओं के साथ ही शादी करती हैं, जिससे उसकी शादी होती है उसे किसी भी पुरुष से काम क्रीड़ा करने की छुट्टी होती है। वह उस पति महिला की सन्तान मानी जाती है। (यह प्रथा अजीब सी लगती है)।

देश-विदेश की अनोखीप्रथाएं :
लेखक - सत्यदेव - नारायण सिन्हा)।

२. **बनजारा जाति**—में बाकायदा रोना सीखने के बाद लड़की की शादी की जाती है और यह कहावत है कि—'गाता जाए बनजारा और रोती जाए बनजारी।'

३. सौराष्ट्र की **कणबी** (जाट) **जाति**—में ग्यारह वर्ष में एक ही दिन विवाह होता है। उस समय कोई बालक दो-चार-छः मास का यावत् कोई बारह तेरह-पन्द्रह वर्ष का भी हो सकता है।

४. सरदारशहर तहसील—के अन्तर्गत "दसई" गाँव में एक ही दिन में ६०० विवाह हुए। वर-कन्याओं की आयु दो-चार मास से लेकर बारह साल तक की थी।

—हिन्दुस्तान १३ मई १६५८

५. बनारस में एक सौ वर्ष के "महतो" मुसलमान ने ६२ वर्ष की "खातून" बुढ़िया से विधवा-विवाह किया। दोनों के पुत्र-पुत्रियाँ विद्यमान हैं। —हिन्दुस्तान १६ जून १६६२

६. सन् १६५३ जालंधर में वर ने कहा—'रेडियो, घड़ी, मोटर-

साइकिल आदि देने पर ही शादी करूँगा।' ससुर ने बहुत कुछ कहा, नहीं माना। तब कन्या ने "गाना" तोड़ कर कहा–'नहीं करती ऐसे नीच से मैं तो शादी।' बरात बैरंग होकर वापस दिल्ली लौट आई।

७. भटिन्डे का लड़का, लड़की देखने पटियाला गया एवं कहने लगा–मैं तो लड़की का नाचना और गाना देख-सुन-कर ही उसे पसन्द करूँगा। अधिक हठ करने पर लड़की ने गाना-नाचना किया। लड़के ने कहा–लड़की मेरे पसंद है। फौरन लड़की ने कहा–मुझे तू नापसंद है क्यों कि तुझे तबला बजाना नहीं आता। अपना - सा मुंह लेकर लड़का घर आ गया।

८. पिछली फरवरी को २३ वर्षीय **मार्टिनरेवलट** (जिसके हाथ नहीं थे) की नवीन ढंग की मोटर पुलिसवालों ने रोकी। मार्टिन ने पैरों से लाईसेंस दिखाया। मोटर व पुलिस की खबर अनेक अखबारों में छपी। उसे **लाइव ओक फ्ले-रिडा** में रहनेवाली १९ वर्षीय कन्या **जोवेथ जान्सन** ने पढ़ा। 'जो' के भी हाथ नही हैं अतः उसने पैरों से पत्र लिखा एवं अभी तीन सप्ताह पूर्व मार्टिन 'जो' से मिले। उन्होंने सोमवार को शादी के लाईसेंस की अर्जी दी एवं शुक्र को **बैपटीस्ट** चर्च में वे शादी कर रहे हैं।

—सान डि एगो केलिफोर्निया ११ जुलाई १९६३

—हिन्दुस्तान १२ जुलाई १९६३

२७ पुनर्विवाह

१. पहली बार विवाह करना पावन कर्तव्य है, दूसरी बार मूर्खता और तीसरी बार पागलपन।

—डच-लोकोक्ति,

२.(क) न्यूयार्क के समाचारपत्र में एक लक्षाधिपति ने खबर निकाली कि मेरी नौ वीं स्त्री मुझे दूसरी बार छोड़कर भाग गई। बिचारे ने जाहिर खबरों के पीछे एक हजार पौंड खर्च कर दिये।

(ख) न्यूयार्क में एक स्त्री ने सातवर्ष में पाँच पति बनाए। छठे विवाह के समारोह में पिछले छोड़े हुए चार पति तो उपस्थित थे और पाँचवाँ अस्वस्थता के कारण न आने सका, किन्तु सुन्दर भेंट भेजी।

(ग) अमेरिका में एक विवाह हुआ। उसमें वर ८२ वर्ष का था एवं स्त्री ७१ वर्ष की थी। यह विवाह पुरुष का ६ वां और स्त्री का १२ वाँ था।

(घ) **ब्रुसेल्स** के एक मनुष्य ने १३ विवाह किये एवं नई-नई १२ स्त्रियाँ थीं। तेहरवीं बार एक सुन्दर विधवा से विवाह किया, किन्तु पीछे पता लगा-यह विधवा पहली बार जिसे ब्याही थी, वही **"मेरी वेन्टीस"** थी।

(च) एक **स्पेन** की बाई ने तीन वर्ष में १३ विवाह किये। जिस में रूसी उमराव, कारखानादार, दूकानदार, मोची, कृषिकार, सेनापति, जौहरी, नाई एवं दलाल आदि पति बनें।

(छ) अमेरिका में एक ७२ वर्ष का व्यक्ति मरा। उसने १७ विवाह किये एवं तोड़े। उसकी पूरे बीस विवाह करने की इच्छा थी।

(ज) कुछ समय पहले तुर्की में १०२ वर्ष का एक व्यक्ति मरा उसने १४ विवाह तो कर लिए थे, किन्तु १५ वीं मांग-विधवा बहिन के इन्कार कर देने से आघात लगा एवं वह मर गया।

—'जागृति' गुजराती समाचारपत्र से

(झ) मध्य इटली में एक ७४ वर्षीय मुगल एंटोनियो प्रेटी और रोजा मोटोनितो की सगाई १६१० में हुई थी। उसके बाद एंटोनियो को सैनिक सेवा के लिए बुला लिया गया और प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान दोनों बिछुड़ गए।

दोनों ने विवाह किए और अपने-अपने साथियों को खो दिया। हाल में वे फिर मिले, अपने पहले सम्पर्कों को ताजा किया और गत सोमवार को चर्च में दुबारा विवाह-सूत्रों में आबद्ध हो गए।

—हिन्दुस्तान १७ फरवरी १६६८

२८ विवाह-सम्बन्धी कहावतें

१. विवाह समान हरख नहीं, मूआ समान शोक नहिं ।

२. परण्यानो, पटलाईनो ने पंडिताईनो कोड़ सौने होय ।

३. वर ने परण्यानो लाभ, ने जनैया ने जम्यानो लाभ ।

४. तमने अंबर ढलशे तो पवननो लहरको तो अमने पण मलशे ।

५. परण्यां नहिं होइये पण जान तो गया होइशुं ?
भण्यां नहिं पण पाटला पर धूल तो नाखी हंशे ?

—गुजराती कहावतें

६. व्याव कहै मनैं मांड देख, घर कहै मनैं खोल देख ।

—राजस्थानी कहावत

७. व्याव बिगड्यो पण घर रा तो जीमो । ,, ,,

२६ बींद-बींदणी की अद्‍भुत जोड़ी

१. बींद-बींदणी जोड़ै-तोड़ै, ले पंसेरी माथो फोड़ै ।

२. बींद-बींदणी सावधान, घर में नहीं पाव धान ।

—राजस्थानी कहावतें

३. पति–हाड का क्या लाड़, मर्द तो एकदन्ता ही भला ।
पत्नी–हाड का क्या लाड़, मुँह तो सफम-सफा ही भला ।
(पति के एक दाँत था और पत्नी दंतहीन थी ।)

४. विवाह के समय तुतलाकर बोलनेवाले बींद-बींदणीः–
बींद—तीड़ी–तीड़ी–तीड़ी,
बींदणी—मत्तोड़ो–मत्तोड़ो–मत्तोड़ो,
पंडित—दो घर बिगड़ते एक घर बिगड़ा स्वाहा !

५. बींद मरो–बींदणी मरो, बामण रो टक्को त्यार ।

—राजस्थानी कहावतें

६. बींद रै मूँढै लाल पड़ै, जद जानी बापड़ा कांई करै ? ,,

७. वर काणा था एवं कन्या पांगली थी । फेरों के समय वर के चाचा ने कहा—"गढ़ जीत्यो रे बेटा ! काण्या !"
तब कन्या का मामा बोला—"खबर पड़सी उठाण्या"

—राजस्थानी कहावत

३० पति-पत्नी की एकता

१. घी-खीचड़ी एक ना एक, पापड़ बैठो देख !
दहाड़े आवे डाँगे ने राते एक ना एक।

—गुजराती कहावत

२. अजायुद्धमृषिश्राद्धं, प्रभाते मेघडम्बरम्।
स्त्रीभर्तुः कलहश्चैव, चिरकालं न तिष्ठति।

बकरियों का युद्ध, ऋषियों का श्राद्ध, प्रातःकाल का मेघाडम्बर और पति-पत्नी का झगड़ा—ये चारों अधिक देर नहीं ठहरते।

३. जाट-जाटणी में झगड़ा हो गया मुँह फेरकर बैठ गये।
सुबह खेत जाने के समय जाट ने मुँह फेरकर कहा—
लोक चाल्या लावणी, लोक क्यूंनी जाय।
लोक चाल्या खाय-पीय लोक कांई खाय।
छींके पड़ी राबड़ी, उतार क्यूंनी लेह !
अब तो आपां बोल्या-चाल्या घाल क्यूंनी देह।

४. मियां-बीबी राजी, तो क्या करे मुल्ला-काजी !

—हिन्दी कहावत

३१ पति-पत्नी का सहवास अनियमित न हो

१. पशु-जीवन में दूसरी बात हो सकती है, लेकिन मनुष्य के विवाहित जीवन का यह नियम होना चाहिए कि कोई भी पति-पत्नी बिना आवश्यकता के प्रजा उत्पन्न न करें और प्रजोत्पादन के हेतु-बिना संभोग न करे ! —गांधी

२. वृत्त्यर्थं भोजनं येषां, सन्तानार्थं च मैथुनम् ।
वाक् सत्यवचनार्थाय, दुर्गाण्यपि तरिन्त ते ॥

जो मनुष्य प्राण-रक्षा के लिए खाते हैं, सन्तान के लिए स्त्री-संसर्ग करते हैं और सत्य के लिए बोलते हैं—वे विपद् के पार हो जाते है ।

३२ सहवास के लिये निषिद्ध समय एवं स्थान

१. रजोदर्शनतः पूर्वं, न स्त्री-संसर्गमाचरेत् ।

—भविष्य-पुराण

रजोदर्शन से पूर्व स्त्री का संगम नहीं करना चाहिए। (उस समय वीर्य व्यर्थ जाता है)

२. व्यर्थीकारेण शुक्रस्य, ब्रह्महत्यामवाप्नुयात् ।

—निर्णयसिन्धु ८।१४-१५

वीर्य को व्यर्थ खोने से ब्रह्महत्या का पाप लगता है।

३. ऋतुकाले व्यतिक्रान्ते, यस्तु सेवेत मैथुनम् ।
ब्रह्महत्याफलं तस्य, सूतकं च दिने-दिने ॥

—महाभारत

ऋतुकाल व्यतीत होने पर जो मैथुन सेवन करता है, उसे ब्रह्महत्या का पाप लगता है एवं उसके प्रतिदिन सूतक रहता है।

४. ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां, रात्रयः षोडशः स्मृताः ।
चतुर्भिरितरैः सार्द्ध - महोभिः सद्भिर्गर्हितैः ॥४६॥
तासामाद्याश्चतस्रश्च, निन्दितैकादशी च या ।
त्रयोदशी च शेषास्तु, प्रशस्ता दशरात्रयः ॥४७॥

युग्मासु पुत्रा जायन्ते, स्त्रियोऽयुग्मासु रात्रिषु ।।४८।।

पुमान् पुंसोऽधिके शुक्रे, स्त्री भवत्यधिके स्त्रियः ।
समे पुमान् पुं-स्त्रियौ वा, क्षीणेऽल्पे च विपर्ययः ।।४६।।
—मनुस्मृति ३।४६ से ४६

(रजोदर्शन से जाने गए गर्भ रहने के समय को ऋतुकाल कहते हैं ।) रजोदर्शन के चार दिन-रात-सहित सोलह रात्रियां स्त्रियों का स्वाभाविक ऋतुकाल कहलाता है । (४६) उन सोलह रात्रियों में चार तो पहली, ग्यारहवीं और तेरहवीं—ये छः रात्रियाँ निन्दनीय हैं और शेष दश प्रशस्त हैं । (४७) युग अर्थात् छठी, आठवीं, दसवीं, बारहवीं, चौदहवीं और सोलहवीं—इन छः रात्रियों में गमन करने से पुत्र उत्पन्न होता है और अयुग्म अर्थात् पाँचवीं, सातवीं, नौवीं और पन्द्रहवीं रात्रि में गमन करने से पुत्री उत्पन्न होती है । (४८) पुरुष का वीर्य अधिक होने से विषम रात्रियों में भी पुत्र होता है, स्त्री का वीर्य अधिक होने से सम रात्रियों में भी पुत्री होती है, दोनों का समान वीर्य होने से नपुंसक या पुत्र-पुत्री का जोड़ा होता है तथा वीर्य क्षीण अथवा कम होने से गर्भ नहीं भी रहता ।

५. कामशास्त्र में कहा है कि अग्नि, ब्राह्मण तथा माता-पिता-गुरु-ज्येष्ठ भ्राता आदि गुरुजनों के पास, नदी तट पर, मन्दिर में, किला वगैरह में, चोरास्ते में, पराये घर में, जंगल में, श्मशान में, दिन में, संक्रान्ति में, चन्द्रमा के क्षयकाल में, शरद् ऋतु में, ग्रीष्म ऋतु में, ज्वर चढ़ा होने पर, उपवास रखने पर, सन्ध्या समय और परिश्रम करने के बाद–पूर्वोक्त स्थानों एवं समयों में विद्वान को स्त्री-

प्रसंग नहीं करना चाहिए।

—शृंगारशतक पृष्ठ २१७

(चरकसंहिता ८।२२ में ऐसा भी वर्णन आया है)

६. एक बार संभोग करने के बाद बारह मूहूर्त तक स्त्रीयोनि सजीव रहती हैं अतः उस समय पुनः भोग नहीं करना चाहिए।

—भगवती सूत्र २।५

३३ अति सहवास का निषेध

१. धर्मार्थाविरोधेन कामं सेवेत ।

—नीतिवाक्यामृत ३।२

धर्म और धन का नाश न करते हुए काम का सेवन करना उचित है ।

२ अतिस्त्रीसंप्रयोगाच्च, रक्षेदात्मानमात्मवान् ।

—वैद्यक-ग्रन्थ

अधिक स्त्री-प्रसंग से अपने - आपको बचाए रखना चाहिए । इससे शूल-काश-श्वास आदि अनेक रोग उत्पन्न होने का भय रहता है ।

३ ग्रीस के महात्मा सोक्रेटीज से उनके शिष्य ने पूछा—
मनुष्य को स्त्रीप्रसंग कितनी बार करना चाहिए ?
महात्मा– जीवन भर में मात्र एक बार ।
शिष्य – यदि इससे तृप्ति नहीं हो तो ?
महात्मा– वर्ष में एक बार ।
शिष्य – यदि इतने पर भी मन नहीं माने तो ?
महात्मा– महीने में एक बार ।
शिष्य – फिर भी रहा न जाय तो ?
महात्मा– खैर, महीने में दो बार, पर ऐसा करनेवाले की मृत्यु जल्दी होगी ।

शिष्य – इतने पर भी इच्छा बनी रहे तो?

महात्मा– पहले कफन मँगाकर घर में रख ले फिर चाहे जैसा किया करे।

४ तृषा शुष्यत्यास्ये पिबति सलिलं स्वादुसुरभि,
क्षुधार्तः सञ्शालीन् कवलयति मांसाज्यकलितान्।
प्रदीप्ते कामाग्नौ सुदृढतरमाश्लिष्यति वधूं,
प्रतीकारं व्याधेः सुखमिति विपर्यस्यति जनः।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक २२

जैसे - तृषा से गला सूखने पर मनुष्य स्वादिष्ट एवं सुगन्धित जल पीता है और भूख से हैरान होने पर शाकादियुक्त चावलों को खाता है, उसी प्रकार कामाग्नि प्रज्वलित होने पर स्त्री का आलिङ्गन करता है। वास्तव में जल, भोजन और स्त्री ये एक-एक रोग की औषधियाँ हैं। लेकिन लोगों ने अज्ञानवश उल्टा अर्थ करके इन्हें सुखरूप मान रखा है।

३४ गर्भाधान के विषय में विवेक

१. ऊनषोडशवर्षाया— मप्राप्तपञ्चविंशतिम् ।
यदा धत्ते पुमान् गर्भं, गर्भस्थः स विनश्यति ॥
जातो वा न चिरं जीवेद्, जीवेद् वा दुर्बलेन्द्रियः ।
तस्मादत्यन्तबालायां, गर्भाधानं न कारयेत् ॥

—सुश्रुत शरीरस्थान अ० १०

सोलह वर्ष से कम उम्र की स्त्री में यदि पच्चीस वर्ष से कम उम्र का पुरुष गर्भ-स्थापन करता है तो गर्भ कुक्षि में ही बिगड़ जाता है। कदाचित् बच्चा जन्म भी जाता है तो अधिक जीता नहीं। कदाचित् जी जाता है तो कमजोर और रोगी होता है। अतः कम उम्र की स्त्री में कभी गर्भाधान नहीं करना चाहिए।

२. तए णं सा धारिणी देवी नाइतित्तं नाइकडुयं नाइकसायं नाइअंबिलं नाइमहुरं, जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थयं देसे य काले य आहारं आहारेमाणी, नाइचिंतं नाइसोगं (णाइदेण्णं) नाइमोहं नाइभयं नाइपरित्तासं ववगयचिंता-सोय-मोह-भय-परित्तासा तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ।

—ज्ञातासूत्र १

उस समय गर्भवती वह धारिणी रानी अति तीखा, अति कड़ुवा अति कसैला, अति खट्टा एवं अतिमीठा आहार छोड़ती हुई, जो उस गर्भ के लिए हितकारी, प्रमाणयुक्त एवं पथ्य होता, वही

आहार करती थी। गर्भावस्था के समय वह अति चिन्ता, अति शोक, अति दीनता, अति मोह, अति भय, अति परित्रास—इन सब बातों से दूर रहती हुई सुखपूर्वक गर्भ का परिवहन करती थी। (समझदार गर्भवती स्त्रियाँ—इन सब बातों का पूरा-पूरा ध्यान रखती हैं।)

३ पान की जड़ में भी भयङ्कर विष है। सुना जाता है कि जड़ों का चूर्ण फाक लेने से स्त्रियों की गर्भ-धारण-शक्ति नष्ट हो जाती है। ऋतु के समय उन्हें पान खाना वैद्य-ग्रन्थों में वर्जित है।

—आत्मविकास, पृष्ठ १५४

४. गर्भधारण के बाद रजःश्राव बन्द हो जाता है एवं संतान के लिए उसी रज से दूध बनने लगता है अतः गर्भ धारण के पश्चात् वहाँ तक स्त्री सहवास का निषेध है, जहाँ तक बच्चा दूध पीता रहे, उसका चूड़ाकर्म न हो जाए एवं दांत न आ जायें। यह समय लगभग तीन वर्ष का माना गया है।*

—गृहस्थधर्म, पृष्ठ १५

* माता का दूध १८ मास तक तो पतला होता है तत्पश्चात् गाढा होने लगता है और बच्चे का बुद्धि-बल बढ़ाता है।

—गृहस्थधर्म पृ-२७

दूसरा कोष्ठक

१ परस्त्रीगमन-निन्दा एवं निषेध

१. अनार्यः परदारव्यवहारः ।

—अभिज्ञानशाकुन्तल

परस्त्रीगमन अनार्यों का काम है ।

२. नहीदृशमनायुष्यं, लोके किंचन दृश्यते ।
यादृशं पुरुषस्येह, परदारोपसेवनम् ॥

—मनुस्मृति ४।१३४

इस संसार में पुरुष का आयुष्यबल क्षीण करनेवाला परस्त्रीगमन जैसा दूसरा कोई भी दुष्ट कार्य नहीं है ।

३. परदाराभिमर्शात्तु नान्यत् पापतरं महत् ।

—वाल्मीकि रामायण ३।३८।३०

परस्त्री से अनुचित सम्बन्ध करने से बड़ा पाप दूसरा कोई नहीं है ।

४. परस्त्रीगमन करना जान बूझकर अपनी स्त्री को व्यभिचारिणी बनाना है । —विजयधर्मसूरि

५. प्राणसंदेह - जननं परमं वैरकारणम् ।
लोकद्वयविरुद्धं च, परस्त्रीगमनं त्यजेत् ॥

—योगशास्त्र-२।९७

परस्त्रीगमन प्राण-नाश के सन्देह को उत्पन्न करनेवाला है, परम वैर का कारण है और इहलोक-परलोक--ऐसे दोनों लोकों को नष्ट करने वाला है, अतः इस परस्त्रीगमन को त्याग देना चाहिए।

६. परविलासवतीसु पराङ्मुखो भव !

परस्त्रियों से पराङ्मुख रहो।

७. इज्जत गमानहारी, अजश कमानहारी,
भव में भमानहारी पाप की पिटारी है।
सुख की जलानहारी दुःख की मिलानहारी,
नरक-दिलानहारी व्रत की लुटारी है।
सुमति—उड़ानहारी कुमति—दृढ़ानहारी,
ममता—बढ़ानहारी परम ठगारी है।
कपट-घटारी कीर्ति काटन कटारी एह,
ओगुन-अटारी खारी-जहर पर-नारी है।

—धनबावनी

८. चतुर्थीचन्द्रलेखेव, परस्त्री-भालपट्टिका।

—योगवाशिष्ठ

परस्त्री का भालपट्ट (ललाट) चतुर्थी के चन्द्रदर्शनवत् कलङ्क लगानेवाला है।

९. पराई स्त्री की सुन्दरता देख कर उसकी अभिलाषा मत कर ! कहीं ऐसा न हो कि, वह तुझे अपने कटाक्षों में फँसाले।

—पुरानी बा० नविश्ते, नीतिवचन ६।२४-२५

२ परस्त्रीगामी

१. सर्वस्वहरणं बन्धं, शरीरावयवच्छिदाम् ।
मृतश्च नरकं घोरं, लभते पारदारिकः ॥
—योगशास्त्र २।६७

परस्त्रीगामी पुरुष को यहां सर्व धन का नाश, जेल आदि का बन्धन एवं शरीर के अवयवों का छेदन प्राप्त होता है और वह मरकर घोर नरक में जाता है ।

२. यावन्तो रोमकूपाः स्युः, स्त्रीणां गात्रेषु निर्मिताः !
तावद् वर्षसहस्राणि, नरकं पर्युपासते !
—महाभारत अनुशासन पर्व १०४

स्त्री के शरीर में जितने रोम—छिद्र हैं, उतने हजार वर्ष तक परस्त्रीगामी नरक में निवास करता है ।

३. चत्तारि ठानानि नरो पमत्तो, आपज्जती परदारूपसेवी ।
अपुञ्ञलाभं न निकामसेय्यं, निन्दं ततीयं निरयं चतुत्थं ॥
—धम्मपद ३०९

प्रमादी-परस्त्रीगामी मनुष्य को चार चीजें प्राप्त होती हैं—१—अपुण्यलाभ, २—सुख से निद्रा का न आना, ३—निंदा और ४—नरक ।

४. अवि हत्थ-पायछेयाए, अदुवा बद्धमंसउक्कंते ।
अवि तेयसाभितावणाणि, तय-खारसिंचणाइं च ॥
—सूत्रकृतांग ४।१।२१

परस्त्रीगमन करनेवाले के हाथ-पैर काट दिए जाते हैं; उसकी चमड़ी उधेड़ दी जाती है, उसे जलाया जाता है और जले पर नमक छिड़का जाता है।

५. जो परस्त्री के साथ व्यभिचार करता है, वह विवेकशून्य है, एवं स्वयं अपनी आत्मा का हनन करता है।

—बाइबिल

६. स्वदेशजातस्य नरस्य नूनं, गुणाधिकस्यापि भवेदवज्ञा।
निजाङ्गना यद्यपि रूपराशि-स्तथापि लोकाः परदारसक्ताः॥

अधिक गुणी होने पर भी अपने देश के मनुष्य की प्रायः अवज्ञा ही होती है। देखिए—चाहे अपनी स्त्री रूपवती है, फिर भी लोक परस्त्रीगमन में आसक्त हैं।

६. घर की खांड किरकिरी लागे, गुड़ चोरी का मीठा।
परनारी के कारणे, जूत पड़ंता दीठा॥

७. परिपूर्णेऽपि तटाके, काकः कुम्भोदकं पिबति।
अनुकूलेऽपि कलत्रे, नीचः परदारलम्पटो भवति॥

—शार्ङ्गधर

तालाब भरा होने पर भी कौआ दूसरों के घड़ों में चौंच मारता है। इसीप्रकार मनोनुकूल स्त्री होने पर भी नीच पुरुष परस्त्री का लम्पट होता है।

३ परस्त्री-त्यागी

१. मातृवत् परदारांश्च, परद्रव्याणि लोष्ठुवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतानि, यः पश्यति स पश्यति ।।

—चाणक्यनीति १२।१३, पद्मपुराण सृष्टिखण्ड १६।३५६

जो मनुष्य दूसरों की स्त्रियों को माता के समान, दूसरों के द्रव्य को मिट्टी के ढेले तुल्य एवं सब जीवों को अपनी आत्मा के समान देखता है, वस्तुतः वही सही-सही देखनेवाला है ।

२. स्वदारे यस्य सन्तोषः, परदारनिवर्तनम् ।
अपवादोऽपि नो यस्य, तस्य तीर्थफलं गृहे ।।

—व्यासस्मृति

जो पुरुष स्वस्त्री में सन्तुष्ट है और परस्त्री का त्यागी है, उसका कहीं भी अपवाद नहीं होता और उसे घर में बैठे-बैठे ही तीर्थ का फल मिलता है ।

३. दिवि-दीपक लोय बनी बनिता, जड़-जीव पतंग जहाँ परते ।
दुख पावत प्राण गँवावत हैं, बरजे न रहें हठ से जरते ।।
इह भांति विचच्छन आँखिन के वश, होय अनीति नहीं करते ।
परती लखि के धरती निरखें, धन हैं-धन हैं नर ते-नर ते ।

—भूधरदास

४. सदारसंतोसिए अवसेसं मेहुणं पच्चक्खाति, जावज्जीवाए ।

—श्रावकप्रतिक्रमण

स्वस्त्री में सन्तुष्ट पति, प्रतिज्ञा करता है, कि मैं यावज्जीवन के लिए अपनी स्त्री को छोड़कर अन्य किसी भी स्त्री के साथ मैथुन-सेवन नहीं करूंगा।

५. जननी सम जानहि परनारी, धन पराव विषते विषभारी।
—संत तुलसीदास

६. **राम-लक्ष्मण-संवाद :–**

राम—पुष्पं दृष्ट्वा फलं दृष्ट्वा, दृष्ट्वा योषितयौवनम्।
त्रीणि रत्नानि दृष्ट्वैव, कस्य नो चलते मनः ?
लक्ष्मण—पिता यस्य शुचीभूतो, माता यस्य पतिव्रता।
उभाभ्यां यः समुत्पन्न–स्तस्य नो चलते मनः ॥
राम—घृतकुम्भसमा नारी, तप्ताङ्गारसमः पुमान्।
जानुस्थिता परस्त्री चेत्, कस्य नो चलते मनः ?
लक्ष्मण—मनो धावति सर्वत्र, मदोन्मत्तगजेन्द्रवत्।
ज्ञानाङ्कुशे समुत्पन्ने, तस्य नो चलते मनः ॥
—वाल्मीकिरामायण

एक बार सीता को लक्ष्मण की गोद में सोई हुई देखकर शुक रूप से राम ने पूछा—पुष्प, फल और स्त्री का यौवन–इन तीनों रत्नों को देखकर किसका मन नहीं चलता ?

लक्ष्मण—जिसका पिता पवित्र है और माता पतिव्रता है, उन दोनों से जो पुत्र पैदा हुआ है, उसका मन नहीं चलता।

राम—स्त्री घृत-कुम्भतुल्य है और पुरुष तप्त-अङ्गार सदृश है। यदि परस्त्री गोद में सोई हुई है–ऐसी स्थिति में किसका मन नहीं चलता ?

लक्ष्मण—मन मदोन्मत्त हाथी की तरह सर्वत्र दौड़ता रहता है। जिसके पास ज्ञान का अंकुश है उसका मन नहीं चलता।

७. नाहं जानामि केयूरे, नाऽहं जानामि कुण्डले ।
नूपुरेत्वभिजानामि, नित्यं पादाभिवन्दनात् ॥
—वाल्मीकि० किष्किंधाकाण्ड ६।२२

सीता हरण के बाद जब उसके गहने पहचान के लिए लक्ष्मण के सामने लाये गये तब लक्ष्मण ने कहा—मैं सीता के कंकणों और कुण्डलों को नहीं पहचानता, केवल नेउरों को पहचानता हूँ क्योंकि सदा चरणों में ही नमस्कार किया करता था, उसके मुंह और हाथों की तरफ नहीं देखता ।

८. एक नारी ब्रह्मचारी —राजस्थानी कहावत

९. बिलाद् बहिर्बिलस्यान्तः-स्थितमार्जार - सर्पयोः ।
मध्ये चाखुरिवाऽऽभाति, पत्नीद्वययुतो नरः ॥

बिल के बाहर बिल्ली हो और बिल के अन्दर सांप हो, उनके बीच में रहे हुए उँदर की जो दशा होती है, दो पत्नीवाले पति की भी वही दशा समझो !

१०. स सुखी यस्य एक एव दारपरिग्रहः ।
—नीतिवाक्यामृत २७।३६

वही सुखी है, जिसके एक स्त्री है ।

४ पति का सर्वस्व पत्नी

१. जाये दस्तम् ।

—ऋग्वेद-३।५३।४

स्त्री का ही नाम 'घर' है ।

२. गृहिणी गृहमुच्यते न पुनः कुड्य-कटसंघातः ।

—नीतिवाक्यामृत ३१।३१

वास्तव में स्त्री को ही घर कहते हैं, भींत एवं कट के समूह को नहीं ।

३. न गृहेण गृहस्थः स्याद्, भार्यया कथ्यते गृही ।
यत्र भार्या गृहं तत्र, भार्याहीनं गृहं वनम् ॥

—बृहत् पाराशरसंहिता

घर होने से गृहस्थ नहीं होता, भार्या होने से गृहस्थ कहलाता है । जहाँ भार्या है वहां घर है । भार्या के बिना घर वन के समान है ।

४. अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया····
यावज्जायां न विन्दते····असर्वो हि तावद्भवति ।

—शतपथ ब्राह्मण ५।२।१।१०

स्त्री पुरुष का आधा भाग होती है । जब तक स्त्री नहीं मिलती तब तक पुरुष अपूर्ण है ।

५. प्रियानाशे कृत्स्नं किल जगदरण्यं हि भवति ।

—उत्तररामचरित ६।३०

प्रिय पत्नी के न रहने पर समस्त संसार जंगल के समान हो जाता है।

६. जीवद्भर्तरि वामाङ्गी, मृतेवापि सुदक्षिणे।
श्राद्धे यज्ञे विवाहे च, पत्नी दक्षिणतः सदा।
—अत्रिस्मृति-१३६

स्वामी के जीवित अवस्था में अथवा मृत अवस्था में स्त्री बायीं ओर बैठा करती है, लेकिन श्राद्ध, यज्ञ और विवाह के समय दाहिनी रहा करती है।

७. नारीपरिभवं राजन्! सहन्ते पशवोऽपि न।
—त्रिषष्ठि० २।६

अपनी स्त्री का अपमान पशु भी नहीं सह सकते।

८. भोजनाच्छादने दद्याद्, ऋतुकाले समागमम्।
भूषणाद्यं च नारीणां, न ताभिर्मन्त्रयेत् सुधीः॥
—पंचतन्त्र ५।६१

स्त्रियों को भोजन, वस्त्र, आभूषण एवं ऋतुकाल में समागम देना चाहिए, किंतु विद्वान् को उनके साथ गुप्त-मन्त्रणा न करनी चाहिए।

९. नाश्नीयाद् भार्यया सार्धं, नैनमीक्षेत चाश्नतीम्।
—मनुस्मृति ४।४३

अपनी पत्नी के साथ भोजन नहीं करे और उसे भोजन करते समय देखे भी नहीं।

५ पतिव्रता एवं साध्वी स्त्री

१. कोकिलानां स्वरो रूपं, नारीरूपं पतिव्रतम् ।
विद्या रूपं कुरूपाणां, क्षमा रूपं तपस्विनाम् ।।

—चाणक्यनीति ३।९

कोयल का रूप उसका मीठा स्वर है और स्त्री का रूप पतिव्रत-धर्म है। कुरूपों का रूप विद्या है और तपस्वियों का रूप क्षमा है।

२. श्वश्रू-श्वसुरयोः पादौ, तोषयन्ती पतिव्रता ।
मातापितृपरा नित्यं, या सा नारी पतिव्रता ।।

जो सास-श्वसुर के चरणों को सन्तुष्ट करती हुई एक पतिव्रत-धर्म का पालन करती है एवं माता-पिता की सेवा में तत्पर रहती है, वह स्त्री पतिव्रता है।

३. कार्ये दासी रतौ रम्भा, भोजने जननी-समा ।
विपत्तौ मन्त्रिणी भर्त्तुः, सा च भार्या पतिव्रता ।

—पद्म० सृष्टि० ४७।५६

जो कार्य के समय दासी है, रति के समय रंभा है, भोजन के समय माता है और विपत्ति के समय पति को मन्त्रिवत् सलाह देनेवाली है, वह स्त्री पतिव्रता है।

४. जीवन्ति च म्रियन्ते च, समं पत्या पतिव्रताः
—त्रिषष्ठि० २।६

पतिव्रताएं पति के साथ जीवित रहती है एवं पति के साथ मरती हैं।

५. शुद्धानारी पतिव्रता —चाणक्यनीति ८।१७

पतिव्रता स्त्री पवित्र होती है।

६. पतिव्रतानां नाकस्मात्, पतन्त्यश्रूणि भूतले।
—वाल्मीकि० ६।१११।६७

पतिव्रता स्त्रियों के आँसू किसी अनर्थरूप कारण के विना पृथ्वी पर नहीं गिरते। उनके आँसू गिरने से अवश्य कोई न कोई अनर्थ होता ही है।

७. **पतिव्रताएँ चार प्रकार की होती हैं—**

एक ही धर्म एक व्रत-नेमा, काय वचन मन पतिपद-प्रेमा-
जगपति व्रताचार विध अहहीं, वेद पुराण संत सब कहहीं।
उत्तम के अस वस मन माहीं, सपनेहु आनपुरुष जग नाहीं।
मध्यम परपति देखहिं कैसे, भ्राता पिता पुत्र निज जैसे।
धर्मविचारि समुझि कुल रहई, सो निकृष्ठ त्रिय श्रुति अस कहई,
बिन अवसर भयतें रह जोई, जानहु अधम-नारि जग सोई
—तुलसीकृत रामायण

८. सगुणादासी को पीकदान देने से राम के एक-पत्नीव्रत में दोष एवं एकदा भेंट में आए हुए फूलों को, राम को धारण कराए बिना सूंघ लेने से सीता के एकपतिव्रत में दोष मान लिया गया।

९. एक ब्राह्मण अपने तपस्तेज से बगुले आदि पक्षियों को

भस्म कर देता था। एक दिन वह भिक्षा लेने गया। गृह-स्वामिनी [पतिव्रता थी] पति की सेवा में लगी हुई थी। भिक्षा देने में देरी होने से ब्राह्मण क्रुद्ध होकर फुत्कार करने लगा। स्त्री ने कहा—'यहाँ भस्म हो जानेवाली कोई बगुली नही हैं।' ब्राह्मण विस्मित एवं शान्त होकर भिक्षा ले चलता बना। —महाभारत वनपर्व

१०. पतिं या नाभिचरति, मनोवाक् कायसंवृता,
सा भर्तृलोकमाप्नोति, सद्भिः साध्वीति चोच्यते।
—मनुस्मृति ९।२९

जो स्त्री मन, वचन, काय से संयत होकर पति का उल्लंघन नहीं करती अर्थात् पर पुरुष से गमन नहीं करती वह भर्तृलोक में जाती है और सत्पुरुषों द्वारा साध्वी कही जाती है।

११. अनन्यचित्ता सुमुखी, सा नारी धर्मचारिणी।

जो अन्य पुरुषों के साथ कभी - भी मन नहीं लगाती, वह स्त्री वास्तव में धर्मात्मा है।

१२. सीतया रावण इव, त्याज्यो नार्या नरः परः
ऐश्वर्यराजराजोपि रूपमीनध्वजोपि च।
—योगशास्त्र २।१०२

सीता ने जैसे रावण का परित्याग किया था, वैसे ही स्त्रियों को परपुरुष का त्याग करना चाहिए। चाहे वह ऐश्वर्य से कुबेर एवं रूप से कामदेव भी क्यों न हो।

१३. पङ्गुमन्धं च कुब्जं च, कुष्ठाङ्गं व्याधिपीडितम्।
आपत्सु च गतं नाथं, न त्यजेत् सा महासती।

महासती वह है, जो किसी भी परिस्थिति में अपने पति को नहीं छोड़ती, चाहे वह पंगु, अन्धा, कुबड़ा, कोढ़ी, रोगपीड़ित अथवा विपत्ति-ग्रस्त भी क्यों न हो !

१४. कोदू धान-धान में नहीं, पण आंतां आडो दीजे।
मोल्यो मांटी, मांटी में नहीं, पण दिन गुजारो कीजे ॥

सुभार्या

१. सा भार्या या शुचिर्दक्षा, सा भार्या या पतिव्रता ।
सा भार्या या पतिप्रीता, सा च या सत्यवादिनी ॥
—चाणक्यनीति ४।१३

सच्ची पत्नी वही है, जो पवित्र हृदय है, चतुर है, पतिव्रता है, पति से प्रेम रखनेवाली और सत्य बोलनेवाली है ।

२. भर्तुः प्रीतिकरी या तु, भार्या सा चेतरा जरा ।
—दक्षस्मृति ५।१३

पति को सुख देनेवाली स्त्री ही वास्तव में भार्या है । दूसरी तो मात्र पति के शरीर को क्षीण करनेवाली जरा–वृद्धावस्था है ।

३. या सौन्दर्यगुणान्विता पतिरता सा कामिनी-कामिनी ।

जो स्त्री रूप-गुणसम्पन्न एवं पतिव्रता है, वही स्त्री वास्तव में स्त्री है ।

४. भारिया धम्मसहाइया, धम्मविइज्जिया ।
धम्माणुरागरत्ता समसुहदुक्खसहाइया ॥
—उपासकदशा ७।२२७

पत्नी धर्म में सहायता करनेवाली, धर्म में अनुरक्त तथा सुख-दुख में समान साथ देनेवाली होती है ।

५. जीवति जीवति नाथे, मृता मृते या मुदायुता मुदिते ।
सहजस्नेहरसाला, कुलवनिता केन तुल्या स्यात् ॥

स्वाभाविक स्नेहवाली कुलवनिता पति के जीने पर जीती है, मरने पर मरती है और पति की खुशी में खुश रहती है। उसको किसके समान कहा जाए!

६. पतिप्रिया पतिप्राणा, पतिप्रियहिते रता।
यस्य स्यादीदृशी भार्या, धन्यः स पुरुषो भुवि॥

जिसकी स्त्री पतिव्रता है, पति को प्राणतुल्य माननेवाली है तथा पति के प्रिय और हितकारी कार्य में तत्पर है, वह पुरुष धन्य है।

७. सती सुरूपा सुभगा विनीता, प्रेमाभिरामा सरल-स्वभावा।
सदा सदाचारविचारदक्षा, संप्राप्यते पुण्यवशेन पत्नी॥

जो सती हो, सुन्दर हो, नयनानन्दकारिणी हो, विनीत हो पति से प्रेम करनेवाली, सरलस्वभाववाली और अच्छे आचार-विचार में निपुण हो—ऐसी पत्नी पुण्य के उदय से ही प्राप्त होती है।

७ पतिव्रता के लिए पति सर्वस्व

१. पतिरेव गुरुः स्त्रीणाम् । —चाणक्यनीति ५।१

स्त्रियों के पति ही आदर्श-गुरु है ।

२. इहामुत्र च नारीणां, परमा हि गतिः पतिः ।
—कथासरित्-सागर

इस भव या परभव में पति ही स्त्रियों की परमगति है ।

३. तुष्टे भर्तरि नारीणां, संतुष्टाः सर्वदेवताः ।
—हितोपदेश १।२०१

पति तुष्टमान होने पर स्त्रियों को समझना चाहिए कि उन पर सभी देवता तुष्टमान हो गए हैं ।

४. भर्तुरादेशं न विकल्पयेत् —नीतिवाक्यामृत २४।६३

पति की आज्ञा में आनाकानी नहीं करनी चाहिए ।

५. नास्ति स्त्रीणां पृथग् यज्ञो, न व्रतं नाप्युपोषितम् ।
पतिं शुश्रूषते येन, तेन स्वर्गे महीयते ।
—मनुस्मृति ५।१५५

पति से पृथक् स्त्रियों के लिए न यज्ञ है न व्रत है और न उपवास है । पति की सेवा से ही वे स्वर्ग को प्राप्त हो जाती हैं ।

६. न व्रतैर्नोपवासैश्च, धर्मेण विविधेन च ।
नारी स्वर्गमवाप्नोति, प्राप्नोतिपतिपूजनात् ॥
—शङ्खस्मृति ५।८

पति की पूजा करने से स्त्री स्वर्ग को प्राप्त होती है।

७. शशि बिन सूनी रैन, ज्ञान बिन हिरदो सूनो।
कुल सूनो बिन पूत, पत्र बिन तरुवर सूनो॥
गज सूनो बिन दन्त, सलिल बिन सागर सूनो।
द्विज सूनो बिन वेद, वास बिन पुहुप जु सूनो॥
हरिनाम भजन बिन संत, अरु घटा शून्य बिन दामिनी,
'बेताल' कहे विक्रम सुनो, पति बिन सूनी कामिनी।
—बेतालकवि

८. अबला जीवन! हाय! तुम्हारी यही कहानी।
आँचल में है दूध भरा, आँखों में पानी॥
—मैथिलीशरण गुप्त

८ अनेकपति-प्रथा

१. द्रौपदी के पाँच पति थे।

—महाभारत आदिपर्व १९४

२. **जटिला** गौतमी के सात ऋषि पति थे एवं **वाक्षी** ऋषि-कन्या ने **प्रचेतस** नामवाले दस भाइयों से विवाह किया था।

—महाभारत आदिपर्व १५

३. एक पति का नियम :

एक दिन श्वेतकेतु ऋषि अपने माता-पिता के पास बैठे थे। एक ब्राह्मण आया और उनकी माता को हाथ पकड़ कर ले गया। पुत्र क्रुद्ध हुए—तब पिता बोले :—

मा तात ! कोपं कार्षीस्त्वमेष धर्मः सनातनः।
अनावृताहि सर्वेषां वर्णानामंङ्गना भुवि।
यथा गावः स्थिता स्तांस्तान् स्वे-स्वे वर्णे तथा प्रजाः।

—महाभारत आदिपर्व श्लोक ३३।४१२३

बेटा क्रोध,मत कर ! गायें जैसे गोजाति मात्र के साथ रमण कर सकती हैं, उसीप्रकार मनुष्य-स्त्रियाँ भी सब मनुष्यों के लिए खुली हैं। यह सनातन धर्म है। ऐसे पिता के समझाने पर भी पुत्र न माने एवं नियम बना दिया कि एक ही पति की बन कर रहे।

९ सती-प्रथा

१. चितौ परिष्वज्य विचेतनं पति,
प्रिया हि या मुञ्चति देहमात्मनः ।
कृत्वापि पापं शतसंख्यमप्यसौ,
पतिं गृहीत्वा सुरलोकमाप्नुयात् ।।

—हितोपदेश ३।३०

सतीप्रथा के समर्थकों का कहना है कि जो स्त्री अपने मरे हुए भर्ता को गोद में लेकर अपने शरीर को छोड़ती (सती हो जाती) है, वह सौ पाप करके भी पति सहित स्वर्गलोक में जाती है ।

२. बादशाह जहाँगीर ने आदेश दिया था कि जिस विधवा के पुत्र अथवा कन्या हो, वह मृतपति के साथ जलकर सती नहीं हो सकती ।

३. लार्ड विलियम बेंटिक के शासनकाल में सन् १८२९ के समय राजा राममोहनराय के प्रयास से सती-प्रथा कानूनन बन्द कर दी गई ।

—टॉड, राजस्थान पृष्ठ ३३२

१० कुभार्या

१. वरं न दारा न कुदारदाराः। —चाणक्यनीति ६।१३

स्त्री का न मिलना अच्छा है, किन्तु दुष्ट स्त्री का मिलना अच्छा नहीं।

२. कुदारदारैश्च कुतो गृहे रतिः ? —चाणक्यनीति ६।१४

दुष्ट स्त्री के मिल जाने से घर में आनन्द कहाँ ?

३. झगड़ालू और चिढ़नेवाली पत्नी से अच्छा है जंगल में रहना। —पु० बा० नविश्ते (नीतिवचन) २२।१९

४. झड़ी के दिन पानी का लगातार टपकना और झगड़ालू स्त्री-दोनों एक से हैं।
—पु० बा० नविश्ते (नीतिवचन) २७।१५

५. पुरुष विचारा क्या करे, जा घर नार कुहाड़,
वो सीवै दस आंगलां, वा फाड़े गज च्यार।

६. मैं पूरब को जाता हूं तो, वह पश्चिम को पांव उठाती है,
मैं नीम जिसे कहता हूँ, वह आम उसे बतलाती है।
पैरों की जूती पगड़ी पर, अपना अधिकार जमाती है,
अर्धाङ्गिनी काहे की है, सर्वाङ्गिनी बनना चाहती है॥

७. आः पाकं न करोषि पापिनि कथं ? पापी त्वदीयः पिता,
रण्डे ! जल्पसि किं ? तवैव जननी रण्डा त्वदीया स्वसा।

निर्गच्छ त्वरितं गृहाद्-बहिरतो नेदं त्वदीयं गृहं,
हा ! हा ! नाथ ! ममाद्य देहि मरणं जारस्य भाग्योदयः।
—सुभाषित-रत्नभाण्डागार

पति—पापिनि ! रसोई क्यों नहीं बनाती ?

स्त्री—पापी तेरा बाप है।

पति—रण्डे ! मेरे सामने बोलती है ?

स्त्री--मैं नहीं, तेरी माँ और बहन रण्डाएँ हैं।

पति—निकल घर से बाहर !

स्त्री–तेरा घर है ही कहाँ ? जो तू मुझे घर से निकाले। ऐसी बातें सुनकर पति कहता है–हे नाथ ! मुझे मरण दे दे–यहाँ तो जार के ही भाग्य का उदय है।

८. वाचाला कलहप्रिया कुटिलधी क्रोधान्विता निर्दया,
मूर्खा मर्मविभाषिणी च कृपणा मायायुता लोभिनी।
भर्तृक्रोधकरा कलङ्ककलिता स्वात्मंभरी सर्वदा,
दूरूपा गुरुदेव - भक्तिविकला भार्या भवेत् पापतः॥
—सुभाषित-रत्नभाण्डागार

वाचाल, कलहप्रेमी, वक्रबुद्धिवाली, क्रोध करनेवाली, निर्दय, मूर्ख, मर्म की बात कहनेवाली, कृपण, कपट करनेवाली, लोभ-युक्त, पति को कुपित करनेवाली, कलङ्कित, सदा पेट भरने में तत्पर, कुरूप, गुरुभक्ति शून्य—ऐसी कुभार्या पाप के उदय से मिलती हैं।

११ कुलटा स्त्री

१. अन्नं मणेण चिंतेन्ति, वाया अन्नं च कम्मुणा अन्नं ।
—सूत्रकृतांग ४।१।२४

दुष्ट स्त्रियाँ मन से किसी एक को याद करती हैं, बात किसी और से ही करती हैं तथा शरीर किसी अन्य को ही सौंपती हैं ।

२. जल्पन्ति सार्धमन्येन, पश्यन्त्यन्यं सविभ्रमम् ।
हृदये चिन्तयत्यन्यं, प्रियो को नाम योषिताम् ।
—भर्तृहरि-शृंगारशतक ६१

बोलती अन्य के साथ हैं, विकारदृष्टि से देखती अन्य को हैं और मन से चिंतन अन्य का करती है । स्त्रियों के लिए प्यारा है ही कौन ?

३. ऊंदर सूं उदड़के, अपड़ के हर बस आणे,
डोरी दीठां डरै, साँप दे सुवै शिराणे ।
आंगण घर अडवडै, चढै डूंगर-शिर चड़वड़,
पूछ्यां पकड़ै मौन, हसै स्वइच्छा हड़हड़ ।
जार सूं प्यार मांडै जुगत, कंथ हुतैं कलहकारिणी,
चित मांह **दीप** समझो, चतुर! चरित एह व्यभिचारिणी ॥१॥
निरखै अवरां नयण, वयणं अवरां बतलावै,
अवरां सूं अनुराग, चित्त अवरां ललचावै ।

दै अवरां शिर दोष, रोष अवरां सूं राखै,
अवरां सूँ अभिलाख, भाख मुख अवरां भाखै।
ऋतु केल-मेल अवरां करै, ध्यान अवर मन धारिणी।
चित मांह **दीप** समझो, चतुर! चरित एह व्यभिचारिणी ॥२॥

जाति जुड़ै जिहां जाय, जाय जिहाँ रात जगावै,
बसै सकल के बीच, गीत निरलज्जा गावै।
सरवर करण सिनान, जाय कारण दूरे जल,
घणो मांहि रहै गहर, छयल देखी खेलै छल।
व्यापार करै बाजार बिच, वचने सरम विसारिणी,
चित्त मांह **दीप** समझो, चतुर ! चरित एह व्यभिचारिणी ॥३॥

४. दुर्दिवसे घनतिमिरे, दुःसंचारासु नगरवीथीसु ।
पत्युर्विदेशगमने, परमसुखं जघनचपलायाः ॥

—पंचतन्त्र १।१८४

मेघ से आच्छादित दिन में, शहर की गुप्त गलियों में तथा पति का विदेश गमन होने पर कुलटा स्त्री को परम सुख होता है।

५. भर्ता यद्यपि नीतिशास्त्रनिपुणो विद्वान् कुलीनो युवा,
दाता कर्णसमः प्रसिद्धविभवः श्रृंगारदीक्षागुरुः।
स्वप्राणाधिककल्पिता स्ववनिता स्नेहेन संलालिता,
तं कान्तं प्रविहाय सैव युवतिर्जारं पतिं वाञ्छति।

—सुभाषितरत्नभाण्डागार

पति नीतिशास्त्रज्ञ है, विद्वान् है, कुलवान और जवान है। कर्ण राजा के समान दाता है। धनवान है और श्रृंगार की दीक्षा में गुरुतुल्य है तथा जिसने अपनी स्त्री को प्राणों से भी अधिक

मानकर प्रेमपूर्वक उसका लालन-पालन किया है। उस पति को छोड़कर कुलटा स्त्री जारपति की इच्छा करती है।

६. व्यभिचारात्तु भर्तुः स्त्री, लोके प्राप्नोति निन्द्यताम्।
श्रृगाल - योनिं प्राप्नोति, पापरोगैश्च पीड्यते।

—मनुस्मृति ६।३०

परपुरुष से व्यभिचार करनेवाली स्त्री संसार में निन्दित होती है और मरकर श्रृगालयोनि में जाती है तथा कुष्ठादि रोगों से पीड़ित होती है।

१२ स्त्री-स्वभाव

१. स्त्रीचित्तमहो विचित्रमिति !

स्त्रियों का चित्त विचित्र होता है ।

२. स्त्रियाँ महान आघातों को तो क्षमा कर देती हैं, किन्तु तुच्छ चोटों को नहीं भूलतीं । —हालीवर्टन

३. पुरुष अक्सर एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देते हैं । स्त्रियाँ दोनों कानों से सुनती हैं और फिर मुँह से निकालती हैं ।

४. नहि नार्यो विना इर्ष्यया ।

स्त्रियाँ प्रायः ईर्ष्या बिना होती ही नहीं ।

५. जातापत्या पतिं द्वेष्टि ।

सन्तान होने के बाद स्त्री पति से द्वेष करने लग जाती है ।

६. मृग मकोड़ो हरियर-काठी,
इनतें त्रियन की गति माठी ।
के तो अपनो जान्यों करिहैं,
नहिं तो प्राणघात करि मरिहैं ॥

७. भग्नभण्डे यथा नीरं, क्षीरं श्वानोदरे यथा ।
गुह्यवार्ता तथा स्त्रीणां, चिरकाले न तिष्ठति ॥

फूटे वर्तन में जल और कुत्ते के पेट में खीर की तरह स्त्री के हृदय में गुप्त बात अधिक समय तक नहीं ठहर सकती।

८. कोहि वित्तं रहस्यं वा, स्त्रीषु शक्नोति गूहितुम्।

धन और गुप्त बात स्त्रियों में कौन गुप्त रख सकता है ?

९. स्त्रीणां द्विगुणमाहारो, लज्जा चापि चतुर्गुणा।
साहसं षड्गुणं प्रोक्तं, कामश्चाष्टगुणः स्मृतः॥

—चाणक्यनीति १।१७

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का आहार दुगुना, लज्जा चारगुनी, साहस छःगुना और कामविकार आठगुना माना गया है।

१०. स्थानं नास्ति क्षणं नास्ति, नास्ति प्रार्थयिता नरः।
तेन नारद! नारीणां सतीत्वमुपजायते॥

—हितोपदेश १।१२३

स्थान, समय और प्रार्थना करनेवाले पुरुष के न होने पर ही स्त्रियों का सतीत्व होता है।

११. यदिस्याच्छीतलो वह्नि—श्चन्द्रमादहनात्मकः।
सुस्वादः सागरः स्त्रीणां, तत्सतीत्वं प्रजायते।

—पञ्चतन्त्र १।२८१

यदि अग्नि शीतल हो जाय, चन्द्रमा अग्नितुल्य हो जाय और समुद्र मीठा हो जाय, तब कहीं स्त्रियों में सतीत्व हो सकता है, अन्यथा नहीं।

१३ स्त्री के दोष

१. अनृतं, साहसं, माया, मूर्खत्वमतिलोभता ।
अशौचत्वं निर्दयत्वं, स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ।।

—चाणक्यनीति २।१

असत्य, दुःसाहस, छल, मूर्खता, अतिलोभ, अपवित्रता और निर्दयता—ये दोष स्त्रियों में स्वभाव से ही होते हैं ।

२. कुलीना रूपवत्यश्च, नाथवत्यश्च योषितः ।
मर्यादासु न तिष्ठन्ति, स दोषः स्त्रीषु नारद !

कुलवती, रूपवती और पतिमती होकर भी यदि स्त्रियां मर्यादा में न रहें तो—यह उनमें बड़ा भारी दोष है ।

३. चंचल चपला चोफला, बहुभोजना सरोष ।
तुरियाँ एता पाँच गुण, तिरियां एता दोष ।।

४. राजा चञ्चल होय, चूंप कर शहर बसावै ।
पंडित चञ्चल होय, सभा बिच ज्ञान सुणावै ।
हाथी चञ्चल होय, सूंड सू चमर ढुलावै ।
घोड़ो चञ्चल होय, फेर मैदान दिखावै ।

ए च्यारूं चञ्चल भला, (सो) राजा पंडित गज तुरी।
बेताल कहै विक्रम सुनो, नारी चञ्चल अति बुरी॥

५. तिरिया में गुण तीन हैं, अवगुण भर्‌या अनेक।
मंगल गावे सुत जणैं, रोट्यां देवे सेक॥

१४ स्त्री के लिए निकृष्ट उपमाएं

१. दाराः परभवकारा । —सूक्त-मुक्तावली

स्त्रियां परभव में विविध दु.खरूप कैद को देने वाली हैं ।

२. पंकभूयाओ इत्थिओ । —उत्तराध्ययन २।१७

स्त्रियां कीचड़ के समान हैं ।

३. स्त्रियो हि मूलं निधनस्य पुंसः, स्त्रियो हि मूलं व्यसनस्य पुंसः ।
स्त्रियो हि मूलं नरकस्य पुंसः, स्त्रियो हि मूलं कलहस्य पुंसः ॥

पुरुषों के लिए मृत्यु का, दुःख का, नरक का और आपसी झगड़े का मूल कारण स्त्रियां ही होती हैं ।

४. अधरेष्वमृतं नितम्बिनीनां, हृदि हालाहलमेव केवलम् ।

स्त्रियों के केवल होठों में अमृत है, हृदय में तो हलाहल (जहर) भरा है ।

५. द्वारं किमेकं नरकस्यः ? नारी । —शंकरप्रश्नोत्तरी ३

नरक का एक ही द्वार कौन-सा है ? स्त्री ।

६. नागिनी बिच्छु जहर भख, मरै नहीं मर जाय ।
दीठां दुख नहीं उपजै, मुवां नरक नहिं जाय ।
मुवां नरक नहिं जाय, तुपक फिर तीर कटारी ।
कामिनी इन तैं अधिक, लगत गति अजब छटारी ।

याद कियां चढ़ै ज़हर, लहर बाधै मनमथरी।
ज्ञान गमावरणहार, अहित संजम - सत - अथरी।
नरक री नाव निश्चय निठुर, रुलत वर्ष असंख लख।
इन सम वैरन है न कित, नागिनी बिच्छु ज़हर भख।

—भाषाश्लोकसागर

७. का श्रृङ्खला प्राणभृतां ? हि नारी। —शंकरप्रश्नोत्तरी १५

जीवों के लिए श्रृङ्खला बेड़ी क्या है ? नारी।

८. न अन्नो एरिसो अरि अत्थित्ति नारिओ।

—बृहत्कल्प उ० ४, निर्युक्ति

नारी जैसा दूसरा कोई अरि-वैरी नहीं है अतएव यह नारी कहलाती है।

९. नद्यश्च नार्यश्च सदृग्स्वभावा,
स्तुल्यानि कूलानि कुलानि तासाम्।
तोयैश्च दोषैश्च निपातयन्ति,
नद्यो हि कूलानि कुलानि नार्यः॥

—पञ्चतंत्र १।२२३

नदियां और नारियां समान स्वभाववाली हैं। नदियों के दोनों तरफ कूल (तट) एवं नारियों के कुल (ससुराल तथा पीहर) होते हैं। नदियां जल द्वारा कूलों को नष्ट करती हैं और नारियां निज दुर्गुणों द्वारा कुलों को नीचा दिखाती है।

१०. जहा नई वेतरणी, दुत्तरा इह संमया।
एवं लोगंमि नारीओ, दुत्तरा य नई मया॥

—सूत्रकृतांग ३।४।१६

जैसे-वैतरणी नदी को तैरना मुश्किल है। ऐसे ही संसार में स्त्री-रूप नदी भी दुस्तर मानी गई है।

११. संसार ! तव निस्तार-पदवी न दवीयसी।
अन्तरा दुस्तरा नस्यु-र्यदि रे ! मदिरेक्षणाः ॥

—भर्तृहरि-शृंगारशतक ६८

रे संसार ! तुझे तरण का मार्ग दूर नहीं। यदि दुस्तर-स्त्रियां बीच में न हों।

१२. प्रमदा मदिरा इन्दिरा, त्रिविधा सुरा-समान।
देखत पीवत संग्रहत, करत प्रमत्त ,जहान ॥

१३. दर्शनाद्धरते चित्तं, स्पर्शनाद् ग्रसते बलम्।
संगमाद् ग्रसते वीर्यं, नारी प्रत्यक्षराक्षसी ॥

स्त्री दर्शन से मन को खींचती है, स्पर्श से बल को और संगम से वीर्य को खींचती है, अतः यह प्रत्यक्ष राक्षसी है।

१४. नो रक्खसीसु गिज्झेज्जा, गंडवच्छासु ऽणेगचित्तासु।
जाओ पुरिसं पलोभित्ता, खेल्लंति जहा व दासेहिं ॥

—उत्तराध्ययन ८।१८

जिनकी छाती में दो मांस की गाठें हैं, जिनका चित्त अनेक पुरुषों में आसक्त है तथा जो पुरुषों को प्रलोभित करके फिर उनके साथ गुलामों की तरह खेलती हैं—ऐसी राक्षसी स्त्रियों में गृद्ध नहीं होना चाहिए।

१५. वज्जए इत्थी विसलित्तं व कंटगं नच्चा।

—सूत्रकृतांग ४।१।११

विष-लिप्त कांटे के समान जान कर स्त्री का त्याग कर देना चाहिए ।

१६. इत्थीवसंगया बाला, जिणसासणपरम्मुहा ।

—सूत्रकृतांग ३।४।६

स्त्री के वशीभूत अज्ञानी जिनशासन से विमुख हो जाते हैं ।

१५ स्त्री की निरंकुशता

१. किं किं करोति नहि निर्गलतां गता स्त्री ?

स्वच्छन्दता प्राप्त होने पर स्त्री क्या-क्या अनर्थ नहीं कर डालती ?

२. स्त्री पुंवच्च प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम् ।

—भोजप्रबन्ध ३०४

जिस घर में स्त्री पुरुष के समान प्रभाव दिखाने लगे तो उस घर को नष्ट हुआ समझो !

३. महादेव सो मर्द, नार किण भांत नचायो ।
गोप्यां मिल गोविंद, रासमिस जेम रमायो ।।
नाथी मालण निसंक, धारा नों नाथ धुजायो ।
सोनारी श्वसुर नै, देवछल साच दिखायो ।।
सुर-इन्द-चन्द नागेंद सब, तीन लोक जीता त्रिया ।
कामणी एम दीपो कहै, कवि, पंडित खंडित किया ।।

—दीप कवि

४. चतुरः सृजता पूर्व-मुपायांस्तेन वेधसा ।
नः सृष्टः पञ्चमः कोपि, गृह्यन्ते येन योषितः ।।

—चंदचरित्र, पृष्ठ ६१

विधाता ने जगत का निग्रह करने के लिए शाम-दाम-दण्ड-भेद—ये चार उपाय बनाये, किन्तु जिससे स्त्रियां पकड़ी जायँ—वह पाँचवाँ उपाय नहीं बनाया ।

५. बाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत्, पाणिग्राहस्य यौवने ।
पुत्राणां भर्त्तरि प्रेते, न भजेत् स्त्री स्वतन्त्रताम् ।।

—मनुस्मृति ५।१४८

स्त्री को बचपन में पिता के आधीन, यौवन में पति के आधीन और पति का मरण होने के बाद पुत्र के आधीन रहना चाहिए, किन्तु उसे स्वतन्त्र होकर कभी नहीं रहना चाहिए।

६. अपत्यपोषणे, गृहकर्मणि, शरीरसंस्कारे,
शयनावसरे, स्त्रीणां, स्वातन्त्र्यं नान्यत्र ।

नीतिवाक्यामृत २४।३६

संतान-पोषण में, घर के काम में, शरीर का श्रृंगार करने में और सोने के समय स्त्रियों को स्वतन्त्रता है, दूसरी जगह नहीं।

१६ स्त्रियों की सबलता

१. नूनं हि ते कविवरा विपरीत बोधा,
ये नित्यमाहुरबला इति कामिनीनाम्।
याभिर्विलोलतरतारकदृष्टिपातैः,
शक्रादयोपि विजितास्त्वबलाः कथं ताः?

—भर्तृहरि-शृंगारशतक १०

निश्चय ही वे कविलोग विपरीत ज्ञानवाले हैं, जो स्त्रियों को अबला कहते हैं। जिन्होंने अपने चंचल दृष्टिपात से इन्द्रादि देवों को भी जीत लिया, वे स्त्रियां अबला कैसे हो सकती हैं?

२. संमोहयन्ति मदयन्ति विडम्बयन्ति,
निर्भर्त्सयन्ति रमयन्ति विषादयन्ति॥
एताः प्रविश्य सदयं हृदयं नराणां,
किं नाम वामनयना न समाचरन्ति?

—भर्तृहरि-शृंगारशतक २१

कोमलहृदय से मोहित करती हैं, उन्मत्त करती हैं, विडम्बित तथा अपमानित करती हैं। उसके साथ खेलती हैं एवं उसे खिन्न करती हैं। ये स्त्रियां पुरुषों के हृदय में घुसकर क्या कर्म नही करतीं?

३. हूं छूं देवी चंडिका, माथे मोटी हंडिका।
के तो करूँ आशा के व्यास, के कात्यो पींज्यो करूँ कपास॥

४. बिजली से वनिता कहीं, अधिक शक्ति का पात्र।
उसका स्पर्शन खींचता, इसका दर्शन मात्र ॥

—चन्दनमान

५. सपना केरी सुन्दरी, ले चाली अंधकूप।
'खेम' खलक क्या है गति, जाहि लागी सद्रूप ॥

६. शम्बरस्य च माया, या माया न मुचेरपि।
बलेः कुम्भीनसस्यैव, सर्वास्ता योषितो विदुः ॥

—पञ्चतन्त्र १।१६४

शम्बर, नमुचि, बलि एवं कुभीनस की सभी माया स्त्रियां जानती हैं।

७. स्त्रियश्चरित्रं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः!

स्त्रियों के चरित्र देवता भी नहीं जान सकते, फिर मनुष्य तो जाने ही कहां से!

८. तिरिया-चरित न जाणै कोय, मिनख मार कर सती होय।

—राजस्थानी कहावत

९. नारी तणां चरित्रनीं, कोई न पामें बात।
फकीर गमाई मेखली, भमियों सारी रात ॥

१०. हूं तनैं पूजूँ सोवनफूली, मरो सास नें दो नणदूली!
हूं तनै पूजूँ ऊँटकंटाला, मरो सास नें दोनुं शाला ॥
देख वंदी का चाला, सिर कतर्‌या मुँह काला।
देख वंदे की फेरी, आ अम्मा तेरी क मेरी ॥

१ सुस्त्री-प्रशंसा

१. सर्वंसहत्वं माधुर्य-मार्जवं सुस्त्रियां गुणाः ।

—धर्मकल्पद्रुम

सहिष्णुता, मधुरता और सरलता ये सुस्त्रियों के गुण हैं ।

२. ण भूसणं भूसयते सरीरं, विभूसणं सील हिरी य इत्थिए !

—बृहत्कल्पभाष्य ४।१८

नारी का आभूषण शील और लज्जा हैं । बाह्य आभूषण उसकी शोभा नहीं बढ़ा सकते ।

३. रूप-यौवन-माधुर्यं, स्त्रीणां बलमनुत्तमम् !

—चाणक्यनीति ७/१०

सुन्दरता, यौवन और वचन की मधुरता—ये स्त्रियों के उत्कृष्ट बल हैं ।

४. पति के लिए चरित्र, संतान के लिए ममता, समाज के लिए शील, विश्व के लिए दया तथा जीव-मात्र के लिए करुणा संजोनेवाली महाप्रकृति का नाम नारी है ।

—रमणमहर्षि

५. संपूर्ण महान वस्तुओं के मूल में नारी का वास होता है ।

—लामार टाइन

६. सृजन-आदि से विश्व नारी की गोद में क्रीड़ा करता आया

है। उसकी मुस्कान में महानिर्माण के स्वप्न है और भ्रूभंग में प्रलय की विनाशकारी घटनाएँ। —नजिन

७. स्त्रियः श्रियश्च गेहेषु, न विशेषोस्ति कश्चन।

—मनुस्मृति ९/२६

स्त्री और-लक्ष्मी इन दोनों में कोई विशेष नही हैं—अर्थात् दोनों समान रूप से घर की शोभा बढ़ानेवाली हैं।

८. स्त्रियों की आँखों में कानून से भी अधिक शक्ति होती है और किसी भी तर्क से अधिक उनके आंसू प्रभावशाली होते हैं।

९. जीवन में जो कुछ पवित्र और धार्मिक है, स्त्रियां उसकी विशेष संरक्षिकायें हैं। —गांधी

१०. कंटकपूर्ण शाखा को फूल सुन्दर बना देते हैं और गरीब से गरीब घर को लज्जावती युवती स्वर्ग बना देती है।

—गोल्डस्मिथ

११. अपना घर और साध्वी स्त्री, सोना और मोतियों के बराबर हैं। —गेटे

१२. जिसके घर में भली स्त्री है, उस पर कोई ऐसी विपत्ति नही आ सकती, जिसे वह सह नहीं सके।

—स्पेन लोकोक्ति

१३. प्रेम कैसे किया जाता है—इसको केवल स्त्रियां ही जान सकती हैं। —मोपासा

१४. स्त्रियां युवावस्था में पत्नियों का, मध्य-अवस्था में सह-

चारिणियों का और वृद्धावस्था में नर्सों का काम देती हैं।
—बेकन

१५. अगर स्त्रियां न हों तो पुरुषों की बाल्य-अवस्था असहाय एवं जवानी आनन्दविहीन हो जाय तथा बुढ़ापे में कोई आश्वासन देनेवाला न हो। —जाँय (पाश्चात्य विद्वान्)

१६. संसार में एक नारी को जो कुछ करना है, वह पुत्री, बहन, पत्नी के पावन-कर्तव्यों के अन्तर्गत हो जाता है। —स्टील

१८ स्त्री-सम्मान

१. नार्यस्तु यत्र पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥५६॥
शोचन्ति जामयो यत्र, विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।
न शोचन्ति तु यत्रैता, वर्धते तद्धि सर्वदा ॥५७॥
संतुष्टो भार्यया भर्ता, भर्त्रा भार्या तथैव च ।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं, कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् ॥६०॥

—मनुस्मृति० ३

जिस घर में स्त्रियों का सम्मान होता है, वहां देवता रमण करते हैं। जहां उनका सम्मान नहीं होता, वहाँ सभी क्रियायें शून्य होती हैं।

जिस कुल में बहन-बेटियाँ दुःख पाती हैं, वह कुल नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। जिस कुल में वे प्रसन्न रहती हैं, वह कुल सदा बढ़ता रहता है।

जिस कुल में भार्या से भर्ता और भर्ता से भार्या सदा सन्तुष्ट रहती है, वहाँ निश्चय ही सदा स्थायी - कल्याण का निवास होता है।

२. अल्लाह कहता है—तुम औरतों की इज्जत करो! वे तुम्हारी माँ हैं, बेटियाँ और चाचियाँ हैं। —मुहम्मद

३. जो अपने घर आता है वह मेहमान होता है, अतः स्त्री भी मेहमान है। —प्रेमचन्द

४. स्थितोऽसि योषितां गर्भे, ताभिरेवविवर्द्धितः।
अहो ! कृतध्नता मूर्ख ! कथं ता एव निन्दसि ॥

स्त्रियों ने तुझे गर्भ में रखा और उन्होंने ही पाल-पोष कर बड़ा किया। अरे मूर्ख ! तेरी कितनी कृतघ्नता है, जो तू उन स्त्रियों की निन्दा करता है।

५. राधा-कृष्णः स भगवान्, न कृष्णो भगवान् स्वयम्।

राधायुक्त कृष्ण ही भगवान् हैं, अकेले कृष्ण नहीं। (इस पौराणिक-कथन में राधारूप स्त्री का महत्व दिखाया गया है।)

६. व्याकरणकारों ने भी पूज्य मानकर स्त्रियों को प्रथम स्थान दिया है। जैसे—सीता-राम, राधा-कृष्ण, गौरी-शंकर, माता-पिता आदि-आदि। —धनमुनि

१९ स्त्री-नाश के कारण

१. पानं दुर्जनसंसर्गः, पत्या च विरहोऽटनम् ।
स्वप्नोऽन्यगेहवासश्च, नारी-संदूषणानि षट् ।।

—मनुस्मृति ९/१३

(१) मद्यपान, (२) दुष्ट का संसर्ग, (३) पति का विरह, (४) घर-घर भटकना, (५) बिना वक्त सोना, (६) परघर-निवास—ये छः बातें स्त्रियों को दूषित करनेवाली हैं।

२. नारी सर्वनाश के चार कारण है :—

१. सहशिक्षण २. नृत्य ३. तलाक ४. विलासिता ।

३. लन्दन की एक कम्पनी के डायरेक्टर 'श्री लो' ने महिला आंकड़ा-विशेषज्ञ की रिपोर्ट के हिसाब से यह बताया कि १५ वर्ष से ७५ वर्ष तक की आयु में अर्थात् ६० वर्षों के अन्दर एक महिला शृंगार एवं बनाव-ठनाव के लिए चार वर्ष, तीन महीने, २० दिन जितना समय तो दर्पण देखने में लगा देती हैं। उन्होंने ऑफिस टाइम में स्त्रियों के शृंगार करने पर प्रतिबन्ध लगाया है, जिससे कम्पनी को ११ लाख पौंड का लाभ होगा।

—नवभारतटाइम्स १९ फरवरी १९६६

४. तीतर-वरणी बादली, विधवा काली-रेख ।
वा बरसै वा घर करै, इसमें मीन न मेख ।।
—राजस्थानी दोहा

५. भ्रमन् संपूज्यते राजा, भ्रमन् संपूज्यते द्विजः ।
भ्रमन् संपूज्यते योगी, स्त्री भ्रमन्ती विनश्यति ।।
—चाणक्यनीति ६/४

राजा, ब्राह्मण और योगी ये देश-विदेश में भ्रमण करते हुए पूजा-सत्कार को प्राप्त होते हैं, किन्तु भ्रमण करती हुई स्त्री का नाश होता है।

६. नारीणां पितुरावासे, नृणां च श्वसुरालये ।
एक स्थाने यतीनांचा-ऽऽवासो न श्रेयसे भवेत् ।।

स्त्रियों का पिता के घर, पुरुषों का ससुराल में और मुनियों का एक ही स्थान में रहना अच्छा नहीं होता।

स्त्रियों के सोलह-शृंगारः-

करि अंजन मंजन चन्दन चीर,
बिहूं कर कङ्कण कुण्डल जोरी ।
फूल की माल झबक्कत भाल,
तिलक्क तंबोल अलक्खरी भोरी ।
चमके घुघरी चमके दुलरी,
नकवेसर नेउर कुन्ज की डोरी ।
'नप मान' कहै चित राख सुनो,
यह सोलह शृंगार बनावत गोरी ।।

२०

स्त्री-धनं

१ अध्यग्न्यध्यावाहनिकं, दत्तं च प्रीतिकर्मणि ।
भ्रातृ-मातृ-पितृप्राप्तं, षड्विधं स्त्रीधनं स्मृतम् ।।

—मनुस्मृति ९।१९४

१. अध्यग्नि—अग्निकुण्ड के समीप दिया हुआ ।

२. अध्यावाहनिक—पति के घर जाते समय दिया हुआ दहेज आदि ।

३. प्रीतिनिमित्तक— प्रीतिकर्म में पति द्वारा दिया हुआ ।

४. भ्राता द्वारा प्राप्त ।

५. माता द्वारा प्राप्त ।

६. पिता द्वारा प्राप्त ।

यह छः प्रकार का स्त्रीधन माना गया है ।

२१ स्त्री के विषय में कहावतें

१ सोपारी बांकड़ी ने वायड़ी रांकड़ी।
२ वायड़ी ना पेट मां छोकरूं रहे पण बात न रहे।
३ काम ते हाथे वायड़ी ते साथे।
४ वायड़ी ने मोढ़े सवामण नुं तालुं।
५ कालजा सेके ते नार नहिं, नहार।
६ स्त्री कांई कुंभारनुं हाँल्लु छे जे बदलाय !
७ एवी भोली कोण होय जे पारकाधणीं ने पाछल चूड़ो भांगे।
८ पहेलां बहू खाती नथी नें पछी बहू धराती नथी।
९ दक्षिणनी नारी, सोल हाथ नीं साड़ी पण अर्धो टांग उघाड़ी।
१० मांस खाई हाडका कोटे न बंधाय। देशजीती दरवाजा डोके न बंधाय। सौ स्त्रीवाला छे छतां वायड़ी ने बगलमारी न फराय।
११ सासरानी शूली सारी नें पीयर नीं पालखी भूंडी।

—गुजराती कहावतें

१ सासरा री सेल 'र' पीहर रा बोल।
२ तिरिया तेरा मरद अठारा।
३ तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै ने दूजी बार।
४ नीप्यो-धोयो आंगणो, पहरी-ओढ़ी नार।

५ खावै-पीवै खसम को, गीत गावै बीरे का ।

६ शोक माटीरी ही खोटी, सेज री माखी ही बुरी ।

७ रांडां रोवो क्यूं हो ? मांटी मरग्या ।
जीवां हां नी ! जद ही तो रोवां हां ।।

—राजस्थानी कहावतें

२२ वेश्या–निन्दा

१ वैश्याऽसौमदनज्वाला, कामेन्धनसमेधिता।
कामिभिर्यत्र हूयन्ते, यौवनानि धनानि च॥

—भर्तृहरि-शृंगारशतक-६०

यह वेश्या सुन्दरता रूप ईंधन से जलती हुई प्रचण्ड कामाग्नि है। कामी पुरुष इसमें अपने यौवन एवं धन की आहुति दे रहे हैं।

२ वित्तेन वेत्ति वेश्या, स्मरसदृशं कुष्ठिनं जराजीर्णम्।
वित्तं विनापि वेत्ति, स्मरसदृशं कुष्ठिनं जराजीर्णम्॥

धनी पुरुष चाहे जरा-वृद्धावस्था से जीर्ण हो और कुष्ठी हो तो भी वेश्या उसे कामदेव के तुल्य मानती है और निर्धन पुरुष चाहे कामदेव के तुल्य सुन्दर हो, फिर भी वेश्या उसे जरा-जीर्ण एवं कुष्ठी-तुल्य मानती है।

३ धन-कारन पापिनि प्रीत करे, नहीं तोरत नेह जरा तिनको।
लव चाखत नीचन के मुख की, शुचिता सब जाय छिये जिनको।
मद-मांस बजारन खाय सदा, अंधले विसनी न करें घिनको।
गनिका संग जे सठ लीन भए, धिक है-धिक है-धिक है-तिनको॥

—भूधरदास

४ वेश्या श्मशान-सुमना इव वर्जनीया।

श्मशान-घाट के फूलों की तरह वेश्या सर्वथा छोड़ने योग्य है।

५ न तो कोई स्त्री कुकर्म करे और न कोई पुरुष ! न तो वेश्यापन की कमाई घर लाना और न कुत्ते की कमाई; 'यहोवा' की दृष्टि में ये दोनों कमाई घृणित हैं।

—पु. बा. तोरा. व्यवस्था विवरण २३।१७-१८

६ झीनी-झीनी ओढ़ साड़ी मारग में रहे ठाड़ी,
ठगत ठगारी पै चलावै चित चातर है।
ऊंची-सी अटारी तामें पाप की पिटारी खोले,
काम की कटारी ले चलावे दृग कातर है।
नीच कूं मान देत नीचन सो राखे हेत;
नीचन लपटाय लेत दौलत की खातर है।
सदा मद-मांस खात यासों नहिं कीजै बात,
कहने की पातर या जात की कुपातर है।।

—भाषाश्लोकसागर

७ न चरेज्ज बेस-सामंते। —दशवैकालिक ५।१।१६

विवेकी वेश्या-स्थान के आसपास न जाये।

८ कः प्राज्ञो वाञ्छति स्नेहं, वेश्यासु सिकतासु च।

—कथासरित्सागर

कोई भी विद्वान वेश्या और बालुरेत में स्नेह की वांछा नहीं रखता। इनमें स्नेह-प्रेम एवं चिकनाई है ही नहीं।

९ वेश्यागमन से मनुष्य टुकड़े-टुकड़े के लिए मोहताज हो जाता है। —नविश्ते. (नीतिवचन) ६।२६

१० **पण्डित और वेश्या का सम्वाद :—**

एके कोउ पंडित हो, विद्यागुण मंडित हो;
डस्यो काम कारी गयो गनिका-निवास में।

उन किन्हों ऋतुमान सबे रस लूट लीन्हों,
भीनो सुख पाय निशा बीती वो हुलास में।
भयो जब भोर दृग मोर मुसकाय बोले,
चले अब नाथ! फिर मिलेंगे कहां समे?
जोपै विद्या-स्मृति,वेद,पुराण सब सच्चे हैं तो,
तुम्हारी हमारी भेंट कुंभीपाक-वास में॥ १॥

वृन्दा ऋषिवृन्द सबे सेवत हैं वृन्द सखी,
रंभादि नारद को विहार जो आकाश में।
विश्वामित्र कीन्हों कछु हेत काहु वश्यन तें,
शृंगी-ऋषि चित्रता-विचित्रता प्रकाश में।
मद काम लागो रंग कामकुंडला के संग,
विक्रम ही भोज के संयोग कालिदास में।
ऐसी ही अनूठी झूठी बात न बनात हो तो,
इतने में कौन गयो कुंभीपाकवास में?॥ २॥

—भाषाश्लोकसागर

११ वेश्यावृत्ति वासना से उत्पन्न होने वाला दुर्गुण नहीं अपितु निर्धनता एवं लोभ से उत्पन्न दुर्व्यसन है।

—कैनेथ वालसर

२३ लन्दन में सवालाख वेश्याएं

१. सन् १९६४ में पुलिस कमिश्नर ने ६० हजार से ऊपर की रिपोर्ट दी थी। इस पर लोगों ने दावा किया कि यह रिपोर्ट ठीक नहीं है। लन्दन में कम-से-कम सवालाख वेश्याएं हैं। हर बस्ती हर सड़क पर गुप्त-वेश्यालय हैं। कुछ समय पहले सड़कों पर पतित स्त्री-पुरुष खुले आम कुत्सित कार्य किया करते थे। उसे रोकने के लिए 'स्ट्रीट आफेन्सेस' एक्ट पास किया गया। वेश्याएँ मोटरों में घूमती-फिरती कुकर्म करने लगीं। मोटरों पर छापे मारे गए, फिर फ्रेंच आदि भाषा सीखने के अड्डे खुले। वहाँ पढ़ाई के बहाने से दुराचार होने लगा। उसे भी पुलिस ने रोका। तब प्राइवेट क्लब बनने लगे। पुलिस ने क्लबों में कई सदस्यों को रंगे-हाथों पकड़ा। मुकदमे चले, आखिर न्यायालय का निर्णय हुआ कि क्लब प्राइवेट स्थान हैं, वहाँ पुलिस को घुसने का कोई अधिकार नहीं। इस निर्णय पर वेश्याओं ने सड़कों पर निर्लज्जता से नृत्य किए एवं खुशियाँ मनाईं। कई क्लबों में वेश्याएँ नग्न होकर पुरुष के सामने बैठ जाती हैं और कइयों में वे बिल्लियों की-सी वेश-भूषा पहन कर उपस्थित होती हैं। ग्राहक मनपसन्द

बिल्ली लेकर उससे क्रीड़ा करता है। इन क्लबों को उच्च अधिकारियों का संरक्षण प्राप्त है। कीलर-काण्ड के बाद यह बात स्पष्ट हो गई है कि बड़े-बड़े मन्त्री भी इन क्लबों के सदस्य हैं।

—नवभारतटाइम्स २५ जून १९६७

२४ अपरिग्रह

१ सर्वभावेषु मूर्च्छाया-स्त्यागः स्यादपरिग्रहः ।

—त्रिषष्ठि शलाका०

सभी पदार्थों से आसक्ति हटा लेना अपरिग्रह-व्रत है ।

२ अपरिग्गहो अणिच्छो भणिदो । —समयसार २१२

वास्तव में अनिच्छा (इच्छा-मुक्ति) को ही अपरिग्रह कहा है ।

३ अपरिग्रह का सच्चा अर्थ देहभाव नहीं-सा होना है; क्योंकि देह ही मुख्य परिग्रह है । —बिनोवा

४ निममत्तं सुदुक्करं । —उत्तराध्ययन १९।३०

निर्ममत्व-अपरिग्रह-भाव का प्राप्त होना अत्यन्त कठिन है ।

५ अपरिग्रह-स्थैर्ये जन्मकथन्ता-संबोधः । —पातंजलयोग २।३९

अपरिग्रह की भावना स्थिर हो जाने से पूर्वजन्मों का ज्ञान हो जाता है अर्थात् उस व्यक्ति को पता लग जाता हैं कि मेरे पूर्व जन्म किस प्रकार हुए ।

६. मूर्च्छया रहितानां तु, जगदेवापरिग्रहः । —ज्ञानसार

मूर्छारहित पुरुषों के लिए तीनों लोकों का ऐश्वर्य भी अपरिग्रह है ।

७ एकाकी विचरेन्नित्यं, त्यक्त्वा सर्वपरिग्रहम् । —विष्णुस्मृति

समस्त परिग्रह का त्याग करके अनासक्त भाव से सदा अकेला ही बिचरता रहे ।

२५ आवश्यकता

१. देयर इज नो वरच्यु लाइक नेसेसिटी । —शेक्सपीयर

आवश्यकता के सदृश कोई गुण नहीं ।

२. नेसेसिटी इज दी मदर ऑफ इन्वेन्सन । —अंग्रेजी कहावत

आवश्यकता आविष्कार की जननी है ।

३. आवश्यकता क्या नहीं, करवा सकती काम ।
पैरों से करते कई, करके काम तमाम ॥

—दोहा-सन्दोह

लुधियाना निवासी नीकामल जैन पैरों द्वारा स्नान, हजामत एवं भोजन तो करता ही है, किन्तु कैंची से काटकर कागज के चूहे, साँप, मोर आदि भी बनाता है। लेखक ने आँखों से देता है ।

४. आवश्यकता कायर को भी वीर बना देती है । —सेल हास्ट

५. आवश्यकता बहुधा प्रतिभा को प्रोत्साहित करती है ।

—बालजक

६. आवश्यकता उपयोगी कलाओं की जननी है और विलासिता ललित कलाओं की । —शापेन हावर

७. आवश्यकता ही संसार के व्यवहारों की दलाल है ।

—जयशंकर प्रसाद

८. आवश्यकता तर्क के सम्मुख नहीं झुकती। —गेरा बाल्डी

९. नेसेसिटी हैथ नो लॉं। —कामवेल

आवश्यकता के लिए कोई कानून नहीं है।

१०. आवश्यकता अत्याचारियों का तर्क है। यह पराधीनों का मज़हब है। —विलियम पिट

११. आवश्यकताओं को घटाओ! वरना, ये द्रोपदी का चीर बन जायेंगी।

१२. जिस मनुष्य की जितनी कम आवश्कता होती है, वह उतना ही ईश्वर के निकट होता है। —सुकरात

१३. एक हाथ से ताली नहीं बजती। —राजस्थानी कहावत

१४. सूथण राखसी जको मूतण नैं जगां राखसी। ”

१५. अण्डे होंगे तो बच्चे भी होंगे। —हिंदी कहावत

२६ परिग्रह

१. अध्यात्मविदो मूर्च्छां परिग्रहं वर्णयन्ति । —प्रशमरति०

अध्यात्मवेत्ता लोग निश्चय नय से मूर्छा को ही परिग्रह कहते हैं ।

२. मुच्छा परिग्गहो वुत्तो । —दशवैकालिक ६।२१

मूर्च्छा—आसक्ति ही परिग्रह है ।

३. मूर्च्छा परिग्रहः । —तत्त्वार्थसूत्र ७।१२

मूर्च्छा ही परिग्रह है ।

४. परिग्रह का अर्थ है—भविष्य के लिए प्रबन्ध करना । सत्यान्वेषी, प्रेम-धर्म का अनुयायी कल के लिए किसी भी चीज का संग्रह नहीं कर सकता । —गाँधी

५. महिच्छा, पडिबन्धो, लोहप्पा......भारो......कलिकरंडो..... अणत्थो....अगुत्ती....अमुत्ती....तण्हा, आसत्ती, असंतोषो ।
—प्रश्नव्याकरण ५

परिग्रह के अनेक नाम कहे गये हैं—जैसे महेच्छा, प्रतिबन्ध, लोभात्मा, भार, कलिकरंड, अनर्थ, अगुप्ति, तृष्णा, आसक्ति, असंतोष ।

६. आरम्भपूर्वकः परिग्रहः । —सूत्रकृतांगचूर्णि १।२।२

परिग्रह (धनसंग्रह) बिना हिंसा के नहीं होता ।

७. परिग्गहे चेव होंति नियमा, सल्ला दण्डा य गारवा य।
कसाया सन्नाय कामगुण-अण्हया य इंदिय लेसाओ ॥
—प्रश्नव्याकरण ५

मायादि-शल्य, दण्ड, गारव, कषाय, संज्ञा, शब्दादिगुण रूप-आश्रव असंवृत्त-इन्द्रियाँ और अप्रशस्त-लेश्याएं—ये सभी परिग्रह होनेपर अवश्य होते हैं।

८ नत्थि एरिसो पासो पडिबंधो अत्थि। —प्रश्नव्याकरण ५

जगत में इस परिग्रह जैसा जाल और प्रतिबंध दूसरा कोई नहींहै!

९ परिग्रहो हि दुःखाय। —भागवत ११/९/१

परिग्रह दुःख का कारण है।

१० एतदेव एगेसिं महब्भयं भवइ। —आचारांग-५/२

यह परिग्रह ही परिग्रहधारियों को महाभय का कारण होता है।

११ परिग्गहनिविट्ठाणं, वेरं तेसिं पवड्ढई।
—सूत्रकृतांग १।९।३

जो परिग्रह (संग्रह-वृति) में व्यस्त हैं, वे संसार में अपने प्रति वैर ही बढ़ाते हैं।

१२ प्राज्ञस्यापि परिग्रहो ग्रह इव क्लेशाय नाशाय च।
—सूत्रकृतांग टीका १।१।१

प्राज्ञ-पुरुष के लिए भी परिग्रह मगर की तरह क्लेश एवं नाश का कारण है।

१३ किं न क्लेशकरः परिग्रहनदी-पूरः प्रवृद्धि गतः?
—सिंदूरप्रकरण ४१

बढ़ा हुआ परिग्रह-नदी का वेग क्या-क्या क्लेश नही करता?

१४ अणाइयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत-संसारकंतारं अणुपरियट्टंति। जीवा लोहवस-संनिविट्ठा, एसो सो परिग्गहस्स फलविवागो।

—प्रश्नव्याकरण-५

लोभवश परिग्रह-संचय में आसक्त जीव इस अनादि-अनन्त चतुर्गति रूप संसार-जंगल में बहुत लम्बे समय तक परिभ्रमण करते हैं; यह परिग्रह का फल-विपाक है।

१५ चित्तमंतमचित्तं वा, परिगिज्झ किसामवि।
अन्नं वा अणुजाणाई, एवं दुक्खाण मुच्चई॥

—सूत्रकृतांग १।१।२

जो व्यक्ति सजीव या निर्जीव, थोड़ी या अधिक वस्तु को परिग्रह की बुद्धि से रखता है, अथवा दूसरे को रखने की अनुज्ञा देता है, वह दुःख से छुटकारा नहीं पाता।

१६ थावरं जंगमं चेव, धणं धन्नं उवक्खरं।
पचमाणस्स कम्मेहिं, नालं दुक्खाओ मोयणे॥

—उत्तराध्ययन ६।६

धन,धान्य एवं घर का सामान रूप स्थावर तथा दास-दासी, पुत्र-पौत्रादि रूप जंगम—यह दोनों ही प्रकार का परिग्रह कर्मों से दुःख पाते हुए जीवों को दुःखों से मुक्त करने में समर्थ नहीं हैं।

२७ परिग्रह के प्रकार

१ तिविहे परिग्गहे पण्णत्ते, तं जहा—
कम्म-परिग्गहे, सरीर-परिग्गहे, बाहिरभंडमत्त-परिग्गहे ।

—भगवती १८।७

परिग्रह तीन प्रकार का कहा है—(१) कर्म परिग्रह, (२) शरीर परिग्रह, (३) बाह्यभण्डमात्र उपकरणपरिग्रह ।

२ परिग्रह दो प्रकार का भी कहा है—बाह्य और आभ्यन्तर । बाह्यपरिग्रह नव प्रकार है—(१) **क्षेत्र**—खुली जमीन, (२) **वास्तु**—घर-हाट आदि ढ़की जमीन, (३) **हिरण्य**—चांदी, (४) **सुवर्ण**—सोना, (५) **धन**—जवाहिरात या नकद धन, (६) **धान्य**—अनाज, (७) **द्विपद**—दो पैरवाले दास-दासी आदि, (८) **चतुष्पद**—चार पैरवाले गाय-भैंस-घोड़ा आदि, (९) **कुप्य**—धातु के बने हुए बर्तन आदि तथा घर में काम आने वाली अन्य खुदरा चीजें ।

—हरिभद्रीय आवश्यक, अ. ४

आभ्यन्तर परिग्रह १४ प्रकार का है*—(१) हास्य, (२) रति,

*मिच्छत्त-वेद-रागा, हासादि भया होंति छद्दोसा ।
चत्तारि तह कसाया, चोद्दस अब्भंतरा गंथा ।।

—दिगम्बर प्रतिक्रमणत्रयी, पृष्ठ १७५

(६) अरति, (४) भय, (५) शोक, (६) जुगुप्सा, (७) क्रोध, (८) मान, (९) माया, (१०) लोभ, (११) स्त्री-वेद, (१२) पुरुष-वेद, (१३) नपूंसक-वेद, (१४) मिथ्यात्व।

—बृहत्कल्प-भाष्य ८३१

२८ आशा

१. आशा नाम मनुष्याणां, काचिदाश्चर्य-शृङ्खला ।
यया बद्धाः प्रधावन्ति, मुक्तास्तिष्ठन्ति पङ्गुवत् ॥

मनुष्यों के लिए आशा एक आश्चर्यजनक बेड़ी है, जिससे बंधे हुए प्राणी इधर-उधर दौड़ते हैं और खुल्ले पङ्गुवत् शान्त होकर बैठ जाते हैं ।

२. 'तुलसी' अद्भुत देवता, आशादेवी नाम ।
सेवत शोक समर्पही, विमुख भये अभिराम ॥

३. आशा हि परमं दुःखं, नैराश्यं परमं सुखम् ।
—श्रीमद्भागवत ११।८ —महाभारत शांतिपर्व १७४।६५

आशा परम दुःख है और निराशाभाव परम सुख है ।

४. आशा सो ही आपदा, सांसो सो ही सोग ।
कहे 'कबीर' कैसे मिटे, ये दो जालिम रोग ।

५. शिष्य ने गुरु से पूछा—त्याग करता हूं, कष्ट उठाता हूँ तो भी जी—जलता क्यों रहता है ? गुरु ने कहा—देख फल की आशा तो नहीं है ?

६. आशैव राक्षसी पुंसा–माशैव विषमञ्जरी ।
आशैव जीर्णमदिरा, धिगाशा ! सर्वदोषभूः ॥ —योगशास्त्र

मनुष्यों के लिये आशा ही राक्षसी है और आशा ही जहर की बेल

है। आशा ही पुरानी मदिरा है। सब दोषों की खान आशा को धिक्कार है।

७. खलोल्लापाः सोढाः कथमपि तदाराधनतया,
निगृह्यान्तर्बाष्पं हसितमपि शून्येन मनसा!
कृतश्चित्तस्तम्भः प्रतिहतधियामञ्जलिरपि,
त्वमाशे! मोघाशे! किमु परमितो नर्तयसि माम्॥
—भर्तृहरि-वैराग्यशतक ६

खलों (दुष्ट) पुरुषों को खुश करने के लिए मैंने उनके उच्छृंखल वाक्य सहे, आँख के आंसुओं को भीतर ही रोककर खिन्नमन से उन खलों का हास्य भी सहा तथा चित्त को स्थिर करके उन हंसने वालों के सम्मुख हाथ भी जोड़े। हे आशा! अब इससे अधिक मुझे क्या नचाएगी?

८. अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं, दशनविहीनं जातं तुण्डम्।
बृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं, तदपि न मुञ्चत्यासा पिण्डम्।३॥
दिन-यामिन्यौ, सायं-प्रातः, शिशर-वसन्तौ पुनरायातः।
कालः क्रीडति गच्छत्यायु-स्तदपि न मुञ्चत्याशावायुः।५॥
अग्रे वह्निः पृष्ठे भानू, रात्रौ चिबुक समर्पित जानुः।
करतलभिक्षा तरुतलवास-स्तदपि न मुञ्चत्याशापाशः।८॥
—शंकराचार्य–चर्पटपंजरिका

शरीर गल गया, शिर सफेद हो गया, मुंह में दाँत बिल्कुल न रहे, बूढ़ा लाठी के सहारे चलता है, फिर भी आशाओं के समूह को नहीं छोड़ता।

दिन-रात, शाम-सुबह और शिशिर-वसन्त आदि ऋतुएं जा-जाकर आ रही हैं, काल क्रीड़ा कर रहा है और आयु घटती जा रही है,

फिर भी प्राणी आशारूप वायु के रोग से मुक्त नहीं होता। आगे अग्नि है, पीछे सूर्य है, रात के समय घुटनों पर चिबुक-गाल रखकर बैठा रहता है अर्थात् सोता नहीं तथा हाथों में भिक्षा लेता है; और वृक्ष के नीचे निवास करता है। अहो! इतना कुछ करने पर भी योगी आशा के बन्धन से नहीं छूटता ॥

९. जीवित जरा-सा दुःख जनम-जरा सा तापैं,
डर है खरासा काल सिर पैं खराशा है।
कोऊ विरला-सा जोपे जीवैं द्वै पचासा,
अन्त बन बीच वासा यही बतका खुलासा है।
संध्या का-सा बान कान करिवर का-सा जान,
चल-दल-सा पान चपला-सा उजासा है।
ऐ सासा रहासा तापैं 'किसन' अनन्त आसा,
पानी का बतासा तैसा तन का तमाशा है ॥

—किशनबावनी

१०. आशाया ये दासा-स्तेदासाः सर्वलोकस्य।
आशा दासी येषां, तेषां दासायते लोकः ॥ —सभातरंग

जो लोग आशा के दास हैं, वे सारे जगत के दास हैं और जिनकी आशा दासी बनगई, उनका सारा जगत ही दास बनगया।

११. हते भीष्मे हते द्रोणे, कर्णे वा त्रिदिवं गते।
आशा बलवती राजन्! शल्यो जेष्यति पाण्डवान् ॥

—महाभारत शल्यपर्व

भीष्म, द्रोण और कर्ण के मारे जाने पर भी शल्य पांडवों को जीतना चाहता है। अहो! आशा बलवती है।

१२. आशा नामनदी मनोरथजला तृष्णातरङ्गाकुला,
रागग्राहवती वितर्कविहगा धैर्यद्रुमध्वंसिनी।
मोहावर्तसुदुस्तराऽतिगहना प्रोत्तुङ्गचिन्तातटी,
तस्याः पारगता विशुद्धमनसो नन्दन्ति योगीश्वराः।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक ४४

आशा नाम की एक नदी है; उसमें मनोरथरूप जल है; तृष्णा रूप तरंगे है; रागरूपी मगर है; वितर्करूपी पक्षी हैं; वह नदी धैर्यरूपी वृक्ष का नाश करनेवाली है; अति गम्भीर है; उसमें मोहरूपी भंवर है, उसके चिन्तारूपी ऊंचे तट हैं अतः उसे पार करना अति कठिन है। पवित्र हृदयवाले योगिराज ही उस नदी के पार पहुंचे हैं एवँ आनन्द कर रहे हैं।

१३. तौ लगि जोगी जगत गुरु, जौ लगि रहत निराश।
जब आशा मन में जगी, जग गुरु जोगी दास॥

—रामसतसई

१४. धनाशा जीविताशा च, जीर्यतोऽपि न जीर्यति।

—हितोपदेश १।११२

मनुष्य के जीर्ण हो जाने पर भी धन की और जीवन की आशा जीर्ण नहीं होती।

१५. द्वेमा, भिक्खवे, आसा दुप्पजहा।....
लाभासा च जीवितास च। —अंगुत्तरनिकाय-२।११।१

भिक्षुओ! दो आशाएं (इच्छाएं) बड़ी कठिनता से छूटती है—लाभ की आशा और जीवन की आशा।

१६. जोदि तुमि कोरो आमार आश,
तोवे अमी कोरीतुमार सर्वोनाश।

जोदि तुमि आमार ना छाड़ो पास,
तो बे अमी तुमार दासेर दास ॥

—बँगला कहावत

१७. दूसरे री आशा सदा निराशा। —राजस्थानी कहावत

१८. शाह सूजा ने अपनी शाहजादी को एक फकीर के साथ दे दिया। फकीर के पास कल के लिए रोटियाँ रखी हुई थीं। शाहजादी ने उन्हें फैंकते हुए कहा—फकीर बन जाने के बाद कल की आशा क्य ?

१९. कल उठने की आशा पर सोया हुआ कोई भी आज तक नहीं जाग सका। —नलिन

२०. आशा मत रख ! जिससे अल्ला और लोग, दोनों खुश हो जाएंगे। —कुरान की ४२ बातों में से

२१. अपनी आशाओं की मुर्गियों के पर कैंच करदो, वरना ये तुम्हें अपने पीछे-पीछे भगा-नचाकर परेशान कर डालेंगी। —फ्रैंकलिन

२२. धन्य है वह, जो आशा नहीं रखता, क्योंकि वह निराश नहीं होगा। —स्विट

२३. आशा की आशा में निश्चित वस्तु को न छोड़ दो !

२४. आशा को जीवन का लंगर कहा है, उसका सहारा छोड़ने से आदमी भव-सागर में बह जाता है, पर बिना हाथ-पैर हिलाए; केवल आशा से भी काम नहीं बनता। —लुकमान

२५. आशा और आनन्द का रुझान सच्ची दौलत है, भय और रंज का सच्ची गरीबी।

—ह्यूम

२६. नरक के बीज बोकर स्वर्ग की आशा रखने से बढ़कर मूर्खता क्या होगी?

—हयहया

२६ आशा की प्रशंसा

१. जब तक श्वासा तब तक आशा। —हिन्दी कहावत

२. आशा अमर है; उसकी आराधना कभी निष्फल नहीं होती। —गाँधी

३. आशा अमर धन है। —राजस्थानी कहावत

४. आशा वह मधुमक्षिका है, जो बिना फूलों के शहद बनाती है। —इंगरसोल

५. आशा ही एक ऐसी चीज है, जो सबके पास मिल सकती है, और कुछ न होने पर भी वह तो रहती ही है। —थेल्स

६. दुःखी के लिए आशा के अतिरिक्त और कोई औषधि नहीं है। —शेक्सपीयर

७ रोग-सोग संताप से, भरा पड़ा संसार।
जो आशा होती न तो, हो जाता संहार॥

—दोहा-संदोह

कहते हैं कि पीथागोरस नामका एक मनुष्य था। उसका भाई हीलियस स्वर्ग से अग्नि लाकर मनुष्य बनाने लगा। जूपीटर (इन्द्र) जून्न (इन्द्राणी), भेनस (बृहस्पति), मर्करी (देवदूत)-इन सभी ने ईर्ष्यावश हीलियस को दुःखी करने के लिए 'पेंडोरा' नामक स्त्री भेजी। दुःखी होने के बदले हीलियस तो उसके साथ परम सुख

से रहने लगा। फिर इन्द्रादिक ने एक पेटी भेजी। उसमें रोग-शोक-संतापादि भरे हुए थे तथा "हमारे बनाए मनुष्य न मर जायें" इसलिए एक आशा भी रख दी। Dont open the box डोंट ऑपन दी बॉक्स:' ऐसे उस पेटी पर लिखा हुआ था। कुछ समय के बाद 'पेंडोरा' ने पेटी खोली तो रोग-शोक आदि फैलने लगे। तब उसने पुनः बन्द करदी अतः आशा अन्दर ही रह गई। उसी के बल से दुनियाँ जीती है।

८. आशा सर्वोत्तामा ज्योति-र्निराशा परमं तमः।

—रश्मिमाला १।२

आशा सर्वोत्कृष्ट प्रकाश है और निराशा घोर अन्धकार है।

९. दिल शीशा है, इसे निराशा की ठेस लगी और फूटा। दिल फूल है, इसे नाउम्मीद की हवा लगी और मुरझाया।

—म० भगवानदीन

१०. निराशा का गहरा धक्का मस्तिष्क को वैसा शून्य बना देता है, जैसा कि लकवा शरीर को। —ग्रेविल

११. आशावादी हर कठिनाई में अवसर देखता है और निराशा-वादी हर अवसर में कठिनाई देखता है।

३० इच्छा

१. इच्छा एक रोग है । —रामतीर्थ

२. समस्त भय और चिन्ता इच्छाओं का परिणाम है ।
—रामतीर्थ

३. इच्छा मौत है, त्याग जिन्दगी है ।

४. इच्छा से दुःख आता है, इच्छा से भय आता है। जो इच्छाओं से मुक्त है, वह न दुःख जानता है और न भय ।
—बुद्ध

५. जहाँ चाह वहाँ आह है, बनिए बेपरवाह ।
चाह जिन्हों की मिट गई, वे शाहन के शाह ॥

६. चाह चमारी चोरटी, सौ नीचन की नीच ।
मैं था पूरनब्रह्म यदि, चाह न होती बीच ॥ —रहीम

७. जीने की इच्छा सब दुःखों की जननी है और मरने की तैयारी सब सुखों की जननी है । —रामतीर्थ

८. इच्छाओं के सामने आते ही सब प्रतिज्ञाएं ताक पर धरी रह जाती हैं ।

९. इच्छा यदि घोड़ा बन सकती तो प्रत्येक मनुष्य घुड़सवार हो जाता । —शेक्सपीयर

१०. इच्छा हु आगाससमा अणंतया । —उत्तराध्ययन ९।४८

इच्छा आकाश के समान अनन्त है ।

११. न वै कामानामतिरिक्तमस्ति । —शतपथब्राह्मण ८।७।२।१९

कामनाओं-इच्छाओं का अन्त नहीं है ।

12. There is enough for everyone's need, But not every-one's greed.

दीयर इज इनफ फोर एव्रीवन्ज नीड, बट नाट एव्रीवन्ज ग्रीड । —एक विचारक

संसार में हर एक मनुष्य की आवश्यकता भरने को पर्याप्त से अधिक पदार्थ हैं, किंतु एक भी व्यक्ति की इच्छा भरने को वह अपर्याप्त है ।

१३. इच्छा कभी तृप्त नहीं होती, किन्तु अगर कोई मनुष्य उसको त्याग दे तो वह उसी दम सम्पूर्णता को प्राप्त कर लेता है ।

—तिरुवल्लुवर

१४. इच्छापूर्ति की कोशिश क्षितिज प्राप्त करने का प्रयत्न है, जिसमें आज तक कोई सफल नहीं हुआ ।

१५. आधी अरु रूखी भली, पूरी सो संताप ।
जो चाहेगा चोपड़ी, बहुत करेगा पाप ।।

—कबीर

16. (Happy is he, whose wants are few)

हेपी इज ही, हूज वान्ट्स आर फ्यू ।

—अंग्रेजी कहावत

सुखी वही है जिसकी इच्छायें कम हैं ।

१७. जिस क्षण तुम इच्छाओं से ऊपर उठ जाओगे, इच्छितवस्तु तुम्हारी तलाश करने लगेगी।

—रामतीर्थ

१८. इच्छा लोभं न से विज्जा। —आचाराङ्ग ८।८।२३

इच्छा एवं लोभ का सेवन नहीं करना चाहिए।

१९. हमारा देश आत्मदान का ऐश्वर्य चाहता है—विपुल धन की महिमा और शक्ति की प्रतियोगिता नहीं! धन अब मनुष्य को अर्घ नहीं चढ़ाता, वरन् उसे अपमानित करता है और प्रतियोगिता विस्मित करती है—आनन्दित नहीं। इससे ईर्ष्या होती है—प्रशंसा नहीं।

—टैगोर

३१ विविध इच्छाएं

१. इच्छा बहुविहा लोए, जाए बद्धो किलिस्सति ।
तम्हा इच्छामणिच्छाए, जिणित्ता सुहमेधति ।।

—ऋषिभाषित ४०।१

संसार में इच्छाएँ अनेक प्रकार की हैं, जिनसे बंधकर जीव दुःखी होता है। अतः इच्छा को अनिच्छा से जीतकर साधक सुख पाता है।

२. प्रथममशनपानप्राप्तिवाञ्छाविहस्ता,
स्तदनु वसनवेश्माऽलङ्कृतिव्यग्रचित्ताः ।
परिणयनमपत्यावाप्तिमिष्टेन्द्रियार्थान्,
सततमभिलषन्तः स्वस्थतां क्वाश्नुवीरन् ।

—शान्तसुधारस-कारुण्यभावना

रोटी, पानी, कपड़ा, घर आभूषण, स्त्री सन्तान एवं इन्द्रियों के इष्ट शब्दादि विषयों की अभिलाषा में व्याकुल बने हुए संसारी जीव स्वस्थता का स्वाद कैसे ले सकते हैं ?

३. अधना धनमिच्छन्ति, वाचंचैव चतुष्पदः ।
मानवाः स्वर्गमिच्छन्ति, मोक्षमिच्छन्ति देवताः ।।

—चाणक्यनीति ५।१८

निर्धन मनुष्य धन की, चौपाये-पशु वाणी की, मनुष्य स्वर्ग की और देवता मोक्ष की इच्छा करते हैं।

४. नवी मूंजरी खाट, न चूवै टापरी,
भैंसड़ल्यां दो - च्यार के दूझै बावड़ी।
बाजर हंदा रोट दही में ओलणा,
इतरा दै करतार, फेर नहिं बोलणा।
—राजस्थानी उक्ति

५. मीठी कोउ वस्तु नहीं, मीठी जाकी चाह।
अमली मिसरी छोड़ि के, आफू खात सराह॥ —वृन्दकवि

६. दस विहे आसंसप्पओगे पण्णत्ते, तं जहा—इहलोगासंसप्पओगे, परलोगासंसप्पओगे, दुहओलोगासंसप्पओगे, जीवियासंसप्पओगे, मरणासंसप्पओगे, कामासंसप्पओगे, भोगासंसप्पओगे, लाभासंसप्पओगे, पूयासंसप्पओगे, सक्कारासंसप्पओगे। —स्थानांग १०।७५९

भगवान ने दस प्रकार की आशंसायें-इच्छाएँ कही हैं। तद्यथा—

(१) **इहलोक की इच्छा करना**—जैसे तपस्या आदि के प्रभाव से मैं चक्रवती बनूं!

(२) **परलोक की इच्छा करना**—जैसे मैं इन्द्रादि देव बनूं!

(३) **उभयलोक की इच्छा करना**—जैसे इन्द्रादि देव बनकर चक्रवर्ती आदि बनूं!

(४) **जीने की इच्छा करना**—जैसे सुख से बहुत काल तक जीवित रहूँ!

(५) **मरने की इच्छा करना**—मैं दुःख पा रहा हूँ, जल्दी मर जाऊँ तो ठीक!

(६) **काम की इच्छा करना**—जैसे मुझे अच्छे शब्द-रूप सुनने-देखने को मिलें !

(७) **भोग की इच्छा करना**—जैसे मुझे अच्छे गंध-रस-स्पर्श की प्राप्ति हो !

(८) **लाभ की इच्छा करना**—जैसे मुझे धर्म के फलस्वरूप यश-कीर्ति आदि का लाभ हो !

(९) **पूजा की इच्छा करना**—जैसे संसार में मेरी पुष्पादि से पूजा हो।

(१०) **सत्कार की इच्छा करना**—जैसे संसार में वस्त्र-आभूषण आदि से मेरा खूब सत्कार हो !

७. महान् आत्माओं की इच्छा-शक्तियां होती हैं और दुर्बल आत्माओं की केवल इच्छाएँ। —चीनी कहावत

८. अपनी प्रचण्ड इच्छा-शक्ति से कोई कब क्या बन जायेगा, कह नहीं सकते। —पटोरिया

९. लोक को चाहने वाले क्रूर हैं, परलोक को चाहने वाले मजूर हैं और मालिक को चाहने वाले शूर हैं।

१०. जीवन के दो स्थल दुःखमय हैं—प्रथम तो इच्छाओं की पूर्ति हो जाना और द्वितीय इच्छाओं का अपूर्ण रहना !

—बर्नार्डशा

३२ निःस्पृहता

१. अणिहे से पुट्ठे अहियासए । —सूत्रकृतांग २।१।१३

मुमुक्षु आत्मा को निःस्पृह होकर कष्टों को सहना चाहिये ।

२. निःस्पृहत्वं महासुखम् । —ज्ञानसार

इच्छाओं का त्याग ही सर्वोत्तम सुख है ।

३. भूशय्या भैक्ष्यमशनं, जीर्णवासो वनं गृहम् ।
तथापि निःस्पृहस्याहो ! चक्रिणोप्यधिकं सुखम् ।
—ज्ञानसार

चाहें भूमि का शयन है, भिक्षा का भोजन है, पुराने कपड़े हैं एवं वन में घर है, फिर भी निःस्पृह मनुष्य को चक्रवर्ती से भी अधिक सुख है ।

४. निःस्पृहोनाधिकारी स्या-न्नाकामो मण्डनप्रियः ।
नो विदग्धोऽप्रियं ब्रूयात्, स्पष्टवक्ता न वञ्चकः ।।
—चाणक्यनीति ५।५

कामहीन मनुष्य कामुक (कामोत्तेजक) वस्तुएँ नहीं चाहता और निःस्पृह मनुष्य अधिकार नहीं चाहता ! चतुर मनुष्य कटु-वचन नहीं बोलते और साफ कहनेवाले के मन में छल नहीं होता ।

५. निःस्पृहानां का नाम परापेक्षा । —नीतिवाक्यामृत २६।६०

निःस्पृह (धनादि की लालसा-रहित) व्यक्ति परमुखापेक्षी नहीं होते।

६. तृणं ब्रह्मविदः स्वर्ग-स्तृणं शूरस्य जीवितम्।
जिताक्षस्य तृणं नारी, निस्पृहस्य तृणं जगत्॥

—चाणक्यनीति ५।१४

ब्रह्मज्ञानी को स्वर्ग तृण-समान है, शूर को जीवन तृणवत् है। जितेन्द्रिय को स्त्री तृण-तुल्य है और निःस्पृह को जगत तृण-समान है।

७. समिद्धि किं सारा ? विमुत्तिसारा।

—अंगुत्तरनिकाय, ६।२।४

समृद्धि का सार क्या है ? विमुक्ति (अनाशक्ति) ही सार है।

३३ तृष्णा

१. बलिभिर्मुखमाक्रान्तं, पलितैरङ्कितं शिरः ।
गात्राणि शिथिलायन्ते, तृष्णैका तरुणायते ।।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक १४

झुरियाँ मुख पर आ गई हैं, शिर के बाल सफेद हो गये हैं, अङ्ग शिथिल हो गये हैं, केवल एक यह तृष्णा जवान होती जा रही है ।

२. जीर्यन्ते जीर्यतः केशा, दन्ता जीर्यन्ति जीर्यतः ।
जीर्यतश्चक्षुषी श्रोत्रे, तृष्णैका तरुणायते ।।

—पञ्चतन्त्र ५।१६

जीर्ण-वृद्ध होने से बाल जीर्ण हो जाते हैं, दांत जीर्ण हो जाते हैं, आँख और कान भी जीर्ण हो जाते हैं पर एक तृष्णा तरुण होती जाती है ।

३. यौवनं जरया ग्रस्त-मारोग्यं व्याधिभिर्हतम् ।
जीवितं मृत्युरभ्येति, तृष्णैका निरुपद्रवा ।।

—सुभाषितावलि

जवानी बुढ़ापे से ग्रस्त है; तन्दुरुस्ती बीमारियों से दबी हुई है और जीवन के सामने मृत्यु आ रही है, अतः तृष्णा ही एक निरुपद्रव है—इसको किसी का भय नहीं है ।

४. रूप को न खोज रह्यो तरु ज्यौं तुषार दह्यो,
भयो पतझार केधौं रही डार सूनी-सी।
कूबरी भइ है कटि दूबरी भई है देह,
ऊबरी इतेक आयु सेर मांहि पूनीसी॥
जोवन ने बिदा लीनी जरा नै जुहार कीनी,
हीन भई सुधि-बुधि सबै बात ऊनी-सी।
तेज घट्यौ ताव घट्यौ जीतब को चाव घट्यो,
और सब घट्यौ एक तिस्ना दिन दूनी-सी॥

—भूधरदास

५. तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः। —भर्तृहरि-वैराग्यशतक १२

हम बूढ़े हो गये लेकिन तृष्णा बूढ़ी नहीं हुई।

६. निःस्वो वष्टि शतं शती दशशतं लक्षं सहस्राधिपो,
लक्षेशः क्षितिराजतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वाञ्छति।
चक्रेशः सुरराजतां सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वाञ्छति,
ब्रह्मा विष्णुपदं हरिः शिवपदं तृष्णावधिं को गतः?

निर्धन सौ की, शताधीश हजार की, सहस्त्राधीश लखपति बनने की, लखपति राजा बनने की, राजा चक्रवर्तीपद की, चक्रवर्ती सुरेन्द्रपद की, सुरेन्द्र ब्रह्मा के पद की, ब्रह्मा विष्णु के पद की, और विष्णु महादेव के पद की इच्छा करता है—अब सोचो! तृष्णा को किसने जीता? अर्थात् किसी ने भी नहीं।

७. यूरोप के एक धनिक ने गोली खाकर आत्महत्या की। उसके हाथ के पत्र में लिखा था कि मेरे पास सिर्फ दो करोड़ पौण्ड धन रह गया है—इसी की फिक्र में मैंने आत्महत्या की है। —जीवनप्रेरणा, पृष्ठ-१५७

८. बादशाह के पास ब्राह्मण कुछ मांगने आया, वह बन्दगी कर रहा था एवं खुदा से धन-दौलत, खूबसूरत-बेगम और बड़े राज्य की भीख मांग रहा था। ब्राह्मण लौट चला। बादशाह ने वापिस बुलाकर कहा—मांग! ब्राह्मण बोला तुम खुद ही भिखारी हो, क्या मांगू ?

९. तन की तृष्णा तनिक है, तीन पाव के सेर।
मन की तृष्णा अनन्त है, गिलै मेर का मेर॥

१०. तन तुरंग असवार मन, कर्म पियादा साथ।
तृष्णा चली शिकार को, विषय बाज लिए हाथ॥

—कबीर

११. अन्तो जटा बहि जटा, जटाय जटिता पजा।

—विसुद्धिमग्ग-१।१

भीतर जटा (तृष्णा) है, बाहर जटा है, चारों ओर से यह सब प्रजा जटा से जकड़ी हुई है।

१२. जोगी दुखिया जंगम दुखिया, तापस को दुःख दूना।
आशा-तृष्णा सब घट व्यापी, कोई महल नहीं सूना॥

१३. रत्नजड़ित मन्दिर तजे, तज विषयिन का साथ।
धिक् मन धोखे लाल के, पड़ा पीक पर हाथ॥

१४. नाग्निस्तृप्यति काष्ठानां, नापगानां महोदधिः।
नान्तकः सर्वभूतानां, न पुंसां वामलोचना॥

—विदुरनीति ८।७

काठ से अग्नि, नदियों से समुद्र, समस्त प्राणियों के भक्षण से मृत्यु और पुरुषों के सहवास से स्त्रियां—ये चार कभी तृप्त नहीं होते।

१५. शाह सिकन्दर ने फकीर से पृथ्वी का राज्य मांगा। उसने एक मनुष्य की खोपड़ी देकर कहा—इसे अनाज से भर देना, पूरी भरते ही तू सारी पृथ्वी का राजा बन जाएगा। चमत्कारी खोपड़ी में हजारों मन ज्वार डाली फिर भी न भरी। साधु ने तत्त्व समझाया कि इस खोपड़ी की तरह मनुष्य की तृष्णा कभी नहीं भर सकती !

१६. कश्मीर चुनाव में तीन उम्मीदवार खड़े हुए थे, उनकी आयु क्रमशः १६० - १२५ एवं १११ वर्ष की थी, देखिए तृष्णा का खेल !

१७. ये तण्हं वड्ढेंति ते उपधिं वड्ढेंति।
ये उपधिं वड्ढेंति ते दुक्खं वड्ढेंति ॥

—संयुत्तनिकाय-२।१२।६६

जो तृष्णा को बढ़ाते हैं, वे उपाधि को बढ़ाते हैं; जो उपाधि को बढ़ाते हैं, वे दुःख को बढ़ाते हैं।

१८. जो सतृष्ण होकर दौलत और इज्जत के पीछे पड़ा हुआ है, वह तृषा-रोगी समुद्र से अपनी प्यास बुझाना चाहता है। वह जितना ज्यादा पीता है, उतना ही ज्यादा और पीना चाहता है; आखिर पीता-पीता मर जाता है।

—अरबी कहावत

१९. यह जहरीली तृष्णा जिसे जकड़ लेती है, उसके शोक-दुख वीरण-घास की तरह बढ़ते ही जाते है। —बुद्ध

२०. अमेरिका के मानसशास्त्री "विलियम जेम्स" कहते हैं कि एक वृत्ति संतुष्ट होते ही उससे विरोधी वृत्ति तुरंत प्रकट हो

जाती है, जैसे—योग साधना में लीन साधु की विशेष मान-पूजा होने पर वृत्ति इन्द्रियों के भोग की तरफ दौड़ने लगती है। दान देने से धन की कमी न हो जाये, अतः मन धन एकत्रित करने में लीन बन जाता है। शरीर हृष्ट-पुष्ट होने पर कुश्तीबाज़ बनकर दूसरों को नीचे गिराने की भावना होने लगती है।

२१. भवतण्हा लया वुत्ता, भीमा भीमफलोदया।

—उत्तराध्ययन ३२।४८

संसार की तृष्णा एक प्रकार की लता-बेल है, इसमें भीषण दुःख-रूप फल लगते हैं।

२२. मोहाययणं खु तण्हा, मोहं च तण्हाययणं वयंति।

—उत्तराध्ययन ३२।६

तृष्णा मोह का उत्पत्तिस्थान है और मोह तृष्णा का उत्पत्ति-स्थान कहा जाता है।

२३. मोहो हओ जस्स न होइ तण्हा,
तण्हा हया जस्स न होई लोहो। —उत्तराध्ययन ३२।८

उसने मोह का नाश कर दिया, जिसके हृदय में तृष्णा नहीं है और तृष्णा का उसने नाश किया है जिसके हृदय में लोभ नहीं है।

२४. तण्हाय जायती सोको, तण्हाय जायती भयं।

—धम्मपद १६।८

तृष्णा से शोक और भय उत्पन्न होता है।

२५. स तु भवति दरिद्रो, यस्य तृष्णा विशाला ।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक ५०

दरिद्र वही है, जिसकी तृष्णा विशाल हैं ।

२६. तृष्णादेवि ! नमस्तुभ्यं, धैर्यविप्लवकारिणी ।

विष्णुस्त्रैलोक्यनाथोऽपि, यत् त्वया वामनीकृतः ।।

—शाकुन्तल

धैर्य का नाश करनेवाली हे तृष्णादेवि ! तुझे नमस्कार है ; क्योंकि त्रिलोकीनाथ विष्णु को भी तूने वामन बना दिया ।

२७. तृष्णादेवि ! नमस्तुभ्यं, सिद्धोऽहं त्वत्प्रसादतः ।

पश्याम्यहं जगत्सर्वं, न मे पश्यति कश्चनः ।।

हे तृष्णादेवि तुझे नमस्कार है । तेरी कृपा से मैं तो सिद्ध बन गया, क्योंकि मैं सारे जगत को देखता हूँ, मुझे कोई नहीं देखता ।

२८. उत्खातं निधिशङ्कया क्षितितलं ध्माता गिरेर्धातवो ,

निस्तीर्णः सरितां पतिर्नृपतयो यत्नेन सन्तोषिताः ।

मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः,

प्राप्तः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णेऽधुना मुञ्च माम् ।।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक ४

निधान मिलने की आशा से मैंने पृथ्वीतल खोदा, रसायनसिद्ध के लिए पर्वतों की धातुएँ फूँकीं, समुद्र के पार गया, यत्नपूर्बक राजाओं की सेवा की तथा मन्त्रों की आराधना में लीन होकर श्मशानों में रातें बिताईं, परन्तु एक कौड़ी भी प्राप्त न हुई । हे तृष्णे ! अब तो मेरा पिण्ड छोड़ !

२९. तृष्णे त्वमपि तृष्णान्धा, त्रिषु स्थानेषु वर्तसे,

व्याधितेष्वनपत्येषु, जरापरिणतेषु च । —कल्पतरु

तृष्णा ! तीन जगह तू भी तृष्णान्ध बन जाती है—रोगियों में, निःसंतानों में और बूढ़ों में।

३०. धन बढ़ाने की इच्छा 'तृष्णा', अभावपूर्ति की भावना 'इच्छा', अत्यावश्यक वस्तु की कामना 'स्पृहा' और प्राप्त वस्तु को स्थिर करने की भावना 'वासना' कहलाती है।

—कल्याण से

३३ तृष्णा-विजय

१. विणीयतण्हो विहरे। —दशवैकालिक ८।६०

मुमुक्षु को तृष्णा-रहित होकर विचरना चाहिए।

२. मेहावी अप्पणो गिद्धिमुद्धरे। —सूत्रकृतांग ८।१३

मेधावी पुरुष को अपना गृद्धिभाव दूर करना चाहिए।

३. से हु चक्खू मणुस्साणं, जे कंखाए य अंतए।
—सूत्रकृतांग १५।१४

वही व्यक्ति मनुष्यों के लिए चक्षु के समान मार्गदर्शक है, जो भोग की तृष्णा का अन्त करनेवाला है।

४. तृष्णा को उखाड़ फेंकनेवाले का पुनर्जन्म नहीं होता।
—बुद्ध

५. जिसने तृष्णा जीतली उसने अटल-स्वर्ग जीत लिया।
—महाभारत

६. तृष्णा येन परित्यक्ता, को दरिद्रः क ईश्वरः? —कल्पतरु

तृष्णा का त्याग करदेने पर दरिद्र कौन और ईश्वर कौन?

७. सुखे सोवे कुम्हारड़ी, चोर न मटिया लेह।
पग के गधो बांध के, लंगर सिराणै देह॥

८. जिसकी तृष्णा मरी नहीं, उसे अपने कर्त्तव्य-कर्म का ध्यान नहीं रहता तृष्णा के त्याग का अर्थ है—कर्त्तव्य का ध्यान।
—गांधी

९. अत्थे य संकप्पओ तओ से, पहीयए कामगुणेसु तण्हा ।
—उत्तराध्ययन ३२।१०७

अर्थों के विषय में सद्विचार करने के अनन्तर आत्मा की काम-गुणों में बढ़ी हुई तृष्णा सर्वप्रकार से नष्ट हो जाती है।

१०. हठीसिंह पटेल सुबह के वक्त पश्चिम की तरफ कहीं जंगल में जा रहा था एवं उसकी छाया आगे-आगे चल रही थी। मूर्ख ने उसे भूत समझकर पीछे करने के लिए काफी दौड़ लगाई, किन्तु उसे सफलता न मिली। 'स्वामी नारायण-सम्प्रदाय' के आदि गुरू **श्री सहजानन्द स्वामी** रास्ते में मिले एवं मूर्खता पर हंसते हुए उसका मुंह घुमाकर पूर्व की ओर कर दिया, बस, अब तो वह भूत पीछे-पीछे चलने लगा।

(तत्त्व यह है कि तृष्णा को पीठ दिखा देने पर लक्ष्मी पीछे-पीछे दौड़ने लगती हैं।)

आसक्ति

१. सङ्ग एव मतः सूत्रे, निःशेषानर्थमन्दिरम्। —शुभचन्द्राचार्य

धर्मशास्त्रों में सङ्ग-(आसक्ति) को ही समस्त अनर्थों का घर माना है।

२. कृपयापिकृतः सङ्गः, पतनायैव योगिनाम्।
इतिसंदर्शयन्नाह, भरतस्यैणपौषणम्॥

—महाभारत शांतिपर्व २१५।४ टीका

दयावश की हुई आसक्ति भी योगियों का पतन कर देती है। जड़-भरत का मृगपोषण इसी बात को सिद्ध करता है।

३. पुत्र-दारा-कुटुम्बेषु, सक्ताः सीदन्ति जन्तवः।
सरः-पङ्कार्णवे मग्ना, जीर्णा वनगजा इव॥

—पद्मपुराण

तालाब के कीचड़ में फंसे हुए वनगजों की तरह पुत्र-स्त्री-कुटुम्ब में आसक्त प्राणी दुःखित हो रहे हैं।

४. कुरर पक्षी मांस का टुकड़ा लेकर उड़ा, कौवे आदि पीछे लगे, हारकर उसे छोड़ा एवं वृक्ष पर शांति से जा बैठा। दत्तात्रेयजी ने उसे गुरु मानते हुए कहा—जहाँ तक आसक्ति-रूप मांस का टुकड़ा नहीं छूटेगा, वहाँ तक क्रोध आदि काग पीछा नहीं छोड़ेंगे। —भागवत ११।६।१

५. अनासक्ति से काम करनेवाला कभी थकता नहीं। बिना अनासक्ति के मनुष्य न तो सत्य का पालन कर सकता और न अहिंसा का। —गाँधी

६. अप्पडिबद्धयाएणं जीवे, निस्संगत्तं जणयइ।
निस्संगत्तेणं जीवे एगे, एगग्गचित्ते दिया य राओ
य असज्जमाणे अप्पडिबद्धे यावि विहरइ।

—उत्तराध्ययन २६।३०

अप्रतिबद्धता से निःसंगभाव आता है। निःसंगभाव से चित्त की एकाग्रता आती हैं एवं जीव अनासक्त रहता हुआ सम्बन्धरहित होकर विचरता है।

३५ ममता

१. किं दुःखमूलं ? ममताभिधानः । —शंकर-प्रश्नोत्तरी

दुःख का मूल क्या है ? —जिसे ममता कहते हैं, वही ।

२. ममत्तबंधं च महब्भयावहं । —उत्तराध्ययन १६।६८

ममत्व का बन्धन महाभय करनेवाला है ।

३. ममाइ लुप्पइ बाले, अन्नमन्नेहिं मुच्छिए ।

—सूत्रकृतांग-१।१।४

धन-धान्यादि वस्तुओं में मूर्छित अज्ञानी ममत्व-भाव से दुःखी होता है ।

४. सेठ ने माल खरीदा । चार मजदूरों के सिर पर सात-सात पेटियाँ रखीं । मजदूर चलते-चलते थके । सेठ ने कहा–नीचे डाल दो, तीनों ने चार-चार पेटियाँ डाल दीं, चौथे ने नहीं डालीं । घर पहुंचने पर दयालु सेठ ने सारा माल उन्हें ही दे दिया, अब तीनों रोने लगे । (माल पर ममत्व हो गया)

५. ममत्तं छिन्दए ताए, महानागोव्व कंचुयं ।

—उत्तराध्ययन १६।८७

आत्मसाधक ममत्व के बन्धन को तोड़ फेंके,–जैसे सर्प शरीर पर आई हुई कैंचुली को उतार फेंकता है ।

६. जो कम्हि वि न मुच्छए स भिक्खू । –उत्तराध्ययन १५।२

जो किसी वस्तु में मूर्छित नहीं होता, वही साधु है ।

७. अवि अप्पणो वि देहंमि, नायरंति ममाइयं ।

—दशवैकालिक ६।२२

ज्ञानीपुरुष अपने शरीर के प्रति भी ममत्व-भाव नहीं करते ।

८. पुव्वकम्मखयट्ठाए, इमं देहं समुद्धरे । —उत्तराध्ययन ६।१३

पहले के किए हुए कर्मों को नष्ट करने के लिए ही इस देह की सार-संभाल रखनी चाहिए ।

३६ ममता और समता

१. जे ममाइयमतिं जहाति, से जहाति ममाइयं,
से हु दिट्ठपहे मुणी, जस्स नत्थि ममाइतं ।

—आचाराङ्ग-२।६

जो ममत्व-बुद्धि का त्याग करता हैं, वह स्वीकृत परिग्रह का त्याग करता है। जिसके ममत्व एवं परिग्रह नहीं है, उसी मुनि ने ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप मोक्षमार्ग को जाना है ।

२. अवेहि विद्वन् ! ममतैव मूलं,
शुचां सुखानां समतैव चेति । —अध्यात्मकल्पद्रुम

शोक का मूल ममता है और सुखों का मूल समता है। इस तत्त्व को समझो !

३. यत्रास्माकं ममता, ममतापस्तत्र—तत्रैव ।
यत्रैवाहमुदाशे, तत्र मुदाशे स्वभावसंतुष्टः ॥

जहाँ-जहाँ ममता है, वहाँ-वहाँ ही मुझे संताप है। जहाँ मैं उदासीन बन जाता हूँ, वहाँ स्वभाव में सन्तुष्ट होकर परम-आनन्द में रमण करने लगता हूं।

४. द्व्यक्षरस्तु भवेन्मृत्यु-स्त्र्यक्षरं ब्रह्म शाश्वतम् ।
ममेति च भवेन्मृत्यु-र्नममेति च शाश्वतम् ॥

—महाभारत शान्तिपर्व १३।४

दो अक्षरों का **'मम'** अर्थात् ममत्व मारनेवाला है और तीन अक्षरों का **'नमम'** यानि निर्ममत्व तारनेवाला है।

३७ ममता के विषय में कहावतें

१. खोटो तोये गाँठनों रुपियो, भांग्युं तोये भरूंच; घेलो तोपण पेटनों दीकरो । —गुजराती कहावत

२. बाँको तो पण मां को ।

३. आपरी माने डाकण कुण कैवै ।

४. एक घर तो डाकण ही टालै ।

५. ऊंट मरै जद मारवाड़ साहमो जोवै ।

६. ई आंगली रै—आ आँगली नेड़ी रहसी ।

७. हाथ स्यूं हाथ र पग स्यूं पग नेड़ो । —राजस्थानी कहावतें

८. एव्री वन थिंक्स हिज शिलिंग वर्थ थर्टीन पेन्स ।

अपनी सो लापसी दूसरे की लेई ।

९. एव्री वन थिंक्स हिज ओवम गीज स्वान्स ।

—अंग्रेजी कहावतें

ग्वालिन अपने दही को खट्टा नही कहती ।

तीसरा कोष्ठक

१ सन्तोष

१. लोभविजएणं जीवे संतोसं जणयई। —उत्तराध्ययन-२९।७०

लोभ को जीतने से जीव सन्तोष को उत्पन्न करता है।

२. अहंभाव को छोड़कर विपत्ति को भी सम्पत्ति मानना सच्चा सन्तोष है। —जुन्नेद

३. बिना किसी दूसरे से तुलना करते हुए जीवन का उपयोग करो, यही परम सन्तोष है। —कन्डोरसेट

४. सन्तोष कुदरती-दौलत है, ऐश्वर्य कृत्रिम-गरीबी। —सुकरात

५. सन्तोष आनन्द है, शेष सब दुःख है, इसलिए सन्तुष्ट रह! सन्तोष तुझे तार देगा। —तुकाराम

६. ओ सन्तोष! मुझे ऐश्वर्यशाली बनादे! क्योंकि कोई ऐश्वर्य तुझसे बढ़कर नहीं है। —सादी

७. सन्तोष आदमी को शक्तिशाली बनाता है। —फारसी कहावत

८. जबकि सब कामों के रास्ते बन्द हो जाते हैं, उस वक्त सन्तोष ही तमाम रास्तों को बिना शक अच्छी तरह खोल देता है। —मुहम्मदबिन-वशीर

९. सन्तोषः परमं पथ्यम् । —हिङ्गुल प्रकरण

तृष्णा की बीमारी को मिटाने के लिए सन्तोष उत्कृष्ट पथ्य है ।

१०. क्रोधो वैवस्वतो राजा, तृष्णा वैतरणी नदी ।
विद्या कामदुहा धेनुः, सन्तोषो नन्दनवनम् ॥
—चाणक्यनीति ८।१३

क्रोध यमराज है, तृष्णा वैतरणी नदी है, विद्या कामधेनु गाय है और सन्तोष नन्दनवन है ।

११. सन्तोषमूलं हि सुखम् । —मनुस्मृति ४।१२

सुख का मूल सन्तोष है ।

१२. न तोषात् परमं सुखम् ।

सन्तोष से बढ़कर दूसरा कोई सुख नहीं है ।

१३. विषय-वासना में रमने से बढ़कर कोई पाप नहीं, असंतोष से बढ़कर कोई दुःख नहीं, लोभ से बढ़कर कोई अनर्थ नहीं है और सन्तोष में शाश्वत सुख है ।
—ताओ उपनिषद्-४६

१४. संतुट्ठी परमं धनं । —धम्मपद २०४

सन्तोष सर्वोत्कृष्ट धन है ।

१५. गौधन, गजधन, वाजिधन, और रतनधन खान ।
जब आवै सन्तोष धन, सब धन धूल समान ॥
—राम-सतसई

१६. सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम् । —पञ्चतंत्र-२।१५६

सन्तोष पुरुष का सबसे बड़ा निधान है ।

१७. कन्टेन्टमेन्ट कैन नेवर रियली बी परचेज्ड ।

—अंग्रेजी कहावत

सन्तोष कभी नहीं खरीदा जा सकता है ।

१८. **सन्तोष के तीन मार्ग**– (१) दान, (२) बुद्धिपूर्वक निराकरण, (३) जबरदस्ती से दमन । उदाहरण–जैसे एक बच्चे ने कुछ खाने के लिए हठ किया । वस्तु खाने के अयोग्य थी, फिर भी एक मनुष्य ने आग्रह देखकर वह वस्तु दिलवा दी । दूसरे ने वस्तु के दुर्गुण समझाकर शांत किया और तीसरे ने दो थप्पड़ मारकर चुप कर दिया । इन तीनों में दूसरा मार्ग श्रेष्ठ है । पहले में बच्चे का स्वास्थ्य बिगड़ता है । एवं तीसरे में उसे असली सन्तोष नहीं होता ।

२ सन्तोष से लाभ

१. संतोषाद् उत्तमसुखलाभः। —पातंजलयोगदर्शन २।१२

सन्तोष से उत्कृष्ट आत्मिकसुख मिलता है।

२. मुत्तीएणं अकिंचणं जणयई।

अकिंचणेणं जीवे अत्थलोभाणं, अपत्थणिज्जे भवइ।

—उत्तराध्ययन २९।४७

मुक्ति अर्थात् निर्लोभता से जीव अकिंचनता परिग्रह–शून्यता को उत्पन्न करता है। उससे वह अर्थलोभी चौरादि द्वारा अप्रार्थनीय होता हैं। उसे चौर आदि तंग नहीं करते।

३. व अल्लाहु युहिब्बुऽस्सा बिरीन। —कुरान०२/२४६

अल्लाह सब्र करनेवालों से मुहब्बत रखता है।

४. पेशॅन्स इज बिटर बट इट्स फ्रूट इज स्वीट।

सब्र का फल मीठा है।

५. **संतोष से त्रयविकारों का शमन—**

काम–बिनु संतोष न 'काम' नसाहीं,
काम अछत सपनेहु सुख नाहीं।

क्रोध–नहि संतोष तो पुनि कछु कहहू,
जनि 'रिस' रोकि दुःसह दुख सहहू।

लोभ–उदित अगस्त्य पंथजल सोखा,
जिमि 'लोभहिं' सोखहि संतोखा।

—रामचरितमानस

३ संतोष का उपदेश

१. लोहं संतोसओ जिणे । —दशवैकालिक ८।३९

लोभ को संतोष से जीतना चाहिये ।

२. कनायत से कर जिन्दगानी वसर,
के-छोटी-सी चिड़िया का छोटा-सा-घर । —उर्दू शेर

३. सच्ची प्रसन्नता संतुष्ट मन से उत्पन्न होती है, अतः मन का सन्तोष पाने का प्रयास करो । —चुंगची

४. ईश भजन सारथी सुजाना,
विरति चर्म संतोष कृपाना । —रामचरितमानस

५. सन्तोष प्रयासों में है, उपलब्धि में नहीं । —गांधी

६. जो कुछ हमारे पास हो उसमें सन्तोष मानना ठीक है, लेकिन हम जो कुछ हैं, उसमें सन्तुष्ट रहना कभी ठीक नहीं ।
—मैकिन्तोस

७. सन्तोषस्त्रिषु कर्त्तव्यः, स्वदारे भोजने धने ।
त्रिषु नैव च कर्त्तव्योऽध्ययने जपदानयोः ।।
—चाणक्यनीति ७।४

अपनी स्त्री, भोजन, धन—इन तीनों में संतोष करना चाहिये और अध्ययन, जप और दान—इन कार्यों में संतोष नहीं करना चाहिये ।

८. ए टब वाज़ लार्ज एनफ फॉर डायोजिनिस,
बट ए वर्ल्ड वाज़ टू लिटिल फॉर एलेगजेण्डर। —कोल्टन

सच्चा संतोष इस बात पर निर्भर नहीं है कि हमारे पास क्या है? डायोजीनीज़ के लिए एक नाँद (टब) भी काफी बड़ी थी; लेकिन सिकन्दर के लिए एक दुनियाँ भी निहायत छोटी थी।

९. व्हाट एवर गॉड इज़.... —अंग्रेजी कहावत

ईश्वर जो भी करता है अच्छा ही करता है।

४ संतोषी

१. सन्तोषपाहन्नरए स पुज्जो। —दशवैकालिक ६।३।५

जो संतोष की प्रधानता में अनुरक्त है, वह पूज्य है।

२. सर्वाः सम्पत्तयस्तस्य, सन्तुष्टं यस्य मानसम्।
उपानद्गूढपादस्य, ननु चर्मावृतैव भूः॥
—हितोपदेश २।१४४

जिसका मन संतुष्ट है, सभी सम्पत्तियाँ उसके निकट हैं, क्योंकि जिसके पैरों में जूतियाँ पहनी हुई हैं, उसके लिये सारी जमीन चमड़े से मढ़ी हुई है।

३. पुंसोऽयं संसृतेर्हेतु-रसन्तोषोऽर्थकामयोः।
यदृच्छयोपपन्नेन, सन्तोषो मुक्तये स्मृतः॥
—भागवत ८।१९।२५

धन और काम का असंतोष मनुष्य को संसार में भटकाता है और जो भी मिल जाय उसमें सन्तुष्ट रहना मुक्ति का हेतु है।

४. काँटेनमेन्ट इज़ हेप्पीनेस। —अंग्रेजी कहावत

सन्तुष्टस्य सदा सुखम्। (सन्तोषी सदा सुखी)

५. संतोषामृततृप्तानां, यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
कुतस्तद् धनलुब्धाना-मितश्चेतश्च धावताम्॥
—चाणक्यनीति ७/३

संतोषरुप अमृत से तृप्त, शान्त-हृदय-पुरुषों के पास जो सुख है;
इधर-उधर भटकते हुए धन-लोभी पुरुषों के पास वह सुख कहाँ ?

६. द्वे मे, भिक्खवे, पुग्गला दुल्लभा लोगस्मि ।
तित्तो च तप्पेता च । —अंगुत्तरनिकाय २/११/३

भिक्षुओं ! संसार में दो व्यक्ति दुर्लभ हैं–
एक वह जो स्वयं तृप्त है, सन्तुष्ट है, और दूसरा वह जो दूसरों को तृप्त अर्थात् सन्तुष्ट करता है ।

७. सर्वोत्कृष्ट मनुष्य वह है, जिसे सर्वोत्कृष्ट संतोष हो ।
—स्पेंसर

८. सबसे अधिक प्राप्ति उसी को होती है, जो संतुष्ट होता है ।
—शेक्सपियर

९. मनसि च परितुष्टे, कोऽर्थवान् को दरिद्रः ?
—भर्तृहरि वैराग्यशतक ४०

मन में संतोष हो जाने के बाद कौन धनवान और कौन गरीब ?

१०. संतोसिणो नो पकरेंति पावं । —सूत्रकृतांग १०/१५
संतोषी व्यक्ति पाप कर्म नहीं करते ।

११. **संतोषी पतिपत्नी :–**
रांका सेठ जो सन् १३१३ पंढरपुर में रहते थे, अपनी पत्नी 'बांका' के साथ कहीं जा रहे थे । देवता ने उनके संतोष की परीक्षा करने के लिए सोने की थैली रास्ते में रखदी । सेठ ने उसे धूल से ढंक दी । सेठानीने कहा–'धूल पर धूल डालने की क्या जरूरत है ?'

५ असंतोष

१. असंतुट्ठाणं इह परत्थ य भयं भवति ।

—आचाराङ्ग चू० १।२।२

असन्तुष्ट व्यक्ति को यहाँ-वहाँ, सर्वत्र भय रहता है ।

२. असन्तोषवतः सौख्यं, न शक्रस्य न चक्रिणः ।

—योगशास्त्र २।११६

असन्तोषी इन्द्र और चक्रवर्ती को भी सुख नहीं हो सकता ।

३. न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः । —कठोपनिषद् १।१।२७

मनुष्य की तृप्ति धन से नहीं हो सकती ।

४. चिड़िया कहती है—काश ! मैं बादल होती । बादल कहता हैं—काश ! मैं चिड़िया होता । नदी का एक किनारा कहता है—सम्पूर्ण सुख परले किनारे पर है और दूसरा कहता है—सुख सब पहले ही किनारे पर है । —टैगौर

५. कसिणंपि जो इमं लोगं, पडिपुन्नं दलिज्ज इक्कस्स ।
तेणावि सेन सन्तुस्से, इ इ दुप्पूरए इमे आया ।।

—उत्तराध्ययन ८।१६

धन-धान्य आदि से परिपूर्ण यह समग्र विश्व भी यदि एक मनुष्य को दे दिया जाय, तो भी वह सन्तुष्ट नहीं होगा, क्योंकि यह असन्तुष्ट आत्मा दुर्भर है ।

६. तृप्तो न पुत्रैः सगरः, कुचिकर्णो न गोधनैः ।
न धान्यैस्तिलकः श्रेष्ठी, न नन्दः कनकोत्करैः ॥

—योगशास्त्र २।११२

चक्रवर्ती 'सगर' साठहजार पुत्र पाकर भी सन्तोष न पा सका, कुचिकर्ण बहुत-से गोधन से तृप्ति का अनुभव न कर सका,तिलक श्रेष्ठी धान्य से तृप्त नहीं हुआ और नन्दराजा स्वर्ण के ढेरों से भी शान्ति नहीं पा सका ।

७. असन्तोष चाहिए ही, किन्तु वह असन्तोष खुद के बारे में हो ! —गांधी

८. असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः, सन्तुष्टाश्च महीभुजः ।

—चाणक्यनीति ८।१८

असन्तोषी ब्राह्मण और सन्तोषी राजा ये नष्ट हो जाते हैं ।

६ लोभ

१. लोहो सव्वविणासणो। —दशवैकालिक ८।३८

लोभ सब गुणों का नाश करनेवाला है।

२. लोभो व्यसनमन्दिरम्। —योगसार

लोभ आपत्तियों का घर है।

३. लोभः प्रतिष्ठा पापस्य, प्रसूतिर्लोभ एव च।
द्वेष-क्रोधादिजनको, लोभः पापस्य कारणम्॥ —भोजप्रबन्ध

लोभ पाप की प्रतिष्ठा है, लोभ ही पाप की माता है और राग-द्वेष को पैदा करनेवाला लोभ ही पाप का मूल कारण है।

४. ग्रास्प ऑल लूज ऑल। —अंग्रेजी कहावत

लालच बुरी बलाय।

५. लोभमूलानि पापानि, रसमूलानि व्याधयः।
स्नेहमूलानि शोकानि, त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भव॥
—उपदेशमाला

लोभ पापों का मूल है, रसास्वादन रोगों का मूल है और स्नेह शोकों का मूल है। इन तीनों को त्यागकर सुखी बनो!

६. लोहाओ दुहओ भयं। —उत्तराध्ययन ६।५४

लोभ से इह लोक-परलोक, दोनों में भय प्राप्त होता है।

७. लोभाद्धर्मो विनश्यति । —महाभारत-शान्तिपर्व

लोभ से धर्म का नाश होता है ।

८. लोभात् क्रोधः प्रभवति, क्रोधाद द्रोहः प्रवर्तते ।
द्रोहेण नरकं याति, शास्त्रज्ञोपि विचक्षणः ॥
—भोजप्रबन्ध २

लोभ से क्रोध प्रकट होता है, क्रोध ने द्रोह की प्रवृत्ति होती है ओर द्रोह से निपुण शास्त्रज्ञ भी नरक को प्राप्त हो जाता है ।

९. अहो ! लोभस्य साम्राज्य-मेकच्छत्रं महीतले ।
—योगशास्त्र

आश्चर्य है ! जगत में लोभ का एकछत्र राज्य चल रहा है अर्थात् न्यूनाधिक मात्रा में सारा ही संसार इसमें फंस रहा है ।

१०. जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवड्ढइ ।
दो मासकयं कज्जं, कोडिए विन निट्ठियं ॥
—उत्तराध्ययन ८।१७

ज्यों-ज्यों लाभ बढ़ता है, त्यों-त्यों लोभ बढ़ता है, लाभ से लोभ घटता नहीं प्रत्युत बढ़ता ही है । देखो ! दो मासा सोने से होनेवाला कपिल ब्राह्मण का काम करोड़ों से भी नहीं हो सका ।

११. दी मोर दे गैट दि मोर दे वान्ट । —अंग्रेजी कहावत

जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई । —रामचरितमानस

१२. गर्मी के बुखार में प्यास की तरह लाभ में लोभ और अधिक बढ़ता है ।

१३. ज्ञानी तापस सूर कवि, कोविद गुन-आगार ।
केहि की लोभ विडम्बना, कीन्ह न एहि संसार ॥
—रामचरितमानस

१४. लोभस्सेस अणुफ्फासे, मन्ने अन्नयरामवि ।
जे सिया सन्निहीकामे, गिही पव्वइए न से ॥

—दशवैकालिक ६।१९

भगवान् कहते हैं—मेरे मतानुसार थोड़ा सा भी संग्रह करना—यह लोभ का परिणाम है। जो साधु होकर संग्रह की इच्छा करता है, वह गृहस्थ ही है; किन्तु साधु नहीं।

७ **लोभ-त्याग**

१. दुक्खं हयं जस्स न होइ लोहो ।

—उत्तराध्ययन ३२।८

जिसके हृदय में लोभ नहीं है, उसका समग्र दुःख नष्ट ही हो गया ।

२. दिल से लोभ निकाल दें तो गले से जंजीरें निकल जाएं ।

—जाविदान-ए-खिरद

३. आल कोवेट आल लूज़ । —अंग्रेजी कहावत

अति लोभो न कर्तव्यः ।

४. अगर तुम लोभ को हटाना चाहते हो तो तुम्हें उसकी माँ अय्यासी को हटाना चाहिए ।

—सिसरो

लोभी

१. करेइ लोहं, वेरं बड्ढइ अप्पणो । —आचाराङ्ग २।५

जो लोभ करता है, वह अपनी ओर से चारों ओर वैर की वृद्धि करता है ।

२. ऽल्ल जी जम अ मालँ ऽव्व अ द्द द हू० ।

—कुरानशरीफ १०४।२

लानत है उस पर, जो दौलत का ढेर जुटाता है और जब तब बैठकर उसे गिनता है । वह सोचता है कि उसकी दौलत उसे अमर बना देगी ।

३. लोभाविष्टो नरो वित्तं, वीक्षते न स चापदम् ।
दुग्धं पश्यति मार्जारो, न तथा लगुड़ाहतिम् ।।

—सुभाषितरत्न भाण्डागार ७२

लोभी मनुष्य धन को देखता है, किन्तु उससे उत्पन्न होनेवाले दुःख को नहीं देखता । बिल्ली दूध को देखती है किन्तु लाठी के प्रहार को नहीं देखती ।

४. मातरं पितरं पुत्रं, भ्रातरं वा सुहृत्तमम् ।
लोभाविष्टो नरो हन्ति, स्वमिनं वा सहोदरम् ।।

—भोजप्रबन्ध ३

लोभी मनुष्य माता, पिता, पुत्र, भाई, मित्र, स्वामी एवं सहोदर

को भी मार डालता है ।

५. कावेचस् मैन आर बैड स्लीपर्स । —अंग्रेजी कहावत

लोभी आदमी के आहार और निद्रा नहीं ।

६. अर्थातुराणां न गुरुर्न बन्धुः ।

—सुभाषितरत्न भाण्डागार १७६

धन के लोभी व्यक्ति न तो गुरु को देखते हैं और न स्वजन-बन्धुओं को ही देखते हैं ।

७. कीर्ति के लोभी-साधु यंत्र-मंत्र, डोरे-डांडे एव तेजी-मंदी बताकर अपने साधुत्व को खो रहे हैं ।

धन के लोभ में फँसकर वेश्याएँ हीरे जैसा अपना शरीर हर एक को सौंप रही हैं; ऐसे ही मास्टर, वकील, व्यास एवं ज्योतिषी लोग धन के लिये अपना अमूल्य ज्ञान बेच रहे हैं ।

८. मीठै के लालच में ऐंठो खावै । —राजस्थानी कहावत

९. सन् १९३१-३२ में कांग्रेसियों की प्रभातफेरी में जाने से जेल होने के कारण मात्र पांच-सात आदमी रह गये। पतासे बांटने शुरू किये तो पुनः ४०-५० की संख्या होने लगी ।

१०. राज्य के लोभी औरंगजेब ने सूजा-दारा दोनों भाइयों को मरवाया एवं पिता शाहजहाँ को कैद किया ।

११. एकसौ अस्सी रुपयों के लोभवश वेदान्ती पंडित वेश्या के हाथ से खाने को तैयार हो गए ।

१२. लोभी सेठ के प्राण अटक रहे थे। एक साधु ने उसे सूई देकर कहा—यह मेरे पूर्वजों के पास पहुँचा देना।
सेठ—यह साथ नहीं चल सकती।
साधु—तो फिर तुम्हारी सम्पत्ति साथ कैसे चलेगी जिसके लिये तुम तड़फ रहे हो? अतः ममता छोड़कर, भगवान् को याद करो।

६ क्षमा

१. क्षमा ब्रह्म क्षमा सत्यं, क्षमा भूतं च भावि च ।
क्षमा तपः क्षमा शौचं, क्षमयेदं धृतं जगत् ॥
—महाभारत वनपर्व २६।३७

क्षमा ब्रह्म है, सत्य है, भूत और भविष्यत् है । क्षमा ही तप है और क्षमा ही शुद्धि है । क्षमा ने ही इस जगत् को धारण कर रखा है ।

२. नरस्य भूषणं रूपं, रूपस्याभूषणं गुणः ।
गुणस्य भूषणं ज्ञानं, ज्ञानस्याभूषणं क्षमा ॥ —क्षेमेन्द्र

नर का भूषण रूप है, रूप का भूषण गुण हैं, गुण का भूषण ज्ञान है और ज्ञान का भूषण क्षमा है ।

३. क्षमया क्षीयते कर्म । —तत्त्वामृत

क्षमा से कर्मों का नाश होता है ।

४. खंतिएणं जीवे परिसहं जिणइ । उत्तराध्ययन २६।४६

क्षमा से प्राणी परिषहों को जीतता है ।

५. क्षमा के बिना जीवन रेगिस्तान है, प्रत्यक्ष जीवन में मैंने यह देखा है । —नेहरू

६. क्षमा गुणो ह्यशक्तानां शक्तानां भूषणं क्षमा ।
—विदुरनीति १।५४

क्षमा अशक्तों के लिए गुण है और शक्तों के लिए आभूषण है।

७. क्षमा रूपं तपस्विनाम्। —चाणक्यनीति ३।६

क्षमा तपस्वियों का रूप-सौन्दर्य है।

८. कोहविजएणं जीवे खंतिं जणयइ। —उत्तराध्ययन २६।६७

क्रोध को जीतने से जीव क्षमा को उत्पन्न करता है।

६. यदि विश्व को आत्मवत् समझा जाय तो किसी भी अपराधी पर क्रोध उत्पन्न न हो। देखिए—दाँतों से जीभ कट जाती है, पैर से पैर के ठोकर लग जाती है, हाथ या कपड़े से आँख में चोभ आजाती है, फिर भी दाँत, पैर आदि पर क्रोध नहीं आता, कारण-उनमें अपनत्व की भावना है!

१०. उपकारापकाराभ्यां, विपाकाद् वचनाद् यथा।
धर्माच्च समये क्षान्तिः, पञ्चधा हि प्रकीर्तिता॥

समय पर पाँच कारण से क्षमा की जाती है।

(१) उपकार का स्मरण करते हुए।

(२) क्रोध करने से सामने वाला व्यक्ति अपकारी-शत्रु न बन जाय-ऐसे सोचते हुए।

(३) क्रोध के विपाक-फल का चिन्तन करते हुए।

(४) आगम वचनों का विचार करते हुए।

(५) तथा धर्म-स्वभाव से ही।

११. चार बातें हरएक को सहन करनी पड़ती हैं—

(१) सेवाभावी का क्रोध

(२) कमाऊ पुत्र का रोब

(३) दुधारू गाय की लात,

(४) दवा की कटुता।

१२. सहन करना गुण भी है, शस्त्र भी।

१३. क्षमा शत्रौ च मित्रे च, यतीनामेव भूषणम्।
अपराधिषु सत्त्वेषु, नृपाणां सैव दूषणम्॥

—हितोपदेश ३।१७८

शत्रु में और मित्र में क्षमा करना यतियों का ही भूषण है। राजाओं के लिए अपराधि जनों में वही क्षमा दोष है।

१० क्षमा का उपदेश

१. खंतिं सेविज्ज पंडिए। —उत्तराध्ययन १।६

पण्डित पुरुष को क्षमा की आराधना करनी चाहिए।

२. पियमप्पियं सव्वतितिक्खएज्जा। —उत्तरा० २१।१५

प्रिय-अप्रिय सब शांतिपूर्वक सहन करो!

३. अप्पाहारे तितिक्खए। —आचारांग ८।८

विद्वान् अल्पाहारी होता हुआ क्षमावान् बने।

४. हम्ममाणो न कुपेज्जा, वुच्चमाणो न संजले।

—सूत्रकृतांग ६।३१

साधक पुरुष मारने पर क्रोध न करे और गाली आदि देने पर द्वेष न करे!

५. अक्कोधेन जिणे क्रोधं। —धम्मपद २२३

क्षमा से क्रोध को जीतना चाहिए।

६. क्षमा करने की आदत डाल, नेकी का हुक्म देता जा और जाहिलों से दूर रह! —कुरानशरीफ ७।१६६

११ क्षमावान

१. यस्य क्षान्तिमयं शस्त्रं, क्रोधाग्नेरुपशामनम्।
नित्यमेव जयस्तस्य, शत्रूणामुदयः कुतः॥
स शूरः सात्त्विको विद्वान्, स तपस्वी जितेन्द्रियः।
येन क्षान्त्यादिखड्गेन, क्रोधशत्रुर्निपातितः॥

—पद्मपुराण

जिसके पास क्रोध-अग्नि को शांत करने वाला क्षमाशस्त्र है, उसकी सदा जय होती है। क्योंकि वहाँ शत्रुओं का उदय ही नहीं होता। वही शूर है, बलशाली है, विद्वान है, तपस्वी एवं जितेन्द्रिय है, जिसने क्षान्त्यादि खड्ग द्वारा क्रोध-शत्रु को नष्ट कर दिया।

२. क्रोधी तो कुढ़-कुढ़ बलै, जिम-जिम उठै झाल।
क्षमावन्त मन में खुशी, जाणै मिसरी पीधी गाल॥

—राजस्थानी दोहा

३. क्षमा धर्मः क्षमा यज्ञः, क्षमा वेदाः क्षमा श्रुतम्।
य एतदेव जानाति, स सर्वं क्षन्तुमर्हति॥

—महाभारत वनपर्व २९।३६

जो क्षमा को धर्म, यज्ञ, वेद एवं श्रुत रूप में जानता है वही क्षमा कर सकता है।

४. खंतिसूरा अरिहंता। —स्थानांग ४।३।३१७

अरिहंत भगवान् क्षमा करने में शूर होते हैं।

५. क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके पास गरल हो ;
उसको क्या ? जो दन्तहीन, विषरहित विनीत सरल हो।
जहाँ नहीं सामर्थ्य शोध की, क्षमा वहाँ निष्फल है ;
गरल घूंट पी जाने का, मिष है वाणी का छल है ॥

—कुरुक्षेत्र 'दिनकर'

६. क्षमा बड़न को चाहिए, छोटों को उत्पात।
का 'रहीम' हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात ॥

७. जो गुस्सा पी जाते हैं और लोगों को माफ कर देते हैं, अल्लाह ऐसी नेकी करने वालों को प्यार करता है।

—कुरान. सू. ३ आ. १३४

८. भिक्षुओं ! तुम्हें मृदु-कठोर, शत्रुभाव से-मित्रभाव से, कामका - निकम्मा, बखत-बेबखत तथा सच्चा-झूठा कोई कुछ भी कहे, तुम क्षमामूर्ति बन जाना, पृथ्वीवत् धीर, आकाशवत् विशाल तथा गंगानदीवत् तृण से प्रज्वलित न होने वाले बनना, चाहे तुम्हें कोई काट भी डाले तो भी क्रोध मत करना !

—गौतमबुद्ध

१२ असह्य बातें

१. सतर सौ मां औगणीस सौ नीं भूल । —गुजराती कहावत

२. पंसेरी में पाँच सेर री भूल अनें मण में चालीस सेर को धोखो।
—राजस्थानी कहावत

३. सोना करतां घड़ामण मोंघुं, रोटला करतां य अथाणुं बध्युं
—गुजराती कहावत

४. पाई नीं भाजी ने टका नो बघार । " " "

५. छिदाम रो छाजलो टको गंठाई रो । —राजस्थानी कहावत

● पइसै री डोकरी टको सिरमुंडाई रो । " " "

६. एक गाडर सातां रो सीर, पिउजी रंधावै नित की खीर ।
चोहटे बैठा छास पुकारै, कहो सखि ! अणख आवै क नहिं आवै?

● एक बलद जिणमें ही बांडो, पिउजी लदावै नितको टांडो ।
वलि बालद-बालद करता आवै, कहो सखि ! अणख आवै क नहिं आवै ?

● एक गेहूँ जिणमें ही सलियो, पिउजी रंधावै नित रो दलियो वले
ल्हापी ऊपर घी मंगावै कहो सखि ! अणख आवै क नहिं आवै ?
—मारवाड़ी कविता

७. खूद गधेड़ा खाय, पेला री बाड़ी पड़या ।
आ अण जुगती आय, रड़कै चित्त में राजिया !

13 क्षमा के उदाहरण

१. भगवान् महावीर को संगम देवता ने भीषण उपसर्ग किए। बीच में एक दिन पूछा—मुझे आप कैसा समझते हैं? प्रभु ने कहा—अच्छे मुनाफे से माल बिकवानेवाले दलाल के समान महान् उपकारी।

२. एक ब्राह्मण महात्मा बुद्ध का शिष्य बना। उसका भाई बुद्ध को गालियां देने लगा। शान्त बुद्ध ने कहा—तुम्हारा माल मेरे यहाँ नहीं खपता, अतःमैं तो नहीं लेता।

३. **बुद्ध और पूर्ण का सम्वाद**—

बुद्ध—अनार्य गाली देंगे तो?
पूर्ण—उपकार मानूंगा।
बुद्ध—हाथ से मारेंगे तो?
पूर्ण—सोचूंगा कि शस्त्र से तो नहीं मारा!
बुद्ध—शस्त्र से मारेंगे तो?
पूर्ण—सोचूंगा कि जान से तो नहीं मारा!
बुद्ध—अगर जान से मारेंगे तो?
पूर्ण—सोचूंगा कि आत्मा अजर-अमर है।

४. तिरुवल्लुवर शान्त बैठे थे। दो साड़ियाँ पड़ी थीं। युवक

ने पूछा–क्या कीमत है ? उत्तर—दो रुपया । युवक ने दो टुकड़े कर के पूछा—अब ? उत्तर—एक रुपया । युवक टुकड़े करता ही गया एवं तिरुवल्लुवर शान्त रहे । आखिर युवक पैर पकड़ कर माफी मांगने लगा ।

—जैनदर्शन और संस्कृतिपरिषद् पृष्ठ २८

५. महात्मा ईसू को शूली पर चढ़ाया गया, तब उसने प्रभु से प्रार्थना की—

"Forgive them father ! thay Know not what thay do"

(फॉरगिव देम फादर ! दे नो नॉट वाट दे डू)

अर्थात् हे प्रभो ! उन्हें क्षमा करो ! क्योंकि वे नहीं जानते कि स्वयं क्या कर रहे हैं ?

६. नीति का उपदेश करने पर महात्मा सोक्रेटीस को कैद करके जहर का प्याला पिलाने का हुक्म दिया गया तब क्रीटो ने कहा—भाग जाइए !

महात्मा—सरकार का कायदा तोड़ना ठीक नहीं ।

क्रीटो—हमें उपदेश दीजिए !

महात्मा—न्यायी कभी दुःखी नहीं होता, अन्यायी सुखी नहीं होता । अन्याय करने की अपेक्षा सहन करने में अधिक लाभ है ।

- एक दिन इनकी स्त्री ने क्रुद्ध होकर बड़बड़ाते हुए जूठन का कुंडा इनके शिर पर उड़ेल दिया । महात्मा ने हँसते हुए कहा—गरजने के पश्चात् मेघ बरसता ही है ।

७. कबीरजी नंगे शिर नहाने तालाब पर जा रहे थे। उन्हीं के दर्शनार्थ आनेवाले कई जमींदार मिले। नंगे शिर देखकर उन्हें पीटते हुए कहने लगे—नालायक! संत कबीर के दर्शनार्थ जाते समय तूने अपशकुन कर दिया। ज्यों-त्यों छूटकर कबीरजी नहाने गए और वे सब पूछते-पूछते उनके घर आए। थोड़ी देर बाद जब कबीरजी नहाकर वापस आये तब सबने पैर पकड़ कर माफी मांगी।

८. महात्मा तुकाराम एक बार खेत से गन्ने लेकर आ रहे थे। रास्ते में लोग मांगते गए और वे देते गए। घर आये तब मात्र एक गन्ना शेष रहा। स्त्री के पूछने पर सच्ची हकीकत कही। उसने क्रुद्ध होकर वह गन्ना छीनकर उन्हीं के माथे पर देमारा। टूटकर दो टुकड़े हो गए। महात्मा ने कहा—बहुत अच्छा हुआ। दो टुकड़े करने ही थे, चलो! सहज ही में हो गए।

९. भर्तृहरि को किसी ने गालियाँ दीं तब उन्होंने कहा—

ददतु-ददतु गालिर्गालिमन्तो भवन्तो,
वयमिह तदभावाद् गालिदानेऽप्यसक्ताः।
जगति विदितमेतद् दीयते विद्यमानं,
नहि शशकविषाणं कोपि कस्मै ददाति॥

चाहे जितनी गालियाँ दें! आप ही गालिमान बनेंगे। हम तो बदले में गाली दे नहीं सकते, क्योंकि हमारे पास गाली है ही नहीं। जगत में वही चीज दी जाती है, जो विद्यमान हो। खरगोश का सींग कोई किसी को भी नहींदे सकता।

१०. **दयानन्दसरस्वती**—इन्हें आखिरी वक्त जब शीशा पिलाया गया तब ये समझ गये कि अब मैं नहीं बच सकूंगा; अतः मेरे निमित्त किसी को दुःख न हो; यों सोचकर जिसने उन्हें दूध में शीशा पिलाया था उससे कहा—भाई ! अब तू यहाँ से भाग जा अन्यथा मार दिया जाएगा।

११. **राजारणजीतसिंह**—किसी बालक के हाथ से राजा के सिर में पत्थर लगा, सिपाही उसे मारने-पीटने लगे। राजा ने उसे मोती का हार देते हुए कहा—वृक्ष भी पत्थर के बदले फल-फूल देते हैं, मैं तो मनुष्य और मनुष्यों में भी राजा हूँ।

१२. **आचार्यभिक्षु**—चर्चा करते समय एक व्यक्ति ने क्रुद्ध होकर भिक्षुस्वामी के शिर में ठोला मारा। श्रावक गर्म होने लगे। स्वामीजी ने उन्हें रोकते हुए कहा—दो पैसों की हांडी को भी खरीदते वक्त मनुष्य बजाकर देखता है। क्या पता ? इसे भी गुरु बनाने होंगे। बाद में उस व्यक्ति ने समझकर गुरुधारणा की।

१३. वि. सं. १९९३ का चातुर्मास पूर्ण करके **आचार्य श्री तुलसी** बीकानेर के रांघड़ी-चौक में होकर पधार रहे थे और हजारों श्रावक-श्राविकाएँ उनके साथ थे। स्थानकवासि-युवाचार्य श्री गणेशीलालजी ठीक उसी समय सामने से आ रहे थे और उनके श्रावकों द्वारा 'हट जाओ' 'हट जाओ' के नारे लगाए जा रहे थे। सहनशील आचार्य श्री तुलसी स्वयं

मार्ग से हट गये एवं अनुयायियों को राह नहीं रोकने की प्रेरणा दी। पता पाकर बीकानेर नरेश श्री गंगासिंहजी ने बहुत प्रशंसा की।

१४. गोली से वार करने पर भी हत्यारे **नाथूराम विनायक गोडसे** के प्रति **गाँधीजी** के मन में क्रोध नहीं था।

१५. अमरीका के **रैले साहब** के हाथ पर किसी ने क्रुद्ध होकर थूक दिया। पुलिस-कप्तान ने पिस्तौल उठाई। साहब ने उन्हें रोकते हुए कहा—इसका इलाज तो कपड़े से भी हो सकता है, यों कहकर रुमाल से पोंछ लिया।

१६. राजकुमार को किसी ने गालियाँ दीं, कुमार ने कहा--भाई चाहे तो आप मुझे और भी गालियाँ दे सकते हैं, क्योंकि मुझमें बहुत ज्यादा दुर्गुण हैं।

१७. एक क्षमावान-तपस्वी की परीक्षा करने के लिए एक दुष्ट व्यक्ति ने उनसे चिलम माँगी। जवाब मिला—मैं तो पीता नहीं अतः मेरे पास नहीं है। बस **धूल तेरे योग में, साला सिद्ध कहलाकर चिलम भी नहीं रखता**–ऐसे एक घण्टे तक गालियां देता रहा। आखिर हारकर चुप हुआ, तब योगी ने शर्बत का प्याला पिलाकर कहा–बेटा ! दिमाग ठण्डाकर ले।

१८. कई ग्रामीण तीर्थ करने गए। चौधरी ने गुस्सा छोड़ा। गांगेडा (मृत्यु-भोजन) के प्रसंग पर दुहा देने एवं सीरा बनाने के समय लोगों ने उसे नहीं बुलाया। न्यौता तथा बुलावा भी नहीं दिया। बिना न्यौते ही खाने आ बैठा।

लोगों ने सीरे पर धूल डाल दी, फिर भी चौधरी ने गुस्सा नहीं किया। सबने क्षमा मांगी।

१९. **माषतुष**--किसी अल्पबुद्धि मुनि को साथी हास्य में **पण्डित-जी** कहने लगे। गुरु ने उस मुनि को 'मारुष-मातुष' सिखाया उसने भूलकर 'माषतुष' याद कर लिया। अब साथी मुनि उसे 'माषतुष' नाम से पुकारने लगे। मुनि शान्त भाव से निम्नलिखित भाव का चिन्तन करता हुआ केवलज्ञानी बन गया—

अचेतनमिदं दृश्य - मदृश्यं • चेतनं ततः।
क्व रुष्यामि क्व तुष्यामि, मध्यस्थोहं भवाम्यतः।

दृश्यपदार्थ अचेतन है और चेतन-आत्मा अदृश्य है, अतः किसपर रोष करूं एवं किसपर तोष करूं! मुझे तो मध्यस्थभाव में रमण करना ही उचित है।

२०. किसी ने एक पादरी महोदय से पूछा--आपमें सहनशक्ति कैसे आई?

उत्तर मिला---ऊपर की ओर देखकर सोचता हूँ कि मैं तो वहाँ (मोक्ष) जाना चाहता हूँ, फिर यहाँ के व्यवहार में मन क्यों बिगाड़ूं? नीचे की तरफ देखकर विचार करता हूं कि सोने-बैठने-उठने के लिए मुझे कितनी-क-जमींन चाहिए? आस-पास देखने पर मन में आता है कि लोग मेरे से भी अधिक दुःख सहन कर रहे हैं।

२१. **मुहम्मदसाहब** की तलवार की मूठ पर ये चार वाक्य खुदे

हुए थे—

(१) तेरे साथ अन्याय करे उसे क्षमा करदे !

(२) काटकर अलग करनेवाले से मेलकर !

(३) बुराई करनेवाले के साथ भलाईकर !

(४) सदा सच्ची बात कह ! चाहे वह तेरे खिलाफ ही क्यों न हो !

२२. **हजरतमुहम्मद** जब नमाज पढ़ने मस्जिद में जाते, तब एक स्त्री उन पर कूड़ा-करकट डाला करती थी एवं वे क्षमा कर लेते थे। एक दिन सिरपर कूड़ा नहीं पड़ा, मुहम्मद साहब उसे बीमार समझकर सुख पूछने उसके पास गए। क्षमा से प्रभावित होकर उसने माफी माँगी एवं भक्त बनी।

२३. **एकनाथ** महाराज गोदावरी नदी के किनारे पर **पेठण** गांव में रहते थे एवं अद्भुत क्षमावान थे। **कुचर चूंतरे** पर एक ब्राह्मण ने लोगों से २००) रुपये माँगे। एक मसखरे ने कहा—एकनाथजी को गुस्सा पैदा कर दो तो रुपये मिल सकते हैं ! ब्राह्मण उनके घर गया। वे भजन कर रहे थे ब्राह्मण उनकी गोद में बैठ गया। गुरुजी शान्त रहे। भोजन के समय **गिरिजाबाई** (उनकी पत्नी) घी परोसने आई। तब उसके कन्धे पर जा चढ़ा। शांत गुरुजी बोले—हरिमित्र की माँ ! ध्यान रखना कहीं मेहमान गिर न जाये। वह बोली—मुझे पूरा ध्यान है, नहीं गिरने दूंगी। हरिमित्र कई बार कंधे पर चढ़ जाया करता है। ब्राह्मण

शर्मिन्दा होकर चरणों में झुक गया।

२४. **एकनाथजी** एकबार नदी से स्नान करके आ रहे थे। एक मुसलमान ने शिर पर थूक दिया। वापस जाकर नहाये। इस प्रकार एक दिन में १०८ बार नहाना हुआ। आखिर वह मुसलमान चरणों में गिरकर क्षमा माँगी। गुरुजी बिल्कुल शान्त थे।

२५. जालौर की धर्मशाला में खड़े हुए सन्त **मनोहरलालजी** ने ऊपर से थूका। नीचे चम्पाबाई पर पड़ा। उसने खूब गालियाँ दीं। बदले में उन्होंने उसे पुत्र होने का वरदान दिया–

चम्पा चुपकी नार ही, दी संता नैं गाल।
होसी जीतो-जागतो, चिरंजीवी तोहि लाल॥

२६. **सुभाषबाबू** भाषण कर रहे थे। किसी व्यक्ति ने उन पर एक जूता फैंका। उन्होने कहा–"जिस सज्जन ने एक जूता फैंका है वे दूसरा जूता फेंकने की कृपा करदें ताकि मेरे पहनने के काम आ जाय!"

१४ क्षमापना

१. खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणइ ॥

—आवश्यक अ० ४

चौरासी लाख योनि के सभी जीवों से मैं क्षमा चाहता हूं । सभी जीव मुझे क्षमा करें । मेरा सभी प्राणियों के साथ मैत्रीभाव है । किसी के साथ मेरा वैरभाव नहीं ।

२. इच्छाकारेण संदिस्सह भयवं ! खामेउं अब्भट्ठिओओहं । जं अपत्तियं परपत्तियं भत्ते पाणे विणए वेयावच्चे आलावे संलावे उच्चासणे समासणे अंतरभासाए उवरिभासाए जं किंचि मज्झ विणयपरिहीणं, सुहुमं वा वायरं वातुब्भे याणह, अहं न याणामि, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

—आवश्यक अ० ४

हे प्रभो ! कृपया आदेश दीजिए, मैं आपके सम्मुख क्षमायाचना के लिए उपस्थित हुआ हूँ । (दिवस, पक्ष, मास, चतुर्मास, एवं वर्ष में) आहार-पानी के समय, विनय-वैयावृत्त्य एवं आलाप-संलाप करते समय, ऊँचे आसन पर या समान-आसन पर बैठते समय, तथा भाषण के बीच में या पहले-पीछे बोलते समय थोड़ी या ज्यादा अप्रतीति हुई हो, सूक्ष्म या स्थूल अविनय हुआ हो, जिसे आप जानते हैं, किंतु मैं नहीं जान पाता—उस अप्रतीति एवं

अविनय-सम्बन्धी पाप मेरे लिए निष्फल हों, अर्थात् उसकी मुझे माफी मिले। (गुरु से क्षमायाचना करते समय उपरोक्त पाठ बोला करते हैं।)

आयरिए उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुल-गणे अ।
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि ॥

सव्वस्स समणसंघस्स, भगवओ अंजलिं करीअ सीसे,
सव्वे खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि।

३. सव्वस्स जीवरासिस्स, भावओ धम्म-निहिअनिअचित्तो,
सव्वे खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि।

—संस्तारकप्रकीर्णक गाथा १०४-१०५-१०६

आचार्य,उपाध्याय, शिष्य, साधर्मिक, कुल और गण के प्रति मैंने जो क्रोधादि कषायपूर्वक व्यवहार किया है, उसके लिए मैं मन-वचन-कर्म से क्षमा चाहता हूं।

मैं नत्स्तक हो, हाथ जोड़कर पूज्यश्रमणसंघ से अपने सभी अपराधों के लिए क्षमा चाहता हूँ और उनके अपराध भी मैं क्षमा करता हूं।

धर्म से स्थिरबुद्धि होकर मैं सद्भावपूर्वक सब जीवों से अपने अपराधों के लिए क्षमा मांगता हूँ और उनके सब अपराधों को मैं भी सद्भावपूर्वक क्षमा करता हूँ।

४. जं जं मणेण बद्धं, जं जं वायाए भासिअं पावं।
जं जं काएण कयं, मिच्छा मि दुक्कडं तस्स ॥

—मरणसमाधि-प्रकीर्णक गाथा ३३६

मन-वचन और शरीर से मैंने जो पाप किये हैं, वे मेरे सब पाप मिथ्या हों!

५. जइ कसाय-उक्कडताए ण खामियं तो पज्जोसवणासु अवस्सं विउसमियव्वं। संजएहिं नाणीहिं जं च कयं सव्वं पज्जोसवणाए खमियव्वं। एवं कारंतेहिं संजयमाराहण-कया भवइ।
—निशीथ-चूर्णि. उ. १०

कषाय की उत्कटता से यदि क्षमायाचना न की गई हो तो पर्यूषण के अवसर पर किए हुए कलह को उपशान्त कर देना ही चाहिए। जो भी अपराध किया गया हो, ज्ञानी मुनि को पर्यूषण के समय सबकी क्षना माँगनी चाहिए। उक्त कार्य करने से मुनि आराधक होता है।

६. जो उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा।
—बृहत्कल्प भाष्य १।३५

जो कलह को उपशान्त करता है, उसकी आराधना होती है।

७. खमावणयाएणं पल्हायणभावं जणयइ।
—उत्तराध्ययन २६।१७

क्षमापन से प्रसन्नता के भाव पैदा होते हैं।

8. Forgiveness is the noblest revenge.
फारगिवनेश इज् दी नोबलेस्ट रीवेन्ज।
—अंग्रेजी कहावत

क्षमा करना सबसे अच्छा बदला है।

६. ही हू हैज नोट फारगिवन एन एनिमी, हैज् नोट यट टेस्टेड वन आफ दी स्वीब्लायम एंजोयमेन्ट आफ दी लाइफ।
—अंग्रेजी कहावत

जिसने अपने जीवन में शत्रु को क्षमा नहीं दी, उसने अभी तक

अपने जीवन का श्रेष्ठ-रस चखा ही नहीं।

१०. अगर तू अपनी आहुति देवता को देने आया है और पड़ौसी का अनबनाव याद आगया तो आहुति को मन्दिर की चौकी पर रखकर पहले जाकर पड़ौसी से क्षमा मांग।

—बाईबिल

११. पृथ्वी आदि से क्षमा मांगना तो ठीक ही है, किन्तु उन मुनीमों-नौकरों से क्षमा माँगों, जिनसे अधिक काम करवाया हो, उन ग्राहकों से क्षमा मांगो, जिनको खराब माल दिया हो, पशुओं से क्षमा माँगते समय ख्याल करो कि तुम्हारे जूते एवं कपड़े अहिंसक हैं या हिंसक ? विवाहादि के समय किए हुए अपव्यय का पश्चात्ताप करो! जिसके द्वारा तुम समाज में इंजिन जैसे बनकर डिब्बों जैसे गरीबों को हैरान किया है। मनोबंध घी-दूध-मिठाई खाने पर भी तुम्हारे में स्निग्धता, उज्ज्वलता और वचन की मधुरता नहीं आई, इसके लिए खेद प्रकट करो तथा दिनभर ज्ञानेन्द्रियों से पाप कर रहे हो, उनसे भी क्षमा मांगो!

१२. किसी ने पूछा—कसूरवार को कितनी दफा माफ करूँ ? मुहम्मद साहब चुप रहे। फिर पूछा तो आप बोले—हर रोज सत्तर दफा।

—तिरमजी

१३. पुढवी-दग-अगणि-मारुय, एक्केक्केसत्त जोणिलक्खाओ।
वण पत्तेय-अणंते, चउदस - जोणिलक्खाओ ॥१॥

विगलिंदिएसु दो-दो, चउरो चउरो य नारय-सुरेसु।
तिरिएसु होंति चउरो, चउदसलक्खा उ मणुएसु ॥

—प्रवचनसारोद्धार ९६८।९६९

पृथ्वी, पानी, अग्नि और वायु—प्रत्येक की सात-सातलाख योनि हैं। प्रत्येक वनस्पति की दसलाख और अनन्तकाय अर्थात् साधारण वनस्पतिकाय की चौदहलाख योनि हैं।

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय इन तीनों विकलेन्द्रियों में से प्रत्येक की दो-दोलाख योनि हैं। नारकी, देवता तथा तिर्यञ्चपंचेन्द्रिय की चार-चारलाख योनि हैं। मनुष्य की चौदहलाख योनि हैं। इस प्रकार कुल चौरासीलाख योनि हो जाती हैं।

१५ शम-शान्ति

१. ज्ञानस्य परिपाकोयं स शमः परिकीर्तितः । —ज्ञानसार

ज्ञान के परिपक्वफल का नाम **शम**-शान्ति है ।

२. निग्रहो बाह्यवृत्तीनां, दम इत्यभिधीयते —अपरोक्षानुभूति

बाह्यवृत्तियों का निग्रहकरना **दम** कहलाता है ।

३. शमो मन्निष्ठताबुद्धि-र्दम इन्द्रियसंयमः ।
तितिक्षा दुःखसंमर्षो, जिह्वोपस्थजयी धृतिः ॥
दण्डन्यासः परं दानं, कामत्यागस्तपः स्मृतम् ।
स्वभावविजयः शौर्यं, सत्यं च समदर्शनम् ॥

—भागवत ११।१६।३६-३७

भगवान में बुद्धि लगाना **शम** है । इन्द्रिय-संयम का नाम **दम** है । दुःख सहना **तितिक्षा** है । जिह्वा और जननेन्द्रियों पर विजय पाना **धृति** है । किसी से बैर नहीं करना, सबको अभय देना **दान** है । कामनाओं को त्यागना **तप** है । वासनाओं को जीतना **वीरता** है । और सत्यस्वरूप परमात्मा के दर्शन करना **सत्य** हैं ।

४. शांति रख दिल में हमेशा, छोड़ मत मर्याद को ।
सर्द लोहा काट देता, है गरम फौलाद को ॥

५. **शान्ति और मुक्ति का मार्ग—**

(१) अपनी इच्छा की अपेक्षा दूसरों की इच्छा पालन

करना सीख !

(२) अधिक की अपेक्षा थोड़े में संतुष्ट होना सीख !

(३) सदा छोटे समान की खोजकर और छोटा बन !

(४) सदा यह इच्छा एवं प्रार्थना कर कि—"प्रभु की इच्छा मेरे द्वारा पूर्ण हो।"

—टामस कॉम्पिस इमिटेशन ऑफ क्राइष्ट; (इसाईधर्म)

६. तबीयत हो यक्सु* तो होता हैं काम,
के दुविधा में माया मिलेगी न राम। —उर्दू शेर

७. विशुद्धपरिणामेन, शान्तिर्भवति सर्वतः। —तत्त्वामृत

शुद्धभावना से ही सब प्रकार की शान्ति मिलती है।

८. शांति ठीक वहां से शुरू होती है, जहां महत्त्वाकांक्षा का अन्त हो ! —यंग

९. जहां वासना है, वहां शान्ति नहीं ! जहां शान्ति है, वहां वासना नहीं !

१०. बुढ़िया की सुई झोंपड़ी में खोगयी। वह लैंप के प्रकाश में सड़क पर देखने लगी, किन्तु नहीं मिली। इसी प्रकार भौतिक-विलासों में सुख-शान्ति नहीं मिल सकती।

११. मौन के वृक्ष पर शान्ति का फल लगता है।

—अरबी कहावत

१२. आनन्द उछलता-कूदता जाता है और शान्ति मुस्कराती

* एक तरफ

हुई चलती हैं। —हरिभाऊ उपाध्याय

१३. मनुष्य की शान्ति की कसौटी समाज में ही हो सकती है, हिमालय की चोटी पर नहीं। —गांधी

१४. यदि शान्ति सम्मान के साथ नहीं रह सकती तो वह शान्ति नहीं कहला सकती।

१५. एक व्यक्ति ने एक साधु से शान्ति का रास्ता पूछा। साधु ने अपना मुंह फेर लिया। वह उधर जा खड़ा हुआ, फिर मुंह फेरा। तात्पर्य यह था कि भौतिक सुखों से मन मोड़ने पर ही शान्ति मिल सकती है।

१६ शांति की महिमा

१. शांति, सुख का सबसे सुन्दररूप है। —चैनिंग

२. शम एव परं तपः।

क्रोधादिक की शांति ही उत्कृष्ट तपस्या है।

३. शान्तता में एक शाही शान है। —वाशिंगटन इर्विन

४. शान्ति की विजय भी युद्ध की विजयों से कम नहीं कहला सकती। —मिल्टन

५. शमार्थं सर्व शास्त्राणि, विहितानि मनीषिभिः।

—सूक्तमुक्तावलि

शान्ति की प्राप्ति के लिए ही विद्वानों ने सब शास्त्र बनाए हैं।

६. योगारूढः शमादेव, शुद्ध्यन्त्यन्तर्गतक्रियः। —ज्ञानसार

अभ्यन्तरक्रिया का पात्र योगसाधना में लीन व्यक्ति 'शम' के द्वारा ही शुद्ध होता है।

७. शान्तिखड्गं करे यस्य, किं करिष्यति दुर्जनः।
अतृणे पतितो वह्निः, स्वयमेवोपशाम्यति ॥

—विदुरनीति १।५५

जिसके हाथ में क्षमारूपी तलवार है, उसका दुर्जन कर ही क्या सकता है? तृणरहित स्थान में पड़ी हुई अग्नि अपने-आप शान्त हो जाती है।

१७ शान्त

१. विहाय कामान् यः सर्वान्, पुमाँश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः, स शांतिमधिगच्छति ॥
—गीता २।७१

जो व्यक्ति शब्दादि समस्त विषयों को त्यागकर निःस्पृह रहता है तथा ममत्व और अहंकाररहित है, वही शान्ति को प्राप्त होता है ।

२. जो न तो लोगों को खुश करने की लालसा रखता है, न उनके नाखुश होने से डरता है, वही शांति का आनन्द लेता है । —कैम्पिस

३. पहले स्वयं शांत बन ! तभी औरों में शान्ति का संचार कर सकता है । —थामसकेम्पी

४. हे प्रभु ! मुझे अपना शांति का यन्त्र बना ! ताकि मैं जहाँ घृणा है, वहाँ प्रेम ला सकूं; जहाँ आक्रमण है, वहाँ क्षमा रख सकूं; जहां मतभेद है, वहां मेल-मिलाप कर सकूं; जहां भूल है, वहां सचाई ला सकूं; जहां अन्धकार है, वहां प्रकाश कर सकूं और जहां उदासी है, वहां प्रसन्नता ला सकूं ।

५. नवे वयसि यः शान्तः, स शान्त इति मे मतिः ।
धातुषु क्षीयमाणेषु, शांतिः कस्य न जायते ॥
—भागवत

यौवन के प्रारम्भ में जो शान्त-निर्विकार है, वही सच्ची शान्ति वाला है—ऐसी मेरी मान्यता है। धातुओं के क्षीण होने पर कौन शान्त नहीं होता !

६. अणुवसंतेणं दुक्करं दमसागरो। —उत्तराध्ययन १६।४२

जो व्यक्ति अनुपशांत है, उसके द्वारा इन्द्रियदमनरूप समुद्र से तरना कठिन है।

१८ समता

१. **सम** होना माने **अनन्त** होना, **विश्वमय** होना।

समग्र विश्वजीवन पर आत्मा का प्रभुत्व स्थापन करने की पहली सीढ़ी का नाम **समता** है। —अरविन्दघोष

२. समभाव ही समस्त कल्याण का पाया है। —विवेकानन्द

३. जब अन्तःकरण में अक्षुब्ध-शान्ति सदैव विराजमान रहे, तब समझना चाहिए कि समता प्राप्त हो गई।

—अरविन्दघोष

४. समयं सया चरे। —सूत्रकृतांग २।२।३

सदा समता का आचरण करना चाहिए।

५. समता सव्वत्थ सुव्वए। —सूत्रकृतांग २।३।१३

सुव्रती को सब जगह समता रखनी चाहिए।

६. न यावि पूयं गरहं च संजए। —उत्तराध्ययन २१।२०

मुनि पूजा और निन्दा-दोनों की चाह न करे अर्थात् समभाव रहे।

७. सेयंबरो वा, आसंबरो वा, बुद्धो वा, तहेव अन्नो वा।
समभाव - भाविअप्पा लहइ मोक्खं न संदेहो॥

—हरिभद्रसूरि

चाहे श्वेताम्बर हो, दिगम्बर हो, बुद्ध हो या कोई अन्य हो। समता से भवित आत्मा ही मोक्ष को प्राप्त करती है।

८. समयं तत्थुवेहाए, अप्पाणं विप्पसायए।

—आचाराङ्ग ३।३

अवांछनीय पदार्थों के प्रति समता-उपेक्षा रखते हुए आत्मा को प्रफुल्लित करो!

९. सव्वं जगं तु समयाणुपेही।
पियमप्पियं कस्स वि नो करेज्जा।

—सूत्रकृतांग १०।६

समग्र विश्व को जो समभाव से देखता है, वह न किसी का प्रिय करता है और न किसी का अप्रिय; अर्थात् समदर्शी अपने-पराये की भेद-बुद्धि से परे होता है।

१६ क्रोध

क्रोध से हानि

१. कोहो पीइं पणासेइ । —दशवैकालिक ८।३८

क्रोध प्रेम का नाश करता है ।

२. अहे वयइ कोहेण । —उत्तराध्ययन ६।५४

क्रोध से आत्मा नीचे गिरती है ।

३. कोहंधा निहणंति, पुत्तं मित्तं गुरुं कलत्तं च ।

क्रोधान्ध व्यक्ति पुत्र, मित्र, गुरु और स्त्री को भी मार डालता है ।

४. कोहेण अप्पं डहति परं च, अत्थं च धम्मं च तहेव कामं ।
तिव्वंपि वेरंपि करेंति कोधा, अधरं गतिं वावि उविंति कोहा ।।
—ऋषिभाषित ३६।१३

क्रोध से आत्मा 'स्व' एवं 'पर' दोनों को जलाता है, अर्थ-धर्म-काम को जलाता है, तीव्र वैर भी करता है तथा नीचगति को प्राप्त करता है ।

५. भस्मी भवति रोषेण, पुंसां धर्मात्मकं वपुः । —शुभचन्द्राचार्य

क्रोध से मनुष्यों का धर्मप्रवृत्तिरूप शरीर जल जाता है ।

६. पैशुन्यं साहसं द्रोह-मीर्ष्याऽसूयार्थदूषणम् ।
वाग्दण्डजं च पारुष्यं, क्रोधजोऽपि गणोष्टकः ।।
—मनुस्मृति ७।४८

(१) चुगली (२) दुस्साहस (३) वैर (४) दूसरे पर जलना (५) दूसरे के गुण में दोषदर्शन (६) अयोग्य धन लेना-देना (७) कठिन वचन (८) क्रूरता का वर्ताव—ये आठ व्यसन क्रोध से उत्पन्न होते हैं।

७. क्रोध भूल को दोष और सत्य को अविवेक बनाता है।
—प्लेटो

८. क्रोध समझदारी को बाहर निकालकर बुद्धि के दरवाजे के चटखनी लगा देता है। —प्लुटार्क

९. क्रोध की खुराक है—प्रीति, विनय और विवेक।
—जीवनसौरभ, पृष्ठ १७

१०. क्रोध करना दूसरे के अपराधों का बदला अपने से लेना है।
—पोप

११. क्रोध करना, बर्रों के छत्तों में पत्थर मारना है।
—मालाबारी कहावत

१२. क्रुद्ध अवस्था में आप क्षीण रहते हैं। कारण क्रोध अस्त्र स्वयं चालक को ही घायल करता है। —आरोग्य से

१३. अनेक व्यक्ति क्रोध से स्थानभ्रष्ट होकर १५० के बदले, ७५ के लिए भटक रहे हैं।

१४. छः वर्ष की पुत्री के साथ एक बहन जा रही थी। पुत्री ने दो पैसे का गुबारा माँगा। पैसे नहीं थे। क्रोधित होकर मां ने थप्पड़ मारा, लड़की सड़क पर गिर पड़ी और मोटर से कुचली गई।

२० क्रोध के दुर्गुण

१. क्रोधो मूलमनर्थानां, क्रोधः संसारवर्धनः।
धर्मक्षयकरः क्रोधस्तस्मात् क्रोधं विवर्जयेत् ॥

—पद्मपुराण

क्रोध अनर्थ का मूल हैं, संसार को बढ़ानेवाला है और धर्म का क्षय करनेवाला है अतः क्रोध को छोड़ना चाहिए।

२. क्रोधः शमसुखार्गला। —योगशास्त्र

क्रोध, शान्ति और सुख में रुकावट डालनेवाला है।

३. क्रोधो हि शत्रुः प्रथमो नराणाम्। —माघकवि

क्रोध मनुष्यों का सबसे बड़ा शत्रु है ।

४. क्रोधः प्राणहरः शत्रुः, क्रोधो मित्रमुखो रिपुः।
क्रोधो ह्यसिर्महातीक्ष्णः, सर्वं क्रोधोऽपकर्षति ॥

—वाल्मीकिरामायण ७५।६ प्र० २।२१

क्रोध प्राणों को लेनेवाला एक मित्र के रूप में आनेवाला शत्रु है। क्रोध अत्यन्त तीक्ष्ण-तलवार के समान और सबकी अवनति करनेवाला है।

५. हरत्येकदिनेनैव, ज्वरं षाण्मासिकं बलम्।
क्रोधेन तु क्षणे नैव, कोटिपूर्वार्जितं तपः ॥

एक दिन का ज्वर छः महीने का बल हरण करता हैं; किन्तु क्षण-

मात्र का क्रोध करोड़ों पूर्वाजित-तप को नष्ट कर देता हैं।

६. साढ़े नौ घंटे के शारीरिक श्रम से जितनी शक्ति क्षीरण होती है, पन्द्रह मिनट के क्रोध से उतनी ही शक्ति क्षीरण हो जाती है।

७. उत्तापकत्वं हि सर्वकार्येषु सिद्धीनां प्रथमोऽन्तरायः।

—नीतिवाक्यामृत १०।१३४

गर्म होना, सभी कार्यों की सिद्धि में पहला विघ्न हैं।

८. क्रोध एक क्षरिणक पागलपन है। —होरेस

२१ क्रोध की उत्पत्ति आदि

१. चउहिं ठाणेहिं कोहुप्पत्ति सिया, तंजहा-खेत्तं पडुच्च, वत्थुं पडुच्च, सरीरं पडुच्च, उवहिं पडुच्च।

—स्थानाङ्ग ४।१।२४६

चार कारणों से क्रोध की उत्पत्ति होती है–

(१) **क्षेत्र**–नरकादि आश्रित।

(२) **वस्तु**–घर अथवा सचित्त-अचित्त-मिश्र वस्तु आश्रित।

(३) **शरीर**–कुरूपादि आश्रित।

(४) **उपाधि**–उपकरण आश्रित।

२. **क्रोध उत्पत्ति के पाँच कारण–**

(१) **दुर्वचन**–दुर्योधन के दुर्वचन से श्रीकृष्ण को, दुर्मुख दूत के दुर्वचन से प्रसन्नचन्द्र राजर्षि को, गोशालक के दुर्वचन से **वेसियायन** बालतपस्वी को, खाती के दुर्वचन से सिंह को एवं बीरबल के दुर्वचन से बेगम को क्रोध उत्पन्न हुआ।

(२) **स्वार्थपूर्ति में बाधा**–इसके कारण रावण को जटायु पर, विभीषण एवं मन्त्रियों पर तथा सोमिलब्राह्मण को गजसुकुमाल मुनि पर क्रोध उत्पन्न हुआ।

(३) **अनुचितव्यवहार**–चुल्लनीमाता पर ब्रह्मदत्त चक्र-

वर्ती का, सुमंगलराजा पर सुदत्तमुनि का, यादव-कुमारों पर द्वैयापन ऋषि का, तथा कूलबालक शिष्य पर गुरुदेव का क्रुद्ध होना, अनुचित व्यवहार के कारण से था।

(४) **भ्रम**—मेतार्यमुनि पर सोनार को और स्कंदकमुनि पर पुरुषसिंहराजा को भ्रम के कारण क्रोध उत्पन्न हुआ।

(५) **विचार एवं रुचिभेद**—पिता - पुत्र में, सास-बहू में, भाई - भाई में, संघ और संस्थाओं में, विचार या रुचिभेद के कारण परस्पर भीषण संघर्ष हो जाया करता है।

३. क्रोध की जड़ अंहभाव है उसपर आघात लगते ही व्यक्ति उबल पड़ता है। —जीवन सौरभ, पृष्ठ ३४

४. क्रोध मूर्खता से शुरू होता है और पश्चात्ताप पर खत्म होता है। —पीथागोरस

५. कोपो नेत्रेण गम्यते। —चाणक्यनीति ५।७

क्रोध नेत्रों से जाना जाता हैं।

६. हम कहते हैं—गुस्सा आ गया, किन्तु आ कहाँ से गया? अन्दर ही तो था—पानी में पत्थर डालने से गन्दगी ऊपर आ जाती है। —विनोबा

७. चउपइट्ठिए कोहे पण्णत्ते, तं जहा-आयपइट्ठिए, परपइ-

ट्ठिए, तदुभयपइट्ठिए, अपइट्ठिए। —स्थानाङ्ग ४।१।२४९

क्रोध चार प्रकार का है:—

१- **आत्म-प्रतिष्ठित**-अपनी गल्ती पर होनेवाला।

२- **पर-प्रतिष्ठित**-दूसरे के निमित्त से होनेवाला।

३- **तदुभय-प्रतिष्ठित**-दोनों के निमित्त से होनेवाला।

४- **अप्रष्ठित**-निमित्त के बिना उत्पन्न होनेवाला।

८. 'तुलसी' इस संसार में, गाडा सताइस रीस।
सात गाडा संसार में, वैराग्यां में बीस॥

९. मुनीनां कोपश्चाण्डालः। —महाभारत पर्व १२

मुनियों के लिए क्रोध चाण्डाल के समान है। (धोबी और तपस्वी मुनि की कथा)

१०. छुआछूत का बहमी ब्राह्मण नदी पर भजन कर रहा था। निकट ही एक भंगी कपड़े धो रहा था। कुछ पानी के छींटे ब्राह्मण के ऊपर पड़ गए। उसने क्रुद्ध होकर भंगी को खूब पीटा और फिर स्नान करने लगा। इधर भंगी भी नहाने लगा।

ब्राह्मण ने पूछा—तू क्यों नहा रहा है?

भंगी ने कहा—मैं चाण्डाल थोड़े ही हूँ! तुम्हारे हृदय के क्रोधरूपी महाचाण्डाल ने मुझे छू लिया है। इसलिए स्नान कर रहा हूँ।

ब्राह्मण शर्मिन्दा हो गया।

११. पुलिस के इशारे पर मोटरगाड़ी रोक ली जाती है, पर भगवान के बार-बार कहने पर भी क्रोध नहीं रुकता।

१२. प्रकृतिकोपः सर्वकोपेभ्यो गरीयान्।

—नीतिवाक्यामृत १०।१६७

प्रकृति के कोप—जलप्रलय-पृथ्वीकंपन-अतिवृष्टि-अनावृष्टि आदि अन्य सभी कोपों से भयानक होते हैं।

२२

क्रोध की स्थिति

१. सज्जनों का क्रोध जलपर अंकित रेखा के समान होता है।

—रामकृष्ण

२. उत्तमस्य क्षणं कोपं, मध्यस्य, प्रहरद्वयम्,
अधमस्य त्वहोरात्रं, नीचस्य मरणध्रुवम्।

उत्तमपुरुष का क्रोध क्षणमात्र, मध्यमपुरुष का दोपहर तक, अधमपुरुष का एक दिन-रात और नीचपुरुष का क्रोध जीवन-भर रहता है।

३. दानावसानः कोपो ब्राह्मणानाम्।
प्रणामावसानः कोपो गुरूणाम्।
प्राणावसानः कोपः क्षत्रियाणाम्।
प्रियवचनावसानः कोपो वणिग् जनानाम्।

—नीतिवाक्यामृत ७।३५ से ३८

ब्राह्मणों का क्रोध दान मिलने से, गुरुओं का क्रोध प्रणाम (विनय) करने से, क्षत्रियों का क्रोध प्राण निकलने से और वणिग् लोगों का क्रोध मीठा बोलने से शान्त होता है।

४. प्रणिपातावसानो हि, कोपाटोपो महात्मनाम्।

—त्रिषष्ठि० २।४

महात्माओं को प्रणाम करते ही उनका क्रोध शान्त हो जाता है।

२३ क्रोध-त्याग

१. आसुरत्तं न गच्छिज्जा, सुच्चाणं जिणसासणं ।

—दशवैकालिक ८।२५

जैन धर्म के सिद्धान्तों को सुनकर क्रोध नहीं करना चाहिए ।

२. कोहं असच्चं कुव्विज्जा । —उत्तराध्ययन १।१४

क्रोध को असत्य करदो, अर्थात् दबादो !

३. क्रोध को पीना इन्सानियत है । —गांधी

४. उवसमेण हणे कोहं । —दशवैकालिक ८।३९

उपशान्तभाव से क्रोध को जीतना चाहिए ।

५. कोहं माणं न पत्थए । —सूत्रकृतांग ११।३५

क्रोध-मान की इच्छा मत करो !

६. नो कुज्झे नो माणे । —सूत्रकृतांग २।२।६

आत्मार्थी पुरुष को क्रोध-मान नहीं करना चाहिए ।

७. गुस्सा मत किया करो ! पहलवान और ताकतवर वह नहीं, जो दूसरे पहलवान को पछाड़ दे । बल्कि पहलवान वह है, जो गुस्से के वक्त नफ्स पर काबू रखे ।

—ह० बु० मु०

८. क्रोध के इन्जिन को रोकना सीखिए अन्यथा ड्राइवर-पुत्र-वत् मरना पड़ेगा। —जीवनसौरभ २०

९. अपकारिणि चेत् कोपः कोपे कोपं कथं न ते ?
—याज्ञवल्क्योपनिषद् २९

यदि तुम अपकार (बिगाड़) करनेवाले पर क्रोध करते हो तो क्रोध पर क्रोध क्यों नहीं करते ?

१०. नित्यं क्रोधात्तपो रक्षेत्। —महाभारत शान्तिपर्व

तपस्वी को अपने तप को क्रोध से सदा रक्षा करते रहना चाहिए।

११. क्रोध करने में विलम्ब करना विवेक है और शीघ्रता करना मूर्खता। —बाइबिल

१२. क्रोध का सबसे बड़ा इलाज़ विलम्ब है। —सेनेका

१३. अमरीका का एक प्रोफेसर बहुत क्रोधी था। दोस्त की सलाह से उसने नौकर से कहा—मुझे गरम देखो तब खाली लिफाफा दिखा दिया करो! बस, जब भी वह क्रुद्ध होता, नौकर खाली लिफाफा लाकर सामने रख देता। ऐसा करने से क्रमशः आदत छूट गई।

१४. क्रोध उठे तब उसके नतीजों पर विचार करो।
—कन्फ्यूसियस

१५. गुस्से में हो तो बोलने से पहले दस तक गिनो, यदि ज्यादा गुस्सा हो तो सौ तक गिनो!

१६. मुहम्मद साहब ने कहा—गुस्सा आने के समय बैठ जाओ, फिर भी शान्त न हो तो लेट जाओ।

१७. क्रुद्ध अवस्था में किसी भी पत्र का उत्तर मत दो !

—चीनी-लोकोक्ति

१८. उफनते दूध को (उपदेशरूप) पानी के छींटे डाल-डालकर कहाँ तक बुझायेंगे, नीचे से (क्रोधरूप) लकड़ियां निकाल दें !

—जीवनसौरभ पृष्ठ २४

१९. भौंकते कुत्ते पर ठोकर मारोगे तो वह और ज्यादा भौंकेगा। उस पर ध्यान नहीं दोगे तो वह अपने आप चुप हो जायेगा।

२०. क्रोधवश 'अतुंकारी भट्टा' ने बब्बर देश में संकट सहे।

'कूरड़-उकूरड़' मुनियों ने संयमजीवन से हाथ धोए।

'स्कंदक आचार्य' अग्निकुमार बने।

'तपस्वी मुनि' चाण्डाल कहलाए।

'द्वैपायन ऋषि' ने तपस्या का फल खोया।

'प्रसन्नचन्द्र राजर्षि' ने सप्तम नरक के योग्य कर्म बाँधे।

क्रोधवश शय्यापाल के कानों में शीशा डलवाने से 'भगवान् महावीर' के कानों में कीलें लगीं।

क्षमा से 'गजसुकुमाल' 'दमदन्त', 'स्कन्दक', 'मेतार्य', 'कूरगगडूक', 'चण्डरुद्र शिष्य', 'मृगावती', आदि अनेक मुनि-महासतियाँ केवलज्ञान पाकर जन्म-मरण से मुक्त हुए।

क्रोध में जहर

१. क्रोध करते समय खून में ज़हर प्रकट हो जाता है, अतः कहा

जाता है कि माताओं को क्रुद्ध अवस्था में बच्चों को स्तन-पान नहीं कराना चाहिए।

- एक स्त्री ने लड़ाई करते-करते बच्चे को स्तन पिलाया; थोड़ी देर बाद बच्चा मर गया।
- एक डाक्टर ने क्रुद्ध-मनुष्य के खून का इन्जेक्शन खरगोश के शरीर में लगाया। थोड़ी ही देर में वह तड़फ-तड़फ कर मर गया।

२४ क्रोधी

१. कुद्धो....सच्चं सीलं विणयं हणेज्ज ।

—प्रश्नव्याकरण संवरद्वार २

क्रोध में अन्धा हुआ व्यक्ति—सत्य, शील और विनय का नाश कर डालता है ।

२. वाच्यावाच्यं प्रकुपितो, न विजानाति कर्हिचित् ।
नाकार्यमस्ति क्रुद्धस्य, नावाच्यं विद्यते क्वचित् ॥

—वाल्मीकि रामायण ५।५५।५

क्रुद्ध मनुष्य वाच्य-अवाच्य का विवेक नहीं करता । उसके लिए न तो कुछ वाच्य है और न ही कुछ अवाच्य ।

३. खोलते पानी में प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता, ऐसे ही क्रोधाभिभूत व्यक्ति आत्महित नहीं देख सकता । —बुद्ध

४. क्रोध के आवेश में एक कह रहा था—मैं काला नाग हूँ, काटने के बाद पानी भी नहीं मांगेगा । दूसरा बोल रहा था—मैं सौ गुण्डों का एक गुण्डा हूँ, किसकी ताकत है जो मेरे सामने देखले ! (क्रोधवश लोग अपने-आप सांप एवं गुण्डे बन जाते हैं ।)

५. अपनी चीज की आलोचना सुनकर क्रोधी उसे तोड़-फोड़ कर घर में भी नुकसान कर लेता है ।

६. घमण्डी का कोई खुदा नहीं, ईर्ष्यालु का कोई पड़ौसी नहीं और क्रोधी खुद का भी नहीं। —विशपहॉल

७. जे कोहदंसी से माणदंसी। —आचाराङ्ग ३।४

जिसके हृदय में क्रोध है, उसके हृदय में मान भी अवश्य है।

८. अतिरोषणश्चक्षुष्मानप्यन्ध एव जनः। —हर्षचरित

अतिक्रोधी मनुष्य आँख होते हुए भी अन्धा ही होता है।

९. An angry man opens his Mouth and Shuts his eyes.
एन एंगरी मैन ओपन्स हिज माउथ एण्ड शटस् हिज आईज्। —केटो

क्रोधी मनुष्य अपना मुंह खोलकर आँखें मींच लेता है।

१०. कोहंधा निहणंति, पुत्तं मित्तं गुरुं कलत्तं च।

क्रोधान्ध व्यक्ति-पुत्र, मित्र, गुरु और स्त्री को भी मार डालता है।

११. राजस्थान के 'वारा' गाँव में भिखारी को भीख न देने के अपराध में क्रुद्ध होकर एक चमार ने अपनी स्त्री को कुल्हाड़े से काट डाला। —हिन्दुस्तान १७ जून १९६२

१२. न कस्यापि क्रुद्धस्य पुरस्तिष्ठेत्। —नीतिवाक्यामृत ७।७

क्रुद्ध व्यक्ति के सामने खड़े मत रहो! फिर चाहे वह कोई भी हो।

१३. शिष्टाय दुष्टो विरताय कामी, निसर्गतो जागरुकाय चोरः।
धर्मार्थिने क्रुध्यति पापवृत्तिः, शूराय भीरुः कवये कविश्च।

शिष्ट से दुष्ट, त्यागी से कामी, जागते हुए से चौर, धर्मिष्ठ से पापी—शूरवीर से डरपोक तथा कवि के साथ कवि—ये स्वभाव से ही क्रोध किया करते है।

२५ क्रोध पर काबू पानेवाले महापुरुष

१. कोपं न गच्छन्ति हि सत्त्ववन्तः ।

—वाल्मीकिरामायण ५।५२।१६

सत्त्ववान मनुष्य क्रोध नहीं किया करते ।

२. देवता सुगुरौ गोषु, राजसु ब्राह्मणेषु च,
नियन्तव्यः सदा कोपो, बाल-वृद्धातुरेषु च ।

—हितोपदेश ४।१२३

देवता, सद्गुरु, गाय, राजा, ब्राह्मण, बालक, वृद्ध और रोगी पर क्रोध आ जाय तो उसे रोक लेना चाहिए ।

३. न हि स्त्रीषु महात्मानः, क्वचित्कुर्वन्ति दारुणम् ।

—वाल्मीकिरामायण

महापुरुष स्त्री पर कभी क्रोध नहीं किया करते । लक्ष्मण के क्रुद्ध होने पर सुग्रीव 'तारा' को आगे करके इसीलिए उनके सामने गया था ।

४. नाऽकारणरुषां संख्या, संख्याता कारणक्रुधः ।
कारणेऽपि न क्रुद्ध्यन्ति, ये ते जगति पञ्चषाः ॥

बिना कारण क्रोध करनेवाले असंख्य हैं । कारण से क्रोध करनेवाले परिमित हैं, किंतु कारण उत्पन्न होने पर भी क्रोध न करनेवाले व्यक्ति जगत में केवल पाँच-छः ही हैं ।

५. **पैगम्बर मुहम्मद** के पास एक यहूदी गुस्से में आकर बोला—

"अस्साम अलेकुम्" ।

जवाब में उनकी बीबी **ऐशाहशिद्दी** ने कहा—

"वालेयकं अस्साम" ।

तब मुहम्मद ने कहा बुराई का जबाब भलाई से दो और ऐसे कहो—

"वालेयकुं अस्सलाम" ।

यानि तुम सलामत रहो !

६. जो मनुष्य अपने क्रोध को अपने ऊपर झेल लेता है, वही दूसरे को क्रोध से बचा सकता है । —सुकरात

२६ वैर

१. वैरं पञ्चसमुत्थानं, तच्च बुद्ध्यन्ति पण्डिताः ।
स्त्रीकृतं वास्तुजं वाग्जं, ससापत्न्यापराधजम् ॥
—महाभारत शान्तिपर्व १३९।४२

वैर उत्पन्न होने के पाँच कारण हैं--(१) स्त्री के लिए, (२) घर और जमीन के लिए, (३) कटु वचन बोलने से, (४) जातिगत द्वेष के कारण और (५) किसी समय किए गए अपराध के कारण ।

२. तीन बात है वैर की, जर-जोरू जमीन ।
"संतदास" इनतें अधिक, मत की बात महीन ॥

३. आदि वैर जोगीनैं जती, आदि वैर वैश्या नैं सती ।
आदि वैर घंटी ने घऊं, आदि वैर सासू ने बहू ॥

४. १- जोगी-भोगी नैं वैर, भगत-जगत नैं वैर ।
२- साँच-झूठ नैं वैर, हां-ना नैं वैर ॥
३- चोर-साहूकार नैं वैर, बिलाड़ी-उंदरड़ा नैं वैर ।
४- सूम-दातार नै वैर, चोर-चन्द्रमा ने वैर ॥
—गुजराती कहावतें

५. वेराणुबंधीणि महब्भयाणि । —दशवैकालिक ९।३।७

वैर के अनुबन्ध महाभय के कारण हैं ।

६. प्रेम टूट जाने से दो मित्र आपस में कट्टर दुश्मन बन गये थे ।

एक दिन वे दोनों नाव में बैठ कर कहीं जा रहे थे। तूफान आने से नाव डगमगाने लगी। एक मित्र ने पूछा-भाई! नाव पहले किस तरफ डूबेगी ? नाविक ने कहा-सामने की तरफ से। मित्र ने सोचा, बहुत अच्छा! मेरे से तो वह पहले ही मरेगा। (वैर मनुष्य को कितना नीचे गिरा देता है।)

७. कुम्हार—कुम्हारी ने को नावड़ै नी जणां गधी रा कान मरोड़ै।

८. बाड़ में मूत्यां किसो वैर निकलै।

९. बांबी कूट्यां साप को मरैनी। —राजस्थानी कहावत

१०. कीदृशस्तृणानामग्निना विरोधः ! —मुद्राराक्षस-नाटक

अग्नि के साथ तृणों का विरोध कैसा ! अर्थात् चल नहीं सकता।

११. समुद्र में रहकर मगरमच्छ से वैर नहीं चल सकता।

—हिन्दी कहावत

२७ वैरत्याग

१. न विरुज्झेज्ज केणइ । —सूत्रकृतांग १५।१३

किसी के साथ वैर-विरोध मत रखो ।

२. न चेमं देहमाश्रित्य, वैरं कुर्वीत केनचित् ।

—मनुस्मृति

इस नश्वर शरीर के लिए किसी से वैर नहीं करना चाहिए ।

३. अपने मन में किसी के प्रति (वैर-दुश्मनी) का भाव मत रखो । —पु० बा० तोरा लेव्यव्यवस्था १६।१७

४. बलोपपन्नोऽपि हि बुद्धिमान् नरः,
परं नयेन्न स्वयमेव वैरिताम् ।
भिषग् ममास्तीतिविचिन्त्य भक्षये-
दकारणात् को हि विषं विचक्षणः ?

—पञ्चतन्त्र ३।१११

बुद्धिमान पुरुष बल से युक्त हो तो भी दूसरे को वैरी न बनाए । वैद्य मेरा ही है--यह सोचकर कौन चतुर अकारण विष खा सकता है ?

५. एरण्डमवलम्ब्य न कुञ्जरं कोपयेत् ।

—कौटलीय अर्थशास्त्र

एरण्ड के सहारे पर हाथी से वैर नहीं करना चाहिए ।

६. विरोधं नोत्तमैर्गच्छे-न्नाधमैश्च सदा बुधैः,
विवाहश्च विवादश्च, तुल्यशीलैर्नृपेष्यते। —विष्णुपुराण

राजन्! उत्तम तथा अधम व्यक्तियों से विरोध मत करो। क्योंकि विवाह और विवाद समान स्वभाववालों का ही इष्ट है।

७. नहि वेरेन वेरानि, सम्मन्तीध कुदाचनं।
अवेरेन च सम्मन्ति, एस धम्मो सनन्तनो॥

—धम्मपद १।५

इस संसार में वैर से वैर कभी शान्त नहीं होते—यह नियम सदा से चला आया है। अवैर अर्थात् मैत्रीभाव से ही वैर शान्त होते हैं।

२८ वैरी

१. वेराइं कुव्वइ वेरी, तओ वेरेहिं रज्जइ ।
पावोवगा य आरंभा, दुक्खफासा य अंतसो ।। –सूत्रकृतांग ८।७

वैरी अपने असंयम से प्राणियों के साथ वैरभाव बढ़ाता है और फिर उससे स्वयं रंग जाता है । वैर के कारणभूत आरम्भ-काम-भोगादि पाप को पैदा करनेवाले एवं अन्त में दुःखदायी होते हैं ।

२. के शत्रवः ? सन्ति निजेन्द्रियाणि ,
तान्येव मित्राणि जितानियानि । –शंकर-प्रश्नोत्तरी ४

शत्रु कौन है ? अपनी इन्द्रियाँ ही शत्रु हैं, किंतु यदि उन्हें जीत लिया जाय तो वे ही मित्र भी हैं ।

२. एक मन वैरी आपणो, दूजो कुसंतान ।
तीजी वैरण भूख है, नित उठ करै जु हान ।।
—राजस्थानी दोहा

४. जात का वैरी जात, और काठ का वैरी काठ । –हिंदी क०

५. नास्त्यविवेकात् परः प्राणिनां शत्रुः । –नीतिवाक्यामृत १०।४५

अविवेक से बढ़कर प्राणियों का कोई भी शत्रु नहीं है ।

६. लुब्धानां याचकः शत्रु-मूर्खाणां बोधको रिपुः ।
जारस्त्रीणां पतिः शत्रु-श्चौराणां चन्द्रमा रिपुः ।।
—चाणक्यनीति १०।६

७. लोभियों का शत्रु याचक है, मूर्खों का शत्रु शिक्षा देनेवाला है, कुलटा स्त्रियों का शत्रु पति है और चोरों का शत्रु चन्द्रमा है ।

८. ऋणकर्ता पिता शत्रु-र्माता च व्यभिचारिणी ।
भार्या रूपवती शत्रुः, पुत्रः शत्रुरपण्डितः ॥
—चाणक्य ६।१०

ऋण करनेवाला पिता, व्यभिचारिणी माता, रूपवती स्त्री और मूर्ख पुत्र—ये चारों शत्रु हैं ।

९. मृग-मीन-सज्जनानां, तृण-जल-संतोषविहितवृत्तीनाम् ।
लुब्धक-धीवर-पिशुना, निष्कारणवैरिणो जगति ॥
—भर्तृहरि-नीतिशतक ६१

क्रमशः, तृण,जल और संतोष से जीवन - निर्वाह करनेवाले मृग, मत्स्य और सज्जन पुरुषों के साथ शिकारी, मच्छीमार एवं दुर्जन- ये तीनों बिना मतलब ही वैर रखते हैं ।

१०. सीधै नैं सौ दुःख, सूधै पर दो चढ़ै ।
सुंहाली खेजड़ी पर सै चढ़ै ।

११. गाय घास स्यूं भायला करै तो खावै कांई ।
—राजस्थानी कहावतें

२९ वैरी के साथ व्यवहार

१. न हि शत्रुरवज्ञेयो, दुर्बलोऽपि महीयसा। —महाभारत

स्वयं बली होकर भी दुर्बल शत्रु की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए।

२. न युक्तं प्राकृतमपिशत्रुमवज्ञातुम्। —मुद्राराक्षस नाटक

साधारण शत्रु का भी अपमान करना ठीक नहीं।

३. नोपेक्षितव्यो विद्वद्भिः शत्रुरल्पोऽप्यवज्ञया।

विद्वान् पुरुष को सामान्य शत्रु की भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

४. दोस्त चाहे कितने ही हों, घमण्ड न करो। शत्रु चाहे एक भी हो, संभल कर रहो!

५. मित्र यदि पच्चास भी हैं तो भी कम हैं, किंतु शत्रु यदि एक भी है तो भी पर्याप्त है। —इटालियन लोकोक्ति

६. परदोषान् स्वगुणैश्छादयेद् गुणागुणाद्वैगुण्येन।

—कौटलीय अर्थशास्त्र

शत्रु के दोषों को अपने गुणों से और गुणों का अपने सद्गुणों से ढाँकना चाहिए।

७. ऋणशत्रुव्याधिष्वशेषः कर्त्तव्यः। —चाणक्यसूत्र ४३५

ऋण, शत्रु और रोग को बिल्कुल नष्ट कर देना चाहिए।

८. जातमात्रं न यः शत्रुं, व्याधिं च प्रशमं नयेत् ।
महाबलोपि तेनैव, वृद्धिं प्राप्य स हन्यते ॥

—पञ्चतन्त्र १।३६५

जो पैदा होने के साथ रोग और शत्रु को नहीं दबाता, वह चाहे महाबली भी क्यों न हो, बढ़े हुए रोग एवं शत्रु से मारा जाता है।

९. शत्रुमुन्मूलयेत् प्राज्ञ-स्तीक्ष्णं तीक्ष्णेन शत्रुणा ।
व्यथाकरं सुखार्थाय, कण्टकेनैव कण्टकम् ॥

—पञ्चतन्त्र ४।१९

प्राज्ञपुरुषों को काँटे से काँटे की तरह शत्रु से दुःखदायी शत्रु का उन्मूलन कर देना चाहिए ।

१०. ताजा खतर न निहीबर दुश्मन जफर नयाबी। —पारसी क०

जान खतरे में डाले बिना दुश्मन नहीं जीता जाता ।

११. अनुलोमेन बलिनं, प्रतिलोमेन दुर्जनम् ।
आत्मतुल्यबलं शत्रुं, विनयेन बलेन वा ॥

—चाणक्यनीति ७।९

बलिष्ठ शत्रु को अनुकूलव्यवहार से, यदि दुर्जन हो तो प्रतिकूल-व्यवहार से और समान शत्रु को विनय अथवा बल से जीतना चाहिए ।

१२. व्यसने योजयेत् शत्रुं, मित्रं धर्मेण योजयेत् ।
सुकुले योजयेत्कन्यां, पुत्रं विद्यासु योजयेत् ॥

—चाणक्यनीति ३।३

शत्रु को व्यसन कष्ट में, मित्र को धर्म में, कन्या को सुकुल में और पुत्र को विद्याध्ययन में लगाना चाहिए ।

१३. शत्रोरपि न पातनीया वृत्तिः । —कौटलीय-अर्थशास्त्र

शत्रु की भी आजीविका नष्ट नहीं करनी चाहिए ।

१४. घाव वैरी रो भी सरावणो चाहीजै ।

—राजस्थानी कहावत

१५. जीवन्तु मे शत्रुगणाः सदैव ।
येषां प्रसादात् सुविचक्षणोऽहम् ।

—सुभाषित-संचय

मेरे शत्रुगण सदा अमर रहें, जिनकी कृपा से मैं विचक्षण–सावधान बना हुआ रहता हूँ ।

१. **स्कन्दक ऋषि**—काचर छीलकर खुश होने के बदले स्कन्दक ऋषि को अपनी खाल खिंचवानी पड़ी।

२. **गजसुकुमाल**—क्रोधवश बच्चे के सिर पर गर्म रोटी डालने के बदले के गजसुकुमाल को सिर पर धधकते अंगारे झेलने पड़े।

३. **भगवान् महावीर**—शय्यापाल के कानों में शीशा डलवाने के कारण भगवान महावीर के कानों में कीले लगाई गईं।

४. **श्रेणिकराजा**—ऋषि को भिक्षा देने में बेपरवाही होजाने से सम्राट् श्रेणिक को कैद में रहना पड़ा और जहर खाकर मरना पड़ा।

५. **पन्द्रह हजार**—नाभा (पंजाब) के निकट पन्द्रह हजार रुपयों के लिए एक व्यापारी ने अपने साथी को मार दिया। वह उसी का पुत्र होकर १८-२० साल जीवित रहा। मरते समय बोला—पिताजी ! "मैं वही हूं" पिता को भी ज्ञान हो गया एवं वह सन्यासी बन गया।

(नाभा निवासियों से श्रुत)

६. **ऊंटवाला ब्राह्मण**—नागोर जिला के "कूदसू" गाँव के गनपतसिंह जी ठाकुर ने ऊंट एवं जेवर के लिए ससुराल से

लौटते हुए एक ब्राह्मण को मारा। वह मरकर उन्हींका पुत्र हुआ। शादी होते ही मरने लगा। ठाकुर का धर्मभाई सुख पूछने आया। लड़के ने कहा—चाचाजी ! यह वही ऊंट है, जो पिताजी ने पिछले जन्म में मुझे मारकर छीना था और यह मेरी स्त्री वही सोनारी है, जो मेरे ससुराल (सुनारी गाँव) में रहती थी। इसी ने ठाकुर को सुलगाया था। मैंने बदला ले लिया, अब मैं मरता हूँ—यों कहकर एक गिलास जल पीया एवं मर गया। –रत्नादेसर गाँव में श्रुत

७. **दिल्ली का मियाँ**—हैदराबाद से (१०० मोहरें) कमाकर घोड़ी पर चढ़ा हुआ घर जारहा था। बोरावड़ केपास मन्नाणा गाँव में विश्राम किया। ठाकुर ने लूटना चाहा। वह भागा। घोड़े की आवाज़ सुनकर घोड़ी रुकी और मियां लूटा एवं मारा गया। मरकर उन्हीं का पुत्र हुआ। घोड़ी जोबनेर ठाकुर की पुत्री हुई। विवाह हुआ। बीमार होकर मरने लगा, जातिस्मरण से पिछली बात कही एवं मर गया। —संतों से श्रुत

८. बीकानेर में एक साथ अनाज की दो बोरियां उठाकर दौड़ सकनेवाला एक माली था। एक जमींदार का बैल नथ नहीं डलवाता था। माली ने चंद ही क्षणों में उसे नाथ डाला। क्रुद्ध बैल ने थोड़ी ही देर बाद माली को गुदा के रास्ते से अपने सींग में पिरो लिया। बलिष्ठ माली ने सींग को तो खींच कर निकाल दिया, लेकिन कुछ ही क्षणों बाद वह मर गया। —वि० स० १९०९ कार्तिक की घटना

९. चमार की सुई ने मना करने पर भी चमड़े को बींधा, बस, वह जूता बन कर सदा के लिए काँटों को तोड़ने लगा एवं वैर का बदला लेने लगा। —लोकोक्ति

१०. महमूदगजनी जब सोमनाथ की मूर्ति तोड़ने लगा, तब उससे लिपटे एक पुजारी ने उसे रोका, नहीं माना। पुजारी को मारा एवं मूर्ति तोड़ी। उसका कहना था मैं बुत-फरोस (मूर्ति बेचनेवाला) न बनकर बुत-शिकन (मूर्तिभञ्जक) कहलाऊँगा। फिर ब्राह्मणों ने मार्ग-दर्शकों से मिलकर उसे रण में भटकाया।

चौथा कोष्ठक

१ ईर्ष्या

१. दूसरों का सुख देखकर जलना **ईर्ष्या** है।

२. गुणी के गुणों पर जलना **ईर्ष्या** है और उसके गुणों में दोष-छिद्र देखना **असूया** है।

३. पियाप्पिये सति इस्सा इस्सामच्छरियं होति।

—दीघनिकाय २।८।३

प्रिय-अप्रिय होने से ही ईर्ष्या एवं मात्सर्य होते हैं।

४. ईर्ष्या हि विवेक-परिपन्थिनी। —कथासरित्सागर

ईर्ष्या विवेक की शत्रु है।

५. हेतावीर्ष्युः फले नेर्ष्युः। —चरकसंहिता ८।१८

दूसरों की उन्नति के कारणों में ईर्ष्या करनी चाहिए यानी उन कारणों को अपनाने की चेष्टा करनी चाहिए, किन्तु उसके फल में ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए अर्थात् धन-सुख आदि देखकर जलना नहीं चाहिए।

६. सव्वत्थ विणीयमच्छरे। —सूत्र० २।३।१४

साधु सर्वत्र मत्सर-ईर्ष्याभाव रहित रहे।

७. सुरम्यान् कुसुमान् दृष्ट्वा यथा सर्वः प्रसीदति ।
प्रसन्नानपरान् दृष्ट्वा, तथा त्वं सुखमाप्नुयाः ॥

—रश्मिमाला ८।७

सुन्दर फूलों को देखकर जैसे सब कोई प्रसन्न होते हैं। ऐसे ही दूसरों को प्रसन्न देखकर तू भी सुख का अनुभव कर।

८. लोगों के बीच बड़प्पन दिखाना छोड़ दे तो मत्सर (ईर्ष्या) रुकेगा।

—ताओउपनिषद्–३

२ ईर्ष्यालु

१. य ईर्ष्युः परवित्तेषु, रूपे वीर्य-कुलान्वये ।
सुख-सौभाग्य-सत्कारे, तस्य व्याधिरनन्तकः ॥
—विदुरनीति २।४२

जो दूसरों के धन, रूप, बल, कुलीनता, सुख, सौभाग्य और सत्कार पर ईर्ष्या करता है, उसका यह रोग असाध्य है ।

२. ईर्ष्यालु स्वयं कुछ बनने की महत्त्वाकांक्षा न करके, दूसरों को भी मार्ग-पतित करके अपने तुल्य बनाना चाहता है ।
—चढ़तीकला से

३. ईर्ष्यालु को दुश्मन चाहे छोड़ दे, ईर्ष्या ही उसका सर्वनाश कर देती हैं । —तिरुवल्लुवर

४. वह कभी सुखी नहीं होता, जो अपने से अधिक सुखी को देखकर जलता रहता है !

४. सच पूछो तो ईर्ष्या का तात्पर्य यही है कि ईर्ष्यालु, जिसको ईर्ष्या करता है; उसे अपने से बड़ा मानता है —वानहापर

६. ईर्ष्यावश आप तो दूसरों की तारीफ करता नहीं किन्तु अपनी तारीफ करवाना चाहता है ।

७. दयापात्र बनने की अपेक्षा ईर्ष्या का पात्र बनना श्रेयस्कर है । —हेरोडोटस

८. लक्ष्मी ईर्ष्यालु के पास नहीं रहती। उसे अपनी बहन दरिद्रता के हवाले कर देती हैं। —तिरुवल्लुवर

६. वह फूल, जो अकेला है, उसे काँटों से रश्क करने की क्या जरूरत है, जो तादाद में बेसुमार हैं। —टैगोर

१०. आज दुनियाँ दूसरों का सुख नहीं देख सकती। यदि एक व्यक्ति को सरकार की तरफ से पैरों में सोना आदि सम्मानसूचक वस्तु अथवा कोई पद मिल जाता है तो दूसरे जलने लगते हैं। यदि एक व्यापारी कुछ कमा लेता है तो पड़ौसी जल-भुन कर राख बन जाता है तथा यदि जेठानी-देवरानी में से किसी एक का जेवर चोरी चला जाता है तो वह रोती है—हाय! हाय! इसका क्यों रह गया।

—उपदेश सुमनमाला के आधार पर

११. अत्तार गुलाब के फूलों को खरल में पीस रहा था। दार्शनिक ने पूछा—क्या अपराध हो गया है?

फूल ने कहा—दुनियाँ ईर्ष्यालु है, उसे हमारा हँसना-मुस्कराना देखा नहीं जाता, किन्तु हम तो जिन्दे भी खुशबू दे रहे थे और मरकर (इत्र बनकर) भी देते रहेंगे।

३ ईर्ष्या-सम्बन्धी दृष्टान्त और कहावतें

दृष्टान्त–

१. ईसा को शैतान मिला, जो गदहों पर हसद (ईर्ष्या) लिए दुनियाँ के बाजार में बेचने जा रहा था।
ईसा ने पूछा—कहाँ जा रहे हो ?
शैतान ने उत्तर दिया—अपना माल बेचने।
वापस लौटते समय ईसा ने उससे पुनः प्रश्न किया—तुम्हारा माल किसने खरीदा ?
शैतान ने कहा—खासकर के मेरे माल को स्त्रियों ने, व्यापारियों ने और धर्म के ठेकेदारों ने-इन तीनों ने खरीदा है (इन तीनों में ईर्ष्या अधिक होती है।)

२. स्वामीनारायण-सम्प्रदाय के **आदिगुरु श्री सहजानन्द स्वामी** अपने सत्संगी के यहां गए। उसके दो स्त्रियाँ थीं और आपस में अनबनाव था। हमेशा बड़ी ही रसोई बना कर स्वामीजी को भोजन करवाती थी, छोटी को पास भी नहीं आने देती थी। भेद पाकर स्वामीजी ने छोटी से रसोई बनाने के लिए कहा। बड़ी को ईर्ष्या हुई गुप्तरूप से चूरमे के लड्डुओं में धूल मिला दी। स्वामी जी खाते ही समझ गए और **लड्डू तो लड्डू ही हैं**

तारीफ करते-करते सारे लड्डू खा गए।

दूसरे दिन बड़ी ने दाल में एक मुट्ठी नमक डाल दिया स्वामी जी **ऐसी दाल कभी नहीं खाई**, यों कहते हुए सारी दाल पी गए। फिर ठहरने का आग्रह करने पर बोले मुझे जान से मारेगी क्या ?

३. दो पंडित एक सेठ के यहाँ मेहमान बने। आपसी द्वेषवश दोनों ने एक-दूसरे को **बैल** एवं **गदहा** कहा। सेठ ने दोनों के आगे खाने के लिए **घास** और **भूसा** रखा।

४. **राजा-मंत्री का संवाद–**

राजा—मेरी हथेली में बाल क्यों नहीं ?

मन्त्री—दान देते-देते घिस गए।

राजा—तेरी हथेली में क्यों नहीं ?

मन्त्री—लेते-लेते घिस गए।

राजा—इन सभासदों की हथेली में क्यों नहीं ?

मन्त्री—कुछ न मिलने से हाथ मलते-मलते घिस गए।

५. शिव—भक्त ! मैं प्रसन्न हूँ, जो तेरी इच्छा हो मांग ले, किन्तु ध्यान रहे जो तुझे प्राप्त होगा तेरे पड़ौसी को उससे दूना।

भक्त—(ईर्ष्या वश) तब तो मेरी एक आँख फोड़ दीजिए।

कहावतें–

१. परा दुःखये दुबला थोड़ा, पराये सुख दुबला घणा।

—राजस्थानी कहावत

२. पड़ोसी छड़ै खीच नै, धमको पड़े म्हारै शीश ।

—राजस्थानी कहावत

३. तेल बालनार नुं बले ने मशालची पेट कूटे ।

—गुजराती कहावत

४. मालिक दान करे ने भंड़ारी नु पेट बले । " "

५. पार की गाय पार कुं खाय ,
जे हांके तेनुं सत्यानाश जाय । " "

६. अन्न तेनुं पुण्य, रांधनार ने धुमाड़ो । –राजस्थानी कहावत
रसोईया जलाता रहता हैं ।

७. म्हां बैठां ही पड़ोसी री बेटी सासरे जाय ! " "

कलह

१. अहिगरणं न करेज्ज पंडिए। —सूत्रकृतांग २।२।१६

पंडित पुरुष को कलह नहीं करना चाहिए।

२. ....ला त ज़लिमून व ला तु ज़ल मून०।

—कुरान सूरा २, आयत २७६

आपस में न झगड़ो ! सन्तोष करो।

३. व ला तफर्रकू ऽ........

—कुरान सूरा ३, आयत १०३

फूट न डालो।

४. "Do not throw ail in the ire,,

डु नॉट थ्रो आइल इन दी फायर।

—अंग्रेजी कहावत

आग में पूला न डालो।

५. व अस्लहूऽ ज़ात बैनिकुम्........,

—कुरान सू० ८ आ. १

आपस में सुलह करो।

६. व ला तक्तुलूऽऽ अन्फ़ुसकुम्...,

—कुरान सू० ४ आ. २६

आपस में खून न करो।

७. क्लेश नौका छिद्र ज्यों, प्रारम्भ में ही मेट दो।
अन्यथा सर्वस्व अपना, कुछ क्षणों में भेंट दो।

—हिन्दी कविता

८. रोग अगन अरू राड़, जाण अल्प कीजे जतन !
बधियां पछै बिगाड़, रोक्यो रहै न राजिया !

९. रोजीनां री राड़, आपस री आछी नहीं।
बणै जठा तक बाड़, चटपट करणी चकरिया !

१०. जंगल जाट न छेड़िये, हाटां बीच किराड़।
रांघड़ कदै न छेड़िये, जद-कद करे बिगाड़॥

—राजस्थानी सौरठे

५ कलह से हानि

१. कलहान्तानि हर्म्याणि, कुवाक्यान्तं च सौहृदम् ।
कुराजान्तानि राष्ट्राणि, कुकर्मान्तं यशो नृणाम् ॥

—पञ्चतन्त्र० ५।७३

'कलह' घर कुटुम्ब का, 'कुवचन' मित्रता का, 'कुराजा' राष्ट्र का और 'कुकर्म' यश का नाश करनेवाला होता है ।

२. जायते घृष्यमाणाद् हि, दहनश्चन्दनादपि ।

—त्रिषष्ठि० २।२

घर्षण करने पर चन्दन से भी अग्नि उत्पन्न होती है ।

३. अतिसय रगड़ करे जो कोई, अनल प्रगट चन्दन से होई ॥

—रामचरितमानस

४. पति के झगड़े का गुस्सा पत्नी ने अपने बच्चों से निकाला । उनमें से तीन लड़के और एक लड़की नीचे कमरे में सोए हुए थे । जिनकी आयु दो से पाँच वर्ष की थी । क्रोध में पागल हुई माता ने उन चारों को गोली से मार डाला ।

(मिडलैण्ड पेन्सीलवानिया १२ जून १९६४)

—हिन्दुस्तान १३ जून १९६४ से

५. सद्गृहस्थों के यहाँ कलहरूपी बीज का वपन हुआ तो समझो ! वहाँ से शान्ति, सुलह और आनन्द शीघ्र ही

पलायन करने वाले हैं। —प्रेमादेवी रामायणी

६. उभयोर्दु:खकृत् क्लेशो, यथोष्णरेणुका क्षितौ।

—हिङ्गुलप्रकरण

गर्म बालू-रेत जैसे स्वयं तपती हुई दूसरों को भी तपाती है, वैसे ही यह कलह स्वयं करनेवाले कौ तथा दूसरों को अर्थात् दोनों को दु:खित करनेवाला है।

७. लड़ाई में किसा लाडू थोड़ा ही बंटै है।

—राजस्थानी कहावत

८. कला कलन्दर वसे, ते घड़ियो पानी नसे।

—पंजाबी कहावत

६ कलहकर्त्ता

१. कलहकरो असमाहि करे। —दशाश्रुत-१

कलह करनेवाला असमाधि को उत्पन्न करनेवाला है।

२. अविओसिए धासति पावकम्मी। —सूत्रकृतांग १३।५

कलह में संलग्न पापकर्मी दुःख का ही भागी होता है।

३. न स्रेधन्तं रयिर्नशत्। —ऋग्वेद ७।३२।२१

कलह करनेवाला व्यक्ति लक्ष्मी को प्राप्त नहीं होता।

४. कलङ्केन यथा चन्द्रः क्षारेण लवणाम्बुधिः।
कलहेन तथा भाति, ज्ञानवानपि मानवः।

ज्ञानी व्यक्ति यदि कलह करनेवाला हो तो उसकी कलंकयुक्त चन्द्र से या क्षारतायुक्त लवणसमुद्र से तुलना की जाती है।

५. वुग्गहे कलहे रत्तो, पावसमणोत्ति वुच्चई।
—उत्तराध्ययन १७।१२

साधु यदि विग्रह एवं कलह में रत हो तो वह पापी कहलाता है।

६. कलहडम्बरवज्जिए....सुविणीएत्ति वुच्चई।
—उत्तराध्ययन ११।१३

कलह और जीवहिंसा को वर्जनेवाला व्यक्ति सुविनीत होता है।

७. बतलावै रल्यां, आवै ऊभनल्यां। —राजस्थानी कहावत

८. बाई जी ! बैठा अछो ! करवा मांडे बेढ़ ।
शुंरे थारा बापनी, बेटी छूंरे ढेढ़ । —राजस्थानी कहावत

९. चौधरी बैठा हो ? तूँ गुड़ायदे । ,, ,,

१०. आठ पूरबिया र नौ चूल्हा । ,, ,,
बारह माली र तेरह होका । ,, ,,

● मुनि जिता ही मत । ,, ,,

११. नौ कनौजिए और तेरह चौके । —हिंदी कहावत

१२. देराणी-जेठाणी नी गोठड़ी मां सक्करपारा ।
ने नणंद-भोजाई नी गोठड़ी मां अंगारा ।
—गुजराती कहावत

१३. कुत्तां रै संप हुवै तो गंगाजी न्हाय आवै । —राजस्थानी कहावत

१४. कुत्तो लड़ै दांतां सूं, मूरख लड़ै लातां सूं और पंडित लड़ै बातां सूं । —राजस्थानी कहावत

१५. संप त्यां जंप ने फूट त्यां फजीत्ती । —गुजराती कहावत

७ पैशुन्य (चुगली)

१. पैशुन्यं परोक्षे सतोऽसतो वा दोषस्योद्घाटनं, परगुणासहनतया दोषोद्घाटनं वा।

पीठ पीछे सत् या असत् दोष को प्रकट करना अथवा दूसरे के गुणों को न सह सकने के कारण उसका दोष दिखलाना 'पैशुन्य' (चुगली) कहलाता है।

पैशुन्यनिषेध–

२. पिट्ठिमंसं न खाइज्जा। –दशवैकालिक ८।४७

पीठ पीछे किसी के दोषों का कीर्तन मत करो।

३. व ला यग़्तब बा' दकुम् बाद्न्। —कुरान० ४६।१२

तुममें से कोई किसी की पीठ पीछे निन्दा न करे।

४. सर्वत्र प्रविधेहि तत् प्रियसखे ! पैशुन्य-शून्यं मनः।
—कस्तूरीप्रकरण

प्यारे मित्र ! अपने मन को सभी जगह पैशुन्य (चुगली) से मुक्त बनाओ !

५. वरं प्राणत्यागो न च पिशुनवाक्येष्वभिरुचिः।
—हितोपदेश १।१३७

चुगली में रस लेने की अपेक्षा मर जाना अच्छा है।

८ पिशुन (चुगल)

१. उलटी को सुलटी करे, सुलटी को उलटाय,
करे बुरी सब जगत की, ते नर चुगल कहाय।

२. चुगली करतां चुगल रा, जुग दो होठ जुड़ंत,
मल न्हाखण आछा मिल्या, दोय ठीकरा तंत।

—राजस्थानी दोहे

३. भिन्न कुम्भ शकलेन किल्विषं, बालकस्य जननी व्यपोहति।
तालुकण्ठरसनाभिरुज्झता, दुर्जनेन जननी व्यपाकृता॥

—सुभाषितरत्न भाण्डागार, पृष्ठ ६२

माता बालक की विष्ठा घड़े की दो ठीकरियों से उठाती है। चुगल ने निन्दा-चुगलीरूप विष्ठा को अपने तालु, कण्ठ एवं जीभ द्वारा उठाकर जन्मदाता-माता को भी मात कर दिया।

४. रोल बिगाड़ै राजनैं, मोल बिगाड़ै माल,
शनै-शनै सरदार री, चुगल बिगाड़ै चाल।

५. ऊंडो जल सूके अवस, नीला वन जल जाय,
चुगल तणां परताप सूं, वसती उज्जड़ थाय।

—राजस्थानी दोहे

६. परपैशुन्येन राज्ञां वल्लभो लोकः।

—नीतिवाक्यामृत २२।१८

दूसरों की चुगली करने से लोग राजा के प्रेम-पात्र बना करते हैं।

१० अभ्याख्यान

१. अभ्याख्यानमसदभियोगः ।

'असत्य' कलंक लगाने को 'अभ्याख्यान' कहते हैं ।

२. जेण परं अलिएणं असंतवयणेणं अब्भक्खाणेणं अब्भक्खाई । तस्सणं तहप्पगारा चेव कम्मा कज्जंति । जत्थेवणं अभिसमागच्छति, तत्थेव पडिसंवेदेइ । —भगवती ५।६

जो दूसरे पर झूठा कलंक लगाता है, वह उसी प्रकार के कर्मों का बन्धन करता है । जहाँ वे उदय में आते है, वहीं वह उन्हें भोगता है, अर्थात् सीतावत् कलंकित होता है ।

९ निन्दा

१. स्व प्रशंसेवान्यनिन्दा, सतां लज्जाकरी खलु ।

—त्रिषष्ठि० ४।१

स्वप्रशंसा की तरह परनिन्दा भी सत्पुरुषों के लिए लज्जा की वस्तु है ।

२. णिट्ठुरं णिण्हेहवयणं खिसा ।
मउयं सिणेहवयणं उवालंभो ।।

—निशीथचूर्णि २६३७

स्नेहरहित निष्ठुर वचन 'खिसा' (फटकार) है, स्नेहसिक्त मधुर वचन 'उपालंभ' (उलाहना) है ।

३. अहऽसेयकरी अन्नेसिं इंखिणी । —सूत्रकृतांग १।२।२।१

दूसरों की निन्दा हितकर नहीं है ।

४. **गैबत-निन्दा जिना**—व्यभिचार से भी संगीन हैं । 'जिना' करनेवाला तो 'तोबा' (पश्चात्ताप आदि) करने से बरी हो जाता है, लेकिन गैबत की माफी तब तक नहीं होगी, जब तक वह शख्स खुद माफ न करे, जिसकी उसने गैबत की है । —वैहकी

५. **कृतघ्नता** और **निन्दा**—ये दो सबसे ज्यादा खतरनाक सांप हैं । —जरथुश्त

६. दुनियां में निन्दा जैसा कोई रस नहीं हैं, लेकिन वह पर-निन्दा सुनने में है, अपनी सुनने में नहीं।

७. सातों सागर में फिरा, जम्बूद्वीप दे पीठ,
निन्द पराई ना करे, सो मैं बिरला दीठ। —कबीर

८. अहिअत्थं निवारिंतो, न दोसं वत्तुमरिहसि !
—उत्तराध्ययन निर्युक्ति २७६

बुराई को दूर करने की दृष्टि से यदि आलोचना की जाये तो कोई नहीं है।

१० निन्दा-निषेध

१. यदीच्छसि वशीकर्तुं, जगदेकेन कर्मणा।
परापवादशस्येभ्यो, गां चरन्तीं निवारय ॥

—चाणक्यनीति १४।१४

यदि केवल एक ही काम से जगत को वश करना है, तो पर-निन्दारूप अनाज को चरनेवाली इस जीभरूप गाय को रोककर रखो।

२. परापवादे मूको भव !

परनिन्दा करने के लिए मूक बन जाओ।

३. यदि तुम चाहते हो कि दूसरे लोग तुम्हारी निन्दा न करें, तो तुम भी किसी की निन्दा मत करो !

—पहेलवी टेक्स्ट्स (पारसीधर्म)

४. जब आपके अपने द्वार की सीढ़ियां मैली हैं तो अपने पड़ौसी की छत पर पड़ी हुई गन्दगी के लिए उलहना मत दीजिए !

—कनूफ्यूशियस

५. **नमाज में निन्दा का निषेध**—हज़रत मुहम्मद से एक नमाजी ने कहा—मैं नमाज पढ़ता था तब मेरे पाँच भाई गप्प लड़ा रहे थे। मैंने समझाया तो उल्टे मेरे पास आकर हुक्के की गुड़गुड़ाहट करते हुए मेरी मज़ाक करने लगे।

मैंने नमाज में उनकी शिकायत खुदा से की।

मुहम्मद ने कहा—नमाज में किसी की निन्दा (शिकायत) नहीं की जा सकती। तू ने यह धर्मविरुद्ध काम किया है।

६. यूरोप में **पेडलोक सोसाइटी** (निन्दानिषेधक कमेटी) है। उसका सदस्य न तो निन्दा करता है और न सुनता है। सदस्य बनते समय तीन बार ताला खोलकर बन्द करना होता है। मतलब यह है कि आज से **मैं मन-वचन-कर्म से किसी की निन्दा नहीं करूंगा।**

११ निन्दा में समभाव

१. निन्दा सुनकर डरो मत ! गलती हो तो निकाल लो ।

—धनमुनि

२. कटु आलोचना को सहना सीखो ! यदि ऐसा नहीं कर सकते, तो वह काम बन्द कर दो, जिससे तुम्हारी आलोचना होती हो ।

—रिस्टर

३. **गालिब** ! बुरा न मान जो, जायज बुरा कहे ,
ऐसा भी है कोई कि, सब अच्छा कहें जिसे ?

४. आवत गाली एक है, उलटत होत अनेक ।
कहे **कबीर** नहीं उलटिये, वही एक की एक ।।

५. निन्दक बाबा वीर हमारा ,
बिन ही कौड़ी व है विचारा ।
कोटि-कर्म का कल्मष काटै ,
काज संवारे विन ही साटै ।
आपन डूबै और कूं तारे ,
ऐसा प्रीतम पार उतारे ।
जुग-जुग जीवो निन्दक मोरा ,
. **रामदेव** ! तुम करहु निहोरा ।।

६. निन्दक मेरा पर उपकारी, **दादू** निन्दा करे हमारी ।

७. तुम जिसे ढाई सेर कहते हो, उसे कोई पौने दो सेर एवं कोई पौने चार सेर भी कह देता है ; क्योंकि देश-देश के विभिन्न तोल हैं। कहीं ३२ तोले का सेर है तो कहीं ४०, ४४, ५६, ६०, ८०, १०० एवं १२० तोले का भी सेर है। तुम्हें उलझन में न पड़कर अपना माल बढ़ाने की आवश्यकता है। तत्त्व यह है कि लोग चाहे तुम्हें अच्छा -बुरा कुछ भी कहें, ख्याल न करके आत्मिकगुणों को बढ़ाते रहो !

८. **चन्दन** निन्दा सुन यदि, गहे मौन की ओट ।
पर चुभती है तीर ज्यों, चित में लगती चोट ॥

९. **अपनी आलोचना सुनना कठिन**—कलाकार ने अपने सदृश ८० मूर्तियाँ बनाईं एवं स्वयं भी उनके बीच में बैठ गया। यम उसे लेने आया पहचान न सका। तब बोला–कलाकार ! तूने मूर्तियाँ कमाल की बनाईं हैं, किन्तु एक कमी रह गई अन्यथा इन्हें लेने स्वर्ग से शिविकाएँ आ जातीं। कलाकार सुनते ही खड़ा होकर पूछने लगा–कौन सी कमी है ?

यम ने कहा—यही कमी है कि तू अपनी आलोचना नहीं सुन सकता। बस पकड़ कर ले गया। —प्राचीन कथा

१२ आत्मनिन्दा

१. परस्तुतिं स्वनिन्दां च, कर्त्ता कोऽपि न दृश्यते ।

दूसरों की प्रशंसा और अपनी निन्दा करनेवाला आज कोई नहीं दीखता ।

२. परनिन्दा के समान पाप नहीं और आत्मनिन्दा के समान धर्म नहीं ।

३. निन्दणयाए णं पच्छाणुतावं जणयइ ।

—उत्तराध्ययन २९।६

अपनी निन्दा करने से जीव पश्चात्ताप अर्थात् "मैंने यह पाप क्यों किया"—ऐसे अपने प्रति खेद व्यक्त करता है ।

४. **अपनी निन्दा सुनने से पाप का नाश**—एक धर्मात्मा राजा के लिए स्वर्ग में महल बन गए एवं देवदूत उसके पास आने-जाने लगे । एक बार बोलाने पर न बोलने से राजा ने क्रुद्ध होकर एक योगी के सिर पर घोड़े की लीद डलवा दीं । पाप से स्वर्ग-महल लीद से भर गए । किसी ज्ञानी के कहने से राजा ने अपना पाप प्रकट कर दिया । लोग ज्यों ही उसकी निन्दा करने लगे महलों से लीद हटने लगी । एक लोहार ने निन्दा नहीं की अतः एक जगह कुछ लीद लगी रह गई ।

—कल्याण से

५. वैराग्यरङ्गो परवञ्चनाय, धर्मोपदेशो जनरञ्जनाय !
वादाय विद्याध्ययनं चमेऽभुत्-कियद्ब्रुवे हास्यकरं स्वमीश !
आयुर्गलत्याशु न पापबुद्धि, गतं वयो नो विषयाभिलाषः !
यत्नश्च भैषज्यविधौ न धर्मे,स्वामिन्! महामोहविडम्बना मे !

—रत्नाकर पञ्चविंशिका ६-१६

दूसरों को ठगने के लिए वैराग्य का रंग है, लोगों को खुश करने लिए धर्मोपदेश है और वाद-विवाद करने के लिए मेरा विद्याध्ययन है। नाथ ! अपना हास्य हो वैसा कितना-क कहूँ।

मेरी आयु घट रही है पर पापबुद्धि नही घटती, जवानी चली गई पर विषयाभिलाषा नहीं गई और औषधि का प्रयत्न कर रहा हूं, किंतु धर्म के लिए नहीं। हे नाथ ! मेरी मोहबिडम्बना कितनी विचित्र है !

१३ निन्दक

१. सर्ववर्णेषु निन्दकश्चाण्डालः ।

निन्दा करनेवाला चाहे किसी भी वर्ण का हो, वह वास्तव में चाण्डाल ही है ।

२. अन्नं जणं खिसइ बालपन्ने । —सूत्रकृतांग १३।१४

अज्ञानी जीव दूसरों की निन्दा करते हैं ।

३. मूर्खरसना परापवादगूथं समुद्धरेत् । —हिंगुलप्रकरण

मूर्खमनुष्यों की जीभ निन्दारूपी विष्टा उठाती है ।

४. नीचो महत्त्वमात्मनो मन्यते परस्य कृतेनापवादेन ।

—नीतिवाक्यामृत

नीच आदमी दूसरों की निन्दा करने में अपना महत्व मानता है ।

५. दह्यमानाः सुतीव्रेण, नीचाः परयशोऽग्निना ।
अशक्तास्तत्पदं गन्तुं, ततो निन्दां प्रकुर्वते ।।

—चाणक्यनीति १३।१०

गुणीजनों की यशरूप अग्नि से जलते हुए नीच व्यक्ति उनके गुणों को तो ग्रहण कर सकते नहीं, अतः उनकी निन्दा किया करते हैं । जैसे अंगूर के वृक्ष पर न पहुँच सकने से लोमड़ी ने कहा—
'ग्रेप्स आर सावर' अर्थात् अंगूर खट्टे हैं ।

६. जैसे—पशुओं को उगाली साहरे बिना, कवियों को कविता

किए विना, वक्ता को व्याख्यान दिये विना, गवैयों को राग का आलाप किये विना, लेखकों को लेख लिखे विना, व्यापारियों को व्यापार किये विना, धोबियों को कपड़ा धोये विना, नशेबाजों को नशा किये विना तथा कसाई एवं वेश्याओं को अपना-अपना किसब किये विना चैन नहीं पड़ता। उसी तरह निन्दकों को भी पराई निन्दा किए बिना चैन नहीं पड़ता, क्योंकि वे आदत से लाचार हैं।

—संकलित

७. यदि कोई मनुष्य तुम्हारे आगे किसी की निन्दा करता है तो निश्चय समझो कि किसी के आगे तुम्हारी निन्दा भी वह अवश्य करेगा।

१४ द्वेष

१. द्वेष उपशमत्यागात्मकेविकारे। —उत्तराध्ययन ६ टीका

उपशमभाव के त्यागरूप आत्मा के विकार को **द्वेष** कहते हैं।

२. दुःखानुशयी द्वेषः। —पातञ्जलयोगशास्त्र २।८

दुःखकी प्रतीति के पीछे-रहनेवाला क्लेश **द्वेष** है।

३. द्वेषाद् दुःखपरम्परा। —तत्त्वामृत

द्वेष से दुःखों की परम्परा चलती ही रहती है।

४. श्वन् ! त्वं तथैव सर्वत्र, जातिद्वेषात् प्रभर्त्स्यसे।

अरे श्वान ! जातिद्वेष के कारण ही तेरी प्रभर्त्सना होती है।

५. दोसे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-कोहे य माणे य।

—प्रज्ञापनापद २३।१

द्वेष दो प्रकार का है—(१) क्रोधरूप (२) मानरूप।

६. दोसवत्तिया मुच्छा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—कोहे चेव माणे चेव। —स्थानांग २।४

द्वेषप्रत्ययिक मूर्च्छा अर्थात् द्वेषजनित घृणा दो कारणों से उत्पन्न होती है (१) क्रोध से (२) मान से।

७. मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्, मास्वसारमुत स्वसा।

—अथर्ववेद ३।३०।३

भाई-भाई से और बहन-बहन से द्वेष न करें !

८. मूर्खाणां पण्डिता द्वेष्या, अधनानां महाधनाः ।
दुर्भगानां च सुभगाः, कुलटानां कुलाङ्गना ॥

—चाणक्यनीति ५।६

मूर्ख पण्डितों से, निर्धन धनिकों से, विधवास्त्रियां सोहागिनों से और कुलटायें कुलाङ्गनाओं से प्रायः द्वेष रखा करती हैं ।

९. प्रार्थना में द्वेष—

योऽस्मान् द्वेष्टि, यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।

—अथर्ववेदकाण्ड ३० सूक्त २७ मंत्र १

जो हमसे द्वेष करता है या जिससे हम द्वेष करते हैं, उसको हे प्रभु ! आपके जबड़े में रखते हैं ।

- योऽस्मभ्यमरातीं, यद्यश्चा नो द्विषते जनः ।
निन्द्याद् योऽस्मान्धिप्साच्च, सर्वं तं भस्मसा कुरु !

—यजुर्वेद ११।६

जो हममे शत्रुता रखते हैं, जो हमसे द्वेष रखते हैं, जो हमारी निन्दा करते हैं, जो हमें धोखा देते हैं, ईश्वर ! उन सब दुष्टों को भस्म कर डाल !

१५ राग

१. असंयममय-सुखाभिप्रायो रागः ।

—जैनसिद्धान्तदीपिका ६।१२

संयम हीन पौद्गलिक सुखों की अभिलाषा को 'राग' कहते हैं ।

२. सुखानुशयी रागः । —पातंजल-योगदर्शन २।७

सुख की प्रतीति के पीछे रहनेवाला क्लेश राग है ।

३. नास्ति राग समं दुःखम् ।

राग के समान कोई दुःख नहीं है ।

पिशाचा इव रागाद्या-श्छलयन्ति मुहुर्मुहुः । —योगशास्त्र

रागादिपाप पिशाचों की तरह आत्मा को बारबार धोखा दिया करते हैं ।

राग के भेद–

४. जं रायवेयणिज्जसमुइण्णं, तं भावओ तओ राओ ।
सो दिट्ठि विसय-नेहाणुरागरूवो अभिसंगो ।।
कुपवयणेसु पढमो, बिईओ सद्दाइएसु, विसएसु ।
विसयादनिमित्तो वि हु, सिणेहराओ सुयाईसु ।।

—विशेषावश्यकभाष्य २९६४-६५

माया-लोभरूप रागवेदनीयकर्म के उदय से होनेवाला राग 'भावराग' है । वह दृष्टिराग, विषयराग एवं स्नेहरागरूप

अभिष्वङ्ग है। पहला कुप्रवचनों में, मिथ्यादृष्टियों की वाणी में होता है। दूसरा शब्दादि विषयों में और तीसरा पुत्र, स्त्री आदि स्वजनों में होता है।

५. दृष्टिरागस्तु पापीयान्, दुरूच्छेद्यः सतामपि।

—वीतराग स्तोत्र

दृष्टिराग अर्थात् अपने पंथ का अंधविश्वास महापापी है और सत्पुरुषों के लिये भी दुस्त्याज्य है।

६. रागे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–माया य लोभे य।

—प्रज्ञापनापद २३।१

राग दो प्रकार का है—(१) माया (२) लोभ।

७. पेज्जवत्तिया मुच्छा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—माया चेव, लोहे चेव।

—स्थानांग २।४

रागवृत्ति से सम्बन्धित मूर्च्छा दो कारणों से उत्पन्न होती है (१) माया से (२) लोभ से।

८. असुहो मोहपदोसो, सुहो व असुहो हवदि रागो।

—प्रवचनसार १।८८

मोह और द्वेष अशुभ ही होते हैं, राग शुभ और अशुभ दोनों प्रकार का होता है।

९. राग दो प्रकार का है—(१) प्रशस्त (२) अप्रशस्त। कांटे से कांटे की तरह अप्रशस्तराग को हृदय से निकालने के लिये प्रशस्त रागरूप सूआ अन्दर डाला जाता है। अन्त में उसे भी निकालना ही है।

१६ अनुरागी

१. दूराद्वेक्षणे हासः, संप्रश्नेष्वादरो भृशम् ।
परोक्षेऽपि गुणश्लाघा, स्मरणं प्रियवस्तुषु ।।
असेवके चानुरक्ति-र्दानं संप्रियभाषणम् ।
अनुरक्तस्य चिह्नानि, दोषेऽपि गुणसंग्रहः ।।

—हितोपदेश २।५९-६०

दूर से देखकर, प्रेमपूर्वक हंसना, कुशल पूछने पर आदर करना, पीठ पीछे भी गुणों की प्रशंसा करना, प्रियवस्तु मिलने पर प्रेमी का स्मरण करना, सेवा न करने पर भी अनुराग दिखाना, प्रिय वचन सहित दान देना और दोष में भी गुणग्रहण करना—ये 'अनुरागी' के लक्षण हैं ।

२. **रागान्ध** :—

पशु-मानव-देवाश्चा- ऽनुरज्यन्ते सुरागके ।
तथैवामी विशेषेण, मृग-स्त्री-सर्प-भूभुजः ।।

—चन्दचरित्र पृष्ठ ७२

पशु, मनुष्य एवं देवता—ये सभी राग में अनुरक्त होते हैं, लेकिन मृग-स्त्री-सर्प और राजाओं का स्नेहराग विशेष माना गया है ।

३. रागान्धो हि जनः सर्वो, न पश्यति हिताहितम् ।

—यतिधर्मसमुच्चय

रागान्धप्राणी अपने हित-अहित को नहीं देखता ।

४. एक बार रागान्ध बादशाह ने अपनी बेगम से कहा—प्यारी ! मैं तुम्हारे लिए प्राण देने को तैयार हूं। तब बेगम ने निम्नलिखित शेर सुनाया—

मुझपे तुम मरते नहीं, पर मर रहे इन **चार** पर।
नाज[1] पर **अन्दाज**[2] पर **रफ्तार**[3] पर **गुफ्तार**[4] पर ॥

—उर्दू शेर

५. बीकानेर महाराज के भाई **पृथ्वीराज** की रानी **लालदे** मर गई। दाग देते समय रागविह्वल होकर बोले—

तो रां ध्यां नहि खावसूं, रे वासते ! निसंड।
मो देखत ही बालिया, **लालदे** हंदा हड्ड ॥

---

१. नखरा, २. कटाक्ष, ३. चाल, ४. वाणी।

राग-द्वेष

१. रागो य दोसोऽवि य कम्मबीयं। —उत्तराध्ययन ३२।७

राग-द्वेष ही कर्मों के बीज हैं।

२. राग-दोसे य दो पावे, पावकम्म-पवत्तणे।
—उत्तराध्ययन ३१।३

राग-द्वेष ये दोनों पाप-पापकार्यों में प्रवृत्ति करानेवाले हैं।

३. तयो मे भिक्खवे अग्गी—
रागग्गी, दोसग्गी, मोहग्गी। —इतिवुत्तक ३।४४

भिक्षुओ! तीन अग्नियाँ हैं—
(१) राग की अग्नि, (२) द्वेष की अग्नि, (३) मोह की अग्नि।

४. नत्थि रागसमो अग्गि, नत्थि दोससमो कलि।
—धम्मपद १५।६

राग के समान अग्नि नहीं है एवं द्वेष के समान क्लेश नहीं है।

५. कहने को तो कहता हूँ कोई गैर नहीं है।
पर दिल से मेरे अपना-पराया नहीं जाता॥ —उर्दू शेर

६. राग मधुमिश्रित जहर है और द्वेष खालिस।

७. दो प्रकार की बिजली है—एक खींचती है और दूसरी झटका देकर फेंक देती है, किन्तु दोनों ही मारनेवाली हैं। ऐसे ही राग-द्वेष को समझो।

८. रागस्स हेऊं समणुन्नमाहु, दोसस्स हेऊं अमणुन्नमाहु ।

—उत्तराध्ययन ३२।३६

राग के हेतु मनोज्ञ एवं द्वेष के हेतु अमनोज्ञ होते हैं ।

९. रागदोसस्सिया बाला, पावं कुव्वंति ते बहु । —सूत्रकृतांग ८।८

राग-द्वेष के आश्रित होकर अज्ञानीजीव विविध पाप किया करते हैं ।

१०. को दुक्खं पाविज्जा, कस्स य सुक्खेहिं विम्हओ हुज्जा ।
को वा न लभिज्ज मुक्खं, राग-द्दोसा जइ न होज्जा ।।

—मरणसमाधि प्र० १६७

यदि राग-द्वेष न हों तो संसार में न कोई दुःखी हो और न कोई सुख पाकर विस्मित ही हो, बल्कि सभी मुक्त हो जायें ।

१८ राग-द्वेष के क्षय से लाभ

१. रागस्स दोसस्स य संखएणं,
एगंतसोक्खं समुवेइ मोक्खं। —उत्तराध्ययन ३२।२

राग-द्वेष का क्षय करने से ही आत्मा एकान्त सुखमय मोक्ष को प्राप्त करता है।

२. जे जत्तिया य हेतु भवस्स, ते चेव तत्तिया मुक्खे।
—ओघनिर्युक्ति गाथा ५३

राग-द्वेषयुक्त चलना; देखना; बोलना आदि जितने भी कार्य संसार के हेतु हैं, यदि वे ही राग-द्वेष रहित हों तो मोक्ष के हेतु बन जाते हैं।

३. **ज्ञान कैसे हो!**

ज्ञानप्राप्ति के लिए राजा ने अनेक साधु बुलाए। ज्ञान नहीं हुआ, सबको कैद कर लिया। एक साधु ने राजा को ऊंट का मुर्दा दिखाकर कहा—जब तक यह तुम्हारे मन से न निकले, तुम कुछ भी खाना-पीना मत। राजा उसे भूलने की ज्यों-ज्यों चेष्टा करने लगा, वह आँखों के सामने अधिक आने लगा। हैरान होकर गुरु के पैर पकड़े। गुरु ने समझाया कि जैसे हृदय में मुर्दा रहेगा वहां तक खान-पान नहीं होगा, वैसे ही मन में राग-द्वेष रहेंगे, तब तक आत्म-ज्ञान नहीं होगा। राजा समझ गया और सब साधुओं को

मुक्त कर दिया ।

४. राग-द्वेषौ विनिर्जित्य, किमरण्ये करिष्यसि ?
अथ नो निर्जितावैतौ, किमरण्ये करिष्यसि ?
यदि राग-द्वेष को जीत लिया, फिर वन में जाकर क्या करेगा ?
यदि इन्हें नहीं जीता तो भी वन में जाकर क्या करेगा ?

५. रागदोसभयातीतं, तं वयं बूम माहणं ।
—उत्तराध्ययन २५।२१

जो राग-द्वेष और भय से रहित है, उसे हम ब्राह्मण कहते हैं ।

६. जो रागदोसेहिं समो स पुज्जो । —दशवैकालिक ९।३।११

जो राग-द्वेष में समभाव रखनेवाला है, वही पूज्य है ।

७. छिंदाहि दोसं विणएज्ज रागं,
एवं सुही होहिसि संपराए । —दशवैकालिक २।५

द्वेष का छेदन करो और राग को दूर हटाओ ! ऐसा करने से संसार में सुखी हो जाओगे ।

८. ण सक्का ण सोउं सद्दा, सोत विसयमागया ।
राग-दोसा उ जे तत्थ, ते भिक्खू परिवज्जए ।।
ण सक्का रूवमदट्ठुं, चक्खुविसयमागयं ।
राग-दोसा उ जे तत्थ, ते भिक्खू परिवज्जए ।।
ण सक्का गंधमग्घाउं, णासाविसयमागयं ।
राग-दोसा उ जे तत्थ, ते भिक्खू परिवज्जए ।।
ण सक्का रसमस्साउं, जीहाविसयमागयं ।
राग-दोसा उ जे तत्थ, ते भिक्खू परिवज्जए ।।

ण सक्का फासमवेएउं, फासविसयमागयं।
राग-दोसा उ जे तत्थ, ते भिक्खू परिवज्जए ॥

—आचाराङ्ग श्रुत २ अ. १५ चतुर्थमहाव्रत की भावना

शब्द श्रोत्रेन्द्रिय का विषय है। कान में पड़े हुए शब्दों को न सुनना शक्य नहीं, अतः साधु को चाहिए कि उनके प्रति मन में राग-द्वेष न आने दे।

आँखों के सामने आए हुए रूप को न देखना शक्य नहीं, अतः साधु को चाहिए कि उनके प्रति मन में राग-द्वेष न आने दे।

नाक के समीप आए हुए गन्ध को न सूंघना शक्य नहीं, साधु को चाहिए कि उनके प्रति मन में राग-द्वेष न आने दे।

जिह्वा पर आए हुए रस का आस्वाद न लेना शक्य नहीं, अतः साधु को चाहिए कि उनके प्रति मन में राग-द्वेष न आने दे।

शीतादि स्पर्श के उपस्थित होने पर उनका अनुभव न होना शक्य नहीं, अतः साधु को चाहिए कि उनके प्रति मन में राग-द्वेष न आने दे।

स्नेह

१. नेहपासा भयंकरा। —उत्तराध्ययन २३।४३

स्नेह के बन्धन भयंकर हैं।

२. यस्य स्नेहो भयं तस्य, स्नेहो दुःखस्य भाजनम्।
—चाणक्यनीति १।५

जिसका किसी में स्नेह होता है, उसीको भय होता है। स्नेह दुःख का भाजन है।

३. सुखं जीवन्ति निस्नेहा, यथा ते बालुकाकणाः।
सस्नेहास्त्वत्र पीड्यन्ते, यथा ते तिल-सर्षपाः॥

बालुकणों की तरह निःस्नेह व्यक्ति सुख से जीते हैं और सस्नेह तिल,सरसों की तरह पीले जाते हैं।

● निस्नेही तो सुख लहै, सस्नेही दुख होय।
तिल-सरसों, जग पीलिए, रेत न पीलै कोय॥

४. **मृत मृग-दम्पति के विषय में दो सखियों के प्रश्नोत्तर—**
निकट न दीखै पारधि, लग्या न दीखै बाण।
हूं तनैं पूछुं हे सखी! किस विध छूट्या प्राण?
जल थोड़ा नेहा घणां, लग्या नेह का बाण।
'तू पी! तू पी! तू पिये', इस विध छूट्या प्राण॥
—राजस्थानी दोहा

५. स्नेहवतः स्वल्पो हि रोषः । —कौटिलीय अर्थशास्त्र

स्नेही व्यक्ति को रोष बहुत कम हुआ करता है ।

६. स्नेहश्च निमित्त सव्यपेक्षश्च विप्रतिविद्धमेतत् ।

—उत्तररामचरित्र

स्नेह भी हो और वह निमित्त की अपेक्षा करनेवाला भी हो—ये दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं ।

२० स्नेह-त्याग

१. विजहित्तु पुव्वसंजोगं, न सिणेहं कहंचि कुव्विज्जा ।

—उत्तराध्ययन ८।२

पूर्व संयोग को छोड़ चुकने पर फिर किसी भी वस्तु में स्नेह न करो !

२. असिणेह सिणेहकरेहिं ! —उत्तराध्ययन ८।२

जो तेरे साथ स्नेह करे, उनसे भी निःस्नेहभाव से रह !

३. वोच्छिंद सिणेहमप्पणो, कुमुअं सारईयं व पाणियं ।

—उत्तराध्ययन १०।२८

कमलपत्र की भांति तू निर्लेप बन और अपने शरीर का भी स्नेह छोड़ !

४. स्नेहानुबन्धो बन्धूनां, मुनेरपि सुदुस्त्यजः ।

—श्रीमद्भागवत १०।४७।५

स्वजनों का स्नेहबन्धन तोड़ना मुनियों के लिए भी अत्यन्त कठिन है ।

५. स्नेहक्षयात्केवलमेति शान्तिम् । —उपदेशमाला

मात्र एक स्नेह का नाश होते ही परमशान्ति मिल जाती है ।

प्रेम

१. दर्शने स्पर्शने वापि, श्रवणे भाषणेऽपि वा ।
हृदयस्य द्रवत्वं यत्, तत्प्रेम इति कथ्यते ॥

देखते या छूते, सुनते या बोलते हृदय का पिघल जाना ही प्रेम कहा जाता है ।

२. **प्रेम** एक वेदनापूर्ण प्रसन्नता है ।

३. **प्रेम** स्थान और समय की सीमा से परे है । —विवेकानन्द

४. एक भयानक मानसिक रोग है; **प्रेम** । —प्लेटो

५. **प्रेम** करने का अर्थ है, अपनी प्रसन्नता को दूसरों की प्रसन्नता मे लीन कर देना । —लीननिज

६. विन गुन जोवन रूप धन, बिन स्वारथ हित जानि ।
शुद्ध कामना से रहित, प्रेम सकल **रसखानि** ।
दम्पति सुख अरु विषय रस, पूजा निष्ठा ध्यान ।
इनतें परे बखानिये, शुद्ध प्रेम **रसखानि** ।

७. प्रेम गुनों का प्रेम है, व्यक्तिप्रेम है मोह ।
बस इसके व्यक्तित्व निज, देते हैं कई खोय ॥ —दोहासंदेह

८. परम **प्रेम**मय मृदु मसि कीन्ही ,
चारुचित्र भीती लिखि लीन्ही । —रामचरितमानस

९. **प्रेम** और **वासना** में उतना ही अन्तर है, जितना **कांचन** और **कांच** में।

१०. ददाति प्रतिगृह्णाति, गुह्यमाख्याति पृच्छति।
भुङ्क्ते भोजयते चैव, षड्विधं प्रीतिलक्षणम्॥
—पंचतन्त्र २।५१

प्रेम के छः लक्षण हैं यथा—(१) प्रेमी प्रेमी को देता है, (२) उससे लेता है, (३) उससे अपनी गुप्त बात कहता है, (४) उसकी पूछता है, (५) उसके यहां भोजन करता हैं, (६) अपने यहां उसे भोजन करवाता है।

११. प्रेम मिलने के अभाव में सुसम्पूर्ण और व्यथा में मधुर होता है। —शरद्चन्द्र

१२. प्रेम पश्यति भयान्यऽपदेऽपि। —किरातार्जुनीय

प्रेम अस्थान में भी अनिष्ट की आशङ्का करता रहता है।

१३. उपयोगं तु प्रीतिर्न विचारयति। —हर्षचरित्र

प्रीति में उपयोग का विचार नहीं होता।

१४. प्रेम छिपाया ना छिपै, जा घट परगट होय।
जो पै मुख बोले नहीं, नैन देत हैं रोय॥
—कबीर

१५. हृदयं त्वैव जानाति, प्रीतियोगं परस्परम्। —भवभूति

आपसी प्रेम का योग हृदय ही जानता है।

१६. जो हृदय के बाणों से घायल हो चुका है, केवल वही प्रेम की शक्ति को पहचानता है।

१७. भारी से भारी चीज भी हलकी फूल जैसी हो जाती है, जब उसे प्रेम उठानेवाला होता है। —गांधी

१८. पति-पत्नी और पुत्र अपने स्वार्थ के लिये ही एक-दूसरे से प्रेम करते हैं; न कि उनके हित के लिए।

—बृहदारण्यकोपनिषद् २।४।५

२२ सहज एवं सच्चा-प्रेम

१. अहो ! साहजिकं प्रेम, दूरादपि विराजते ।
चकोरनयनद्वन्द्व - माह्लादयति चन्द्रमाः ॥

सुभाषितरत्न-भाण्डागार, पृष्ठ १६४

अहो ! स्वाभाविक प्रेम दूर से भी चमक जाता है, देखो ! चन्द्रमा कितनी दूर से चकोर के नेत्रों को आह्लादित करता है ।

२. प्रेम सत्यं तयोरेव, ययोर्योग-वियोगयोः ।
वत्सरा वासरीयन्ति, वत्सरीयन्ति वासराः ॥

—चन्दचरित्र पृष्ठ ६०

सच्चा प्रेम उन्हीं का है, जिनके योग-वियोग में क्रमशः वर्ष दिन के समान और दिन वर्ष के समान व्यतीत होने लगते हैं ।

३. प्रीति सीखिये ईख तैं, पोर-पोर **रसखान** ।
जहां गांठ तहां रस नहीं, यही नीति की बान ॥

४. सच्चे हार्दिक प्रेम का, होता असर अपार ।
मुग्ध स्त्रियों से देखलो ! मोहित है संसार ॥

—दोहासंदोह

२३ प्रेम की महिमा

१. प्रेम ही संसार में सब से सूक्ष्म शक्ति है, अगर दुनियाँ वैर से भरी होती तो इसका कभी का अन्त हो गया होता।
—गांधी

२. प्रेम ही स्वर्ग का मार्ग है, और मनुष्यत्व का दूसरा नाम है। सब प्राणियों से प्रेम करना ही सच्ची मनुष्यता है। —बुद्ध

३. पोथी पढ़-पढ़ जग मुवा, पंडित हुआ न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़ै सो पण्डित होय ॥ —कबीर

४. मनुष्य को अपनी ओर खींचनेवाला अगर जगत् में कोई चुम्बक है तो वह केवल प्रेम है। —गांधी

५. अमरीका का वनस्पति शास्त्री **कैकटस वृक्ष** (जिसकी प्रत्येक डाली कंटीली होती है) से प्रतिदिन अनुरोध करता था कि हे प्रिय वृक्ष! मुझे एक डाली बिना कांटे की भी दो। कुछ समय के बाद बिना कांटों की डाली निकल आई। दर्शकों के आश्चर्य का पार न रहा! तात्पर्य यह है कि वृक्षवत् मनुष्य भी प्रेम से कंटक- विहीन बन सकते हैं।

६. जीवन एक पुष्प है और प्रेम उसकी सौरभ। –विक्टरह्यूगो

७. जगत में सारतत्त्व है प्रेम, आधारशिला है सदाचार।
लाओत्से(-चीन का धार्मिक नेता)

२४ प्रेम-बन्धन

१. जैसो बंधन प्रेम को, तैसो बंध न और।
काठहि भेदे कमल को, छेद न निकलै भौंर॥
—वृन्दकवि

२. मुहब्बत नहीं आग से खेलना है,
लगाना पड़ेगा, बुझाना पड़ेगा। —आरज़ू

३. यह प्रेम को पंथ कराल महा,
तलवार की धार पैं धावनो है। —बोधा

४. प्रेम - पयोनिधि में धसिके,
हंसिके कढ़िवो हंसि-खेल नहीं फिर। —पद्माकरकवि

५. इश्क के घाट किसी को संभलते न देखा,
अच्छों-अच्छों का यहां पांव फिसलते दैखा ! —उर्दू शेर

२५ प्रेम का निर्वाह

१. धन दे तन को राखिए, तन दे रखिए लाज।
धन दे तन दे लाज दे, एक प्रीति के काज॥

२. देखो करणी कमल की, जलसों कीन्हों हेत।
प्राण तज्यो प्रेम न तज्यो, सूखो सरहि समेत॥ —सूरदास

३. जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नांय।
प्रेम गली अति साँकरी, तामें दो न समाय॥ —कबीर

४. चाखा चाहे प्रेम-रस, राखा चाहे मान।
एक म्यान में दो खड्ग, देखा सुना न कान॥

५. जौहरशनास देखलें, जौहर कमाल के।
कागज़ पे रख दिया है, कलेजा निकाल के॥

६. खो गए जब तेरा मकाँ देखा,
मिटगए जब तेरा निशाँ देखा।

७. नहीं जो खार से डरते, वही उस गुल को पाते हैं।
उनसे मिलने का तरीका अपने को खो जाने में है। —उर्दू शेर

८. प्रीति करै सो बावरो, कर तोड़े सो क्रूर।
प्रीति करी आजन्म लों, लेय निभै सो शूर॥

९. यह कहना कि तुम एक व्यक्ति से आजीवन प्रेम करते

रहोगे—यही कहने के समान है कि एक मोमबत्ती जब तक तुम चाहोगे, जलती रहेगी। —टालस्टाय

१०. महात्मानः प्रणयिनां प्रणयं खण्डयन्ति न।
—त्रिषष्ठि० २।४

महापुरुष अपने प्रेमियों से किया हुआ प्रेम कभी नहीं तोड़ते।

११. अवज्ञात्रुटितं प्रेम, सुसंधातुं क ईश्वरः।
संधि न स्फुटितं याति, लाक्षा लेपेन मौक्तिकम्॥
—चन्दचरित्र, पृष्ठ ११०

अपमान से टूटे हुए प्रेम को कौन जोड़ सकता है? फूटा हुआ मोती लाख के लेप से नहीं जुड़ता।

१२. **रहिमन** धागा प्रेम का, मत तोड़हु तटकाय।
टूटे से फिर ना मिले, मिलत गाँठ पड़ जाय॥

२६ प्रेम का नाश

१. अत्यधिक नखरे प्रेम को नष्ट कर देते हैं।

—रोम्यांरोला

२. प्रेम के मार्ग में चालाकी बहुत बुरी चीज़ है। —रूमी

३. प्रीति जहाँ पर्दा नहीं, पर्दा वहाँ न प्रीति।
प्रीति करे पर्दा रखे, है यह रीति कुरीति॥

४. प्रेम और संदेह एक साथ एक हृदय में नहीं रह सकते।

—खलील जिब्रान

५. प्रेम की दो अधोगतियाँ हैं—

(१) मां से स्त्री पर।

(२) स्त्री से संतान पर।

प्रेम की दो उर्ध्वगतियाँ हैं—

(१) माँ से सन्तों पर।

(२) सन्तों से ईश्वर पर। —विनोबा

२७ प्रेम के भेद

१. प्रेम के तीन रूप हैं–

(१) भक्ति, (२) मैत्री, (३) करुणा।

महापुरुषों के प्रति भक्ति, तुल्य व्यक्तियों से मैत्री और दुःखित के प्रति करुणा होनी चाहिए।

२. प्रेम दो प्रकार का हैं–

(१) अधोगामी (२) ऊर्ध्वगामी।

अधोगामी प्रेम से मोह, मोह से वासना और वासना से पतन होता है।

ऊर्ध्वगामी प्रेम से सेवा, सेवा से त्याग और त्याग से आत्म-शुद्धि होती है।

३. उत्तम मध्यम अधम की, पाहन सिकता तोय।
प्रीति अनुक्रम जानिए, वैर व्यतिक्रम होय।

२८ प्रेम की प्रेरणा

१. **तुलसी** या संसार में, भाँति-भाँति के लोग।
सबसे मिलकर चालिए, नदी-नाव-संयोग ।।

२. जैते जग में मिनख हैं, सबसे रखिये हेत।
को जाने किह काल में, विधि काको संग देत ।।

३. संसार में इतना लड़ाई-झगड़ा, राग-द्वेष, तनातनी क्यों है? इसीलिए कि हममें एक-दूसरे से प्रेम नहीं।
शान्ति का उपाय मात्र एक प्रेम ही है। हर आदमी से प्रेम करो! फिर वह चाहे कहीं का हो, और कोई भी हो!

—मोत्सू (ईसा से ५०० वर्ष पूर्व चीन में हुआ था।)

४. प्रेम की अवधि हमें इतनी बढ़ानी चाहिए कि उसमें गाँव, नगर, प्राँत, देश यावत् सारा संसार समा जाय।

—गाँधी

५. यदि तुम प्रिय बनना चाहते हो तो प्रेम करो और प्रेम के योग्य बनो।

—फ्रैंकलिन

६. यदि तुम्हें कोई प्रेम नहीं करता तो निश्चय समझो कि यह तुम्हारी अपनी ही त्रुटि है।

—डाड्रिज

७. कली को जीतना है तो, मधुर मनुहार से जीतो,
हिरन-मन जीतना है तो, मधुर झंकार से जीतो !
किसी को जीतना क्या है ! खड्ग से तोप से बम से-
किसी को जीतना है तो, हृदय के प्यार से जीतो !

—हिन्दी कविता

२८ प्रेमी

१. धर्म धैर्य संयम नियम, सोच विचार अनेक।
नारायण प्रेमी निकट, इनमें रहे न एक॥

२. राम बुलावा भेजिया, **कबीरा** दीन्हां रोय।
जो सुख प्रेमी संग में, सो बैकुण्ठ न होय॥

३. मिलबो भलो न बिछुरवो, तज दोनों का संग।
बिछुरत मूई माछली, मिलकर मुवो पतंग॥

४. याद रखना भी मिलन का ही एक रूप है। —खलील जिब्रान

५. दूरस्थोऽपि न दूरस्थो, यो यस्य हृदये स्थितः।
यो यस्य हृदये नास्ति, समीपस्थोपि दूरतः॥
—चाणक्यनीति १४।६

जो जिसके हृदय में है, वह दूर रहता हुआ भी उसके निकट ही है। जो जिसके हृदय में नहीं है, वह निकट रहता हुआ भी उससे दूर है।

६. दयितं जनः खलु गुणीति मन्यते। —शिशुपालबध
प्रिय व्यक्ति को मनुष्य गुणी है—ऐसा मानता है।

७. अन्यमुखे दुर्वादः, स्वप्रियवदने स एव परिहासः।
इतरेन्धनजन्मा यो, धूमः सोऽगुरुभवो धूपः॥
—गोवर्धनसप्तशती

दूसरे के मुख से कही हुई जो बात 'निंदा' मानी जाती है। वही बात अपने प्रेमी के मुख की हो तो 'मज़ाक' (क्रीड़ा) हो जाती है। जैसे-जलते समय सामान्य **लकड़ी** से निकाला हुआ जो **धूम**(धुवां) कहलाता है, **अगर** से निकलने पर वही **धूप** कहलाने लगता है।

८. कुर्वन्नपि व्यलीकानि, यः प्रियः प्रिय एव स।
अनेकदोषदुष्टोऽपि, कायः कस्य न वल्लभः ॥

—हितोपदेश ३।१२९

अनेक अपराध करलेने पर भी प्रिय, प्रिय ही रहता है, यह अपना शरीर अनेक दोषयुक्त है फिर भी प्यारा ही लगता है।

९. सुहाते की लात सही, अनसुहाते की बात नहीं।

—हिंदी कहावत

१०. कमाऊ दीकरो कुटुम्ब ने बहालो,
दूझणी भैंसनी पाटु सारी लागे।

— गुजराती कहावत

११. आप-आपरो जी सगला ने प्यारो है।

—राजस्थानी कहावत

१२. आप मरतां बाप किण ने याद आवै !

" " "

१३. चाम प्यारो नहीं, दाम (काम) प्यारो हैं।

" " "

१४. पावणो प्यारो पण एक-दो दिन।

" " "

१५. चाव करै जिकैरा चाकर नहीं जिकैरा ठाकर।

" " "

१६. लोग दुनियाँ में प्रिय बनने की कोशिश करते हैं, घर में प्रिय बनने की नहीं।

प्रेमी का विरह–

१७. तस्य तदेव हि मधुरं यस्य मनो यत्र संलग्नम्।
जिसका मन जहाँ लग गया, उसके लिए वही मधुर है।

१८. दाढ़ां खटके कांकरो, पू.स जु खटके नैण,
कहियो खटके आकरो, विछुड़्या खटके सैण।
साज़न तो साले नहीं साले आहिठाण,
ऊंट मर्यो साले नहीं, साले पड़्यो पिलाण।

—राजस्थानी दोहे

३० जाति-प्रेम के उदाहरण

१. **बीकानेर के दीवान**—बैद मुंहता हिन्दूसिंहजी भोजन की तैयारी कर रहे थे। एक घी बेचनेवाला बैद जाति का ओसवाल आया। उन्होंने मनुहार करके उसे अपने साथ खाना खिलाया एवं बाद में घी खरीदा।

२. **मुर्शिदाबाद के सेठ**—उनके यहां कोई भी ओसवाल भाई चला जाता तो उसे बड़े प्रेम से भोजन करवाते, व्यापार करने के लिये कपड़े की एक गांठ देते जिससे वह कमा-खाने में सफल हो जाता। एक ही नहीं, अनेकों को उन्होंने ऐसी सहायता दी थी।

३. **पालीवालब्राह्मण**—कहा जाता है कि किसी समय पाली (मारवाड़) में पालीवालों के लाख घर थे। कोई भी पाली-वाल ब्राह्मण बाहर से आ जाता तो प्रत्येक घरवाले एक-एक रुपया और प्रत्येक घरवाले एक-एक ईंट देकर उसे अपने तुल्य लखपति बना लेते और वहाँ बसा लेते। (अग्रवालों के उद्भव स्थान अग्रोहा के लिये भी यही बात प्रसिद्ध है।)

३१ मोह

१. राग-द्वेष परिणतिर्मोहः ।

—जैनसिद्धान्तदीपिका ६।८

रागद्वेष के परिणाम को 'मोह' कहते हैं ।

२. नास्ति मोहसमो रिपुः ।

—चाणक्यनीति ५।१२

मोह के समान वैरी नहीं ।

३. मोहेण गब्भं मरणाइ एइ ।

—आचाराङ्ग ५।३

मोह से जीव बार-बार जन्म-मरण को प्राप्त होता है ।

४. मंदा मोहेण पाउडा ।

—सूत्रकृतांग ३।१।११

अज्ञानी जीव मोह से आवृत होते हैं ।

५. अजानन् माहात्म्यं, पतति शलभस्तीव्रदहने ,
समीनोप्यज्ञानाद् वडिशयुतमश्नाति पिशितम् ॥
विजानन्तोप्येते वयमपि विपज्जालजटिलान् ,
न मुञ्चामः कामानहह ! गहनो मोहमहिमा ॥

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक २१

परिणाम को नही जानता हुआ पतंग दीपक की तीव्र अग्नि में गिरता है । मछली भी अज्ञानवश कांटे सहित मांस को निगल

जाती है। लेकिन हम काम-भोगों को दुःखदायी जानते हुए भी नहीं छोड़ पाते। अहो ! मोह की महिमा कितनी गहन है।

६. मायाहिं पियाहिं लुप्पइ, णो सुलहा सुग्गई य पेच्चओ।

—सूत्रकृतांग २।१।३

जो माता-पिता के मोह में फंस जाता है, उसके लिए परलोक में सुगति सुलभ नहीं होती।

७. जाणमाणो परिसाए, सच्चामोसाणि भासइ।
अक्खीण-झंझे पुरिसे, महामोहं पकुव्वइ॥

—दशाश्रुत ०९।९

जो स्थिति को जानता हुआ भी सभा के बीच में अस्पष्ट एवं मिश्रभाषा (कुछ सच, कुछ झूठ) का प्रयोग करता है तथा कलह-द्वेष से युक्त है, वह महामोहकर्म का बंध करता है।

३२ मोह-क्षय

१. सेणावइंमि निहते, जहा सेणा पणस्सइ ।
एवं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए ॥

—दशाश्रुत ०५

जैसे—सेनापति के मर जाने पर सारी सेना भाग जाती है, उसी प्रकार मोह के क्षय होने पर सभी कर्म नष्ट हो जाते ।

२. यदा ते मोहकलिलं, बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ।
तदा गन्तासि निर्वेदं, श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥

—गीता २।५२

जब तेरी बुद्धि—इस मोह दलदल को बिलकुल तर जायेगी तब तू सुनने योग्य एवं सुने हुए के वैराग्य को प्राप्त होगा ।

३. कस्मात्सौख्यं भवति भगवन् ? शान्तितः सा च कस्मा-
च्चेतःस्थैर्यात् स्थितिरजनि मनः कस्य ? यः स्यान्निराशः ।
नैराश्यं वै मिलति च कथं ? यत्र नासक्तिरन्तः,
साऽनासक्तिर्विलसति कुतो ? यस्य बुद्धौ न मोहः ।

भगवान् ! सुख किससे मिलता है ?
शांति से ।
शांति किससे प्राप्त होती है ?
चित्त की स्थिरता से ।

मन किसका स्थिर होता है ?
जो आशा (मोह) से मुक्त होता है ।
आशा से मुक्ति कैसे मिलती है ?
मन में अनासक्ति होने से ।
अनासक्ति किसे मिलती है ?
जिसकी बुद्धि में मोह नहीं होता ।

४. लीला की लगन मांह, ज्ञान की जगन नांह,
जग न रहाय नर ! तउ न रहायवो ।
चले जर कौन-वट को यहां करत हठ,
नदी-तट तरु कौन भांति ठहरायवो ।
सपना जहान तामें अपना निदान कौन,
जपना **किसन** ! जान तातें दुख जायवो ।
मोह में मगन सगमग ना धरे है पग,
नग न चलेंगे संग नगन चलायवो ॥

५. मोहं जहि महामृत्युं, देह-दाससुतादिषु ।
यं जित्वा मुनयो यान्ति, तद्विष्णोः परमंपदम् ॥
—विवेकचूड़ामणि

देह, स्त्री और पुत्रादि में मोहरूप महामृत्यु को छोड़; जिसको जीतकर मुनिजन भगवान के उस परमपद को प्राप्त होते हैं ।

६. उलूकयातुं शुशुलूकयातुं, जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्,
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं, दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र !
—अथर्ववेद ८।४।२२

उल्लू की चाल 'मोह', भेड़िये की चाल 'द्वेष', कुत्ते की चाल

'जातिद्रोह और चाटुकारिता', चक्रवाक की चाल 'काम', गरुड़ की चाल 'अभिमान', गीध की चाल 'लोभ' को अर्थात्—हे आत्मा ! मोहादि छः राक्षसों को नष्ट कर दो । अन्यथा पत्थर से पक्षी की तरह इनके द्वारा मारे जाओगे । (यहां मोह आदि को उल्लू, भेड़िया, आदि की उपमा दी गई है ।)

३३ मित्र

१. आपत्सु स्नेहसंयुक्तो मित्रम् । —कौटिलीय अर्थशास्त्र

विपत्ति के समय स्नेह रखनेवाला मित्र है।

२. माथुं आपे ते मित्र । —गुजराती कहावत

३. आपत्काले तु संप्राप्ते, यन्मित्रं मित्र मेवतत् ।
वृद्धिकाले तु संप्राप्ते, दुर्जनोऽपि सुहृद् भवेत् ।।
—पंचतंत्र २।११८

आपत्ति के समय जो मित्र है, वस्तुतः सच्चा मित्र वही है। सुख एवं धनवृद्धि के समय तो दुर्जन भी मित्र बन जाता है।

४. तन्मित्रं यत्र विश्वासः । —चाणक्यनीति २।४

वास्तव में मित्र वही है, जिसमें व्यक्ति का विश्वास हो।

५. यं दृष्ट्वा वर्धते स्नेहः, क्रोधश्च परिहीयते ।
स विज्ञेयो मनुष्येण, ममैष पूर्वमित्रकः ।।
—चन्दचरित्र पृष्ठ ८२

जिसे देखकर स्नेह की वृद्धि एवं क्रोध की शान्ति हो, उसे अपना पूर्वजन्म का मित्र समझना चाहिये।

६. शोकारातिभयत्राणं, प्रीतिविश्रम्भभाजनम् ।
केन रत्नमिदं सृष्टं, मित्रमित्यक्षरद्वयम् ?
—हितोपदेश १।२१३

मित्र शोक, और शत्रु भय से रक्षा करनेवाला है, प्रीति व विश्वास का भाजन है ! लेकिन यह समझ में नही आता कि इस दो अक्षरों के रत्न (मित्र) को बनाया किसने ?

७. अमृतं शिशिरे वह्नि-रमृतं प्रियदर्शनम् ।
अमृतं राजसम्मान-ममृतं क्षीरभोजनम् ॥

—पञ्चतंत्र १।१३६

सर्दी के समय अग्नि, प्रियमित्र के दर्शन, राजा का सम्मान और दूध का भोजन ये चारों अमृतवत् सुखप्रद-प्रिय हैं ।

८. व्याधितस्यार्थहीनस्य, देशान्तरगतस्य च ।
नरस्य शोकदग्धस्य, सुहृद्दर्शनमौषधम् ॥

—सुभाषितरत्न भाण्डागार, पृष्ठ ९२

रोग के समय तथा शोक-संतप्त होने पर—इन अवस्थाओं में मित्र के दर्शन औषधि का काम करते है ।

९. विद्या मित्रं प्रवासेषु, भार्या मित्रं गृहेषु च ।
व्याधितस्यौषधं मित्रं, धर्मोमित्रं मृतस्य च ।

—चाणक्यनीति ५।१५

परदेश में विद्या मित्र है, घरों में स्त्री मित्र है, रोगी के लिए औषधि मित्र है और मृतपुरुष के लिये धर्म मित्र है ।

१०. रोगिणां सुहृदो वैद्याः प्रभूणां चाटुकारिणः ।
मुनयो दुःखदग्धानां, गणकाः क्षीणसंपदाम् ॥

रोगियों के मित्र वैद्य हैं, राजाओं के मित्र हां में हां करनेवाले हैं, दुःखी प्राणियों के मित्र साधु हैं और क्षीणसम्पदावालों के मित्र ज्योतिषी हैं ।

११. **तुलसी** असमय के सखा, धीरज धरम विवेक।
साहित साहस सत्यव्रत, रामभरोसो एक ॥

१२. बुद्धिर्नाम च सर्वत्र, मुख्यमित्रं न पूरुषः।
सभी जगह मुख्यमित्र अपनी बुद्धि ही है, पुरुष नहीं।

१३. मौन और एकान्त आत्मा के सर्वोत्तम मित्र हैं।

—लाँग फेलो

१४. पुरिसा ! तुममेव तुमं मित्तं किं बहियामित्तमिच्छसि।

—आचाराङ्ग ३।३

हे पुरुष ! तुम ही, तुम्हारे मित्र हो। बाह्यमित्र की इच्छा क्यों करते हो ?

१५. औरसं कृतसंबन्धं, तथा वंशक्रमागतम्।
रक्षितं व्यसनेभ्यश्च, मित्रं ज्ञेयं चतुर्विधम् ॥

—हितोपदेश २।२०३

मित्र चार प्रकार के हैं (१) एकदेह से उत्पन्न, (२) संबन्ध से बना हुआ, (३) कुल क्रमागत, (४) विपत्ति में रक्षित।

३४ मित्र के गुण-दोष

१. शुचित्वं त्यागिता शौर्यं, सामान्यं सुख-दुखयोः ।
दाक्षिण्यं चानुरक्तिश्च, सत्यता च सुहृदगुणाः ॥
—हितोपदेश १।६६

पवित्रता, उदारता, शौर्य, सुख-दुःख में समानता, दक्षता, अनुराग, सच्चाई—ये सब मित्र के गुण हैं ।

२. जे न मित्र दुख होहिं दुखारी,
तिन्हहिं विलोकत पातक भारी ।
निज दुख गिरि सम रज करि जाना,
मित्र का दुख रज मेरु समाना ॥ —रामचरितमानस

३. सज्जन ऐसा कीजिये, ढाल सरीखा होय ।
दुख में तो आगे रहे, सुख में पाछो होय ॥
रहस्यभेदो याञ्चा च, नैष्ठुर्यं चलचित्तता ।
क्रोधो निःसत्यता द्यूत-मेतन्मित्रस्य दूषणम् ॥
—हितोपदेश १।६८

गुप्त बात को प्रकट करना, मांगना, निष्ठुरता, चित्त की चंचलता, क्रोध, असत्य, द्यूत—ये मित्र के दोष हैं ।

३५ सुमित्र एवं सच्चा मित्र

१. पापान्निवारयति योजयते हिताय,
गुह्यं निगूहति, गुणान् प्रकटीकरोति ।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले,
संन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति संतः ।

—भर्तृहरि-नीतिशतक ७३

पाप से हटाता है, हित के काम में लगाता है, गुह्य बात को गुप्त रखता है, गुणों को प्रकट करता है । आपत्तिकाल में साथ नहीं छोड़ता, समय पर सहायता देता है, सन्त अच्छे मित्र के—ये लक्षण कहते हैं ।

२. अप्रियाण्यपि पथ्यानि, ये वदन्ति नृणामिह ।
त एव सुहृदः प्रोक्ता, अन्ये स्युर्नामधारकाः ॥

—पञ्चतन्त्र २।१७०

जो हित की बात कठिन शब्दों में भी कह देते हैं, वास्तव में मित्र वे ही हैं । दूसरे तो नाम के मित्र हैं ।

३. नालिकेरसमाकारा, दृश्यन्ते हि सुहृज्जनाः ।
अन्येबदरिकाकारा, बहिरेव मनोहराः ॥

—हितोपदेश १।६४

सन्मित्र नारियल के फल के समान अन्दर से सारयुक्त होते हैं और कुमित्र बदरीफलवत् केवल बाहर से मनोहर लगते हैं ।

४. एक एव सुहृद्धर्मो, निधनेप्यनुयाति यः ।
शरीरेण समं नाशं, सर्वमन्यत्तु गच्छति ॥

—हितोपदेश १।६४

मरने के बाद साथ चलनेवाला सच्चा मित्र एक धर्म ही है, अन्य वस्तुएँ तो शरीर के साथ ही नष्ट हो जाती हैं ।

५. मुख मीठा सज्जन घणा, मिजलस मित्र अनेक ।
काम पड्यां कायम रहे, सो लाखन में एक ॥

६. मिसरी घोले झूठ की, ऐसे मित्र हजार ।
जहर पिलावे साँच का, वे विरले संसार ॥

७. साचो मित्र सचेत, कहो काम न करै किसो !
हरि अर्जुन रै हेत, रथ कर हाँक्यो **राजिया** !

—राजस्थानी सोरठा

८. पूर्व जन्म की मित्रता (कार्तिक सेठ एवं पूर्ण तापस के भव की) को निभाने के लिए शकेन्द्र-असुरेन्द्र ने कोणिक के लिए भीषण संग्राम किया ।

९. डेलकारनेगी ने कहा—मेरी सारी सम्पत्ति लेकर मुझे कोई एक सच्चा मित्र दे दो !
अमेरिका के धनकुबेर हेनरीफोर्ड ने पूछने पर एक पत्रकार से कहा—अपार धन-सम्पत्ति होने पर भी मेरे जीवन में सबसे बड़ी कमी यह रह गई कि धन के नशे में मैं सच्चे मित्र को नहीं पा सका ।

१०. मीन काटि जल धोइए, खाए अधिक पियास ।
तुलसी प्रीति सराहिए, मुये मित्र की आस ॥

११. एक सच्चामित्र दो शरीर में एक आत्मा के समान है।

—अरस्तू

१२. जीवन में तीन सच्चे मित्र हैं :-

(१) वृद्ध पत्नी (२) पुराना कुत्ता (३) वर्तमान धन।

—फ्रैंकलिन

१३. जैसे पुरानी लकड़ी जलने में उपयोगी, पुराना घोड़ा चढ़ने में अच्छा एवं पुरानी मदिरा पीने में लाभदायक है। वैसे ही पुराने मित्र विश्वसनीय और श्रेष्ठ होते हैं।

—लियोनाल्ड राइट

१४. एक घण्टे का अण्डा, एक वर्ष की शराब और तीस वर्ष का मित्र सर्वोत्तम होता है। —इटालियन कहावत

Where and what, when and why, how and who—
These six are my true friends.

—रडयार्ड किपलिंग

व्हेयर एण्ड व्हाट, व्हैन एण्ड व्हाई, हाऊ एण्ड हू–ये छः मेरे सच्चे साथी हैं।

कौन ? कहाँ ? और कैसे ? क्या ? क्यों ? और कब ?
छः ये सच्चे साथी मेरे, मुझे सिखाया सब।

३६ मित्र की आवश्यकता

१. एकश्चार्थान्न चिन्तयेत् । —विदुरनीति १।५१

मनुष्य को चाहिए कि विचारणीय विषयों पर अकेला विचार न करें अर्थात् किसी साथी के साथ करे ।

२. द्वितीयवान् हि वीर्यवान् । —शतपथब्राह्मण ३।७।३।८

जिसके साथी हैं, वही शक्तिमान होता है ।

३. मित्रवान् साधयत्यर्थान्, दुःसाध्यानपि वै यतः ।
तस्माद् मित्राणि कुर्वीत, समानान्येव चात्मनः ।।

—पञ्चतन्त्र २।२८

मित्रवाला व्यक्ति दुःसाध्य अर्थ को भी साध लेता है, अतः मनुष्य अपने तुल्य मित्र अवश्य बनाए ।

४. दुःखितः सुखितो वापि, सख्युर्नित्यं सखा गतिः ।

—वाल्मीकिरामायण ४।८।४०

दुःखी हो या सुखी, मित्र की गति मित्र से ही होती है ।

३७ कुमित्र

१. वरं न मित्रं न कुमित्रमित्रम् । —चाणक्यनीति १६।१३

मित्र का न होना अच्छा, किन्तु कुमित्र का होना अच्छा नहीं ।

२. कुमित्रमित्रेण, कुतोऽभिनिर्वृतिः ? —चाणक्यनीति १६।१४

कुमित्र मित्र होने से सुख कहाँ ?

३. न स सखा यो न ददाति सख्ये । —ऋग्वेद १०।११७।४

वह मित्र नहीं, जो मित्र की सहायता नहीं करता ।

४. सेवक-शठ नृप-कृपण कुनारी, कपटी-मित्र शूल सम चारी ।
पीछे अनहित मन कुटिलाई, अस कुमित्र परिहरे भलाई ।
—रामचरितमानस

५. बेदिल दोस्त दुश्मन नी गरज सारे । —गुजराती कहावत

६. पल-पल में पलटै परा, पल-पल में हुवै मीत ।
तुलसी ऐसे मीत की, सन्निपात की रीत ।।

७. पल-पल में कर प्यार, पल-पल में पलटै परा ।
वै मतलब का यार, रहै ना छाना **राजिया** !
—राजस्थानी सोरठा

८. न भजे पापके मित्ते । —धम्मपद ७८

पापी मित्र का साथ नहीं करनी चाहिये ।

९. परोक्षे कार्यहन्तारं, प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं, विषकुम्भं पयोमुखम् ॥

—चाणक्यनीति २।५

जो मित्र परोक्ष में काम बिगाड़ता है और प्रत्यक्ष में मीठा बोलता है ऐसा मित्र जहर का घड़ा है, मात्र उसके मुख पर थोड़ा-सा दूध है। अतः उसका त्याग कर देना चाहिए।

१०. खाली हाथ आकर कुछ न कुछ ले ही जानेवाला, बड़ी बातें बनानेवाला, हांजीड़ा और नरक का साथी—ये चार प्रकार के मित्र अमित्र हैं एवं दूर से ही त्याज्य हैं।

—जातक

११. आए को आदर नहीं, चलत न पूछै बात ।
तुलसी ऐसे मित्र के, सिर पर डारो खात ॥

१२. मन मलीन तन सुन्दर कैसे,
विषरस-भरा कनक - घट जैसे ।

—रामचरितमानस

३८ मित्र बनाने के विषय में

१. वह व्यक्ति जीवन की कला को भूल गया है,जो नए मित्र नहीं बना सकता।

२. लोगों को मित्र बनाने की चार रीतियाँ हैं—
(१) मिलने पर मुस्काना, (२) नाम याद रखना,(३) दिलचस्पीपूर्वक बात करना, (४) उसके गुणों की प्रशंसा करना।
—डेलकार्नेगी

३. परिहास में भी मित्र को ठेस नहीं पहुंचानी चाहिए।
—सायरस

४. दूसरे लोगों में दिलचस्पी लेकर हम दो मास में जितने मित्र बना सकते हैं, दूसरों को हम में दिलचस्पी लेनेवाला बनाने का प्रयत्न करके दो वर्ष में भी उतने मित्र नहीं बना सकते
—डेलकार्नेगी

५. अगर तुम बड़े आदमी को मित्र बनाना चाहते हो तो उसके गलती करने पर सुधार दो। यदि छोटे को मित्र बनाना चाहते हो तो उसके गुणों की प्रशंसा करो।

६. मित्र चाहिये तो मीन जैसे बनाओ, सरोवर के पंछी जैसे नहीं!

७. A Fraind in Power is Fraind Lost.
एफ्रैण्ड इन पावर इज फ्रेण्ड लोस्ट। —अंग्रेजी कहावत
उच्च-पदस्थ मित्र को अपना खोया हुआ मित्र समझना चाहिए।

८. यो मित्रं कुरुते मित्रं, वीर्याभ्यधिकमात्मनः।
स करोति न संदेहः, स्वयं हि विषभक्षणम्।
—पञ्चतन्त्र ४।२५

जो अपने से अधिक शक्तिशाली को मित्र बनाता है, वह स्वयं निःसदेह विष-भक्षण करता है।

९. An Open enemy is better then butyful frind.
एन ओपन एनीमी इज़ बेटर देन ब्यूटी फुल फ्रेण्ड।
—अंग्रेजी कहावत

संदिग्ध मित्र की अपेक्षा खुला शत्रु अच्छा है।

१०. पण्डितोऽपि वरं शत्रु-र्न मूर्खो हितकारकः।
—पञ्चतन्त्र १।३७५

पंडित शत्रु अच्छा है, लेकिन मूर्ख मित्र अच्छा नहीं।

११. दो मित्रों के बीच में पड़ना एक से हाथ धोना है और दो शत्रुओं के बीच में पड़ना एक को अपना बनाना है।

१२. दुश्मने दाना वेद अज दोस्ते नादां। —पारसी कहावत
मूर्ख मित्र से विद्वान् शत्रु अच्छा।

१३. जिसके बहुत से मित्र हैं, निश्चित जानो। उसके एक भी मित्र नहीं है। —अरस्तू

१४. मित्रों की आलोचना करते समय यदि संताप होता हो तो

करते रहो, किन्तु यदि उसमें रस आने लगे तो बन्द कर दो। —डेलकार्नेगी

१५. मित्रों की भर्त्सना तो एकान्त में करो, किन्तु प्रशंसा सर्वत्र और मुक्तकण्ठ से करो। —सायरस

१६. शत्रुर्दहति संयोगे, वियोगे मित्रमप्यहो !
उभयोर्दुःखदायित्वं, को भेदः शत्रु-मित्रयोः ?

शत्रु संयोग में जलाता है और मित्र वियोग में जलाता है। जब दोनों ही दुःखदायी हैं तो फिर शत्रु-मित्र में अन्तर क्या रहा ?

३९ मित्रता

१. उपकाराच्च लोकानां, निमित्तान्मृग-पक्षिणाम् ।
भयाल्लोभाच्च मूर्खाणां, मैत्री स्याद् दर्शनात् सताम् ।।

—पञ्चतन्त्र २।३७

सामान्य लोगों की मित्रता उपकार से, पशुपक्षियों की किसी निमित्त कारण से मूर्खों की भय अथवा लोभ से और सज्जनों की मित्रता मात्र एक-दूसरे को देखने से होती है । ऐसे चार तरह से मित्रता होती है ।

२. आहुः सप्तपदी मैत्री । —सुभाषितरत्न मंजूषा

सात कदम सामने जाना मित्रता का लक्षण है ।

३. Choreity begins at home

चैरेटी बिगिन्स् एट होम । —अंग्रेजी कहावत

मित्रता कुटुम्ब से शुरू होती है ।

४. मित्रता करने में धीरज से काम लो, किन्तु कर लेने पर उसे अचल एवं दृढ़ होकर निभाओ !

५. इब्राहीम लिंकन का दुश्मनों के साथ दोस्ती का व्यवहार देखकर उसके साथियों ने कहा—जिनको हमें खत्म करना है; आप उनसे दोस्ती कर रहे हैं । इब्राहीम ने कहा–दोस्ती करके इनको खत्म ही तो कर रहा हूं ।

६. ययोरेव समं वित्तं, ययोरेव समं कुलम् ।
तयोर्मैत्री विवाहश्च, न तु पुष्ट-विपुष्टयोः ॥

—पञ्चतन्त्र १।३०४

जो धन से और कुल से बराबर हैं। उन्हीं की मित्रता एवं वैवाहिक सम्बन्ध उचित माने जाते हैं, हीनाधिकों के नहीं।

७. जो मित्रता बराबरी की नहीं, वह घृणा से समाप्त होती है।

—गोल्डस्मिथ

८. मित्रता की रक्षा के चार उपाय—
[१] बहस बाजी न करना,
[२] मित्र की सम्मति का सम्मान करना,
[३] अपनी गलती को स्वीकार करना
[४] मित्र की गलती की स्पष्ट चर्चा न करना।

—डेलकार्नेगी

४० शिष्टों एवं दुष्टों की मित्रता

१. आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण,
लघ्वीपुरा वृद्धिमती च पश्चात्।
दिनस्य पूर्वार्द्ध-परार्द्धभिन्ना,
छायेव मैत्री खल-सज्जनानाम्॥

—भर्तृहरि-नीतिशतक ६०

दुर्जनों की मित्रता दिन के पूर्वार्द्ध की छाया के समान है, जो प्रारम्भ में बड़ी होकर क्रमशः क्षीण होती जाती है तथा सज्जनों की मित्रता दोपहर की छायावत् है, जो प्रारम्भ में छोटी होकर फिर क्रमशः बढ़ती ही जाती है।

२. इक्षोरग्रात् क्रमशः, पर्वणि-पर्वणि रस विशेषः।
तद्वत् सज्जन मैत्री, विपरीतानां च विपरीता।

—पञ्चतन्त्र २।३६

इक्षु के अग्रभाग से लेकर जैसे क्रमशः प्रत्येक पर्व में रस अधिक अधिक होता है, वैसे ही सज्जनों की मित्रता भी बढ़ती जाती है; किंतु दुर्जनों की मित्रता इससे विपरीत होती है यानी घटती जाती है।

३. सद्भिः सन्धिर्न जीर्यते। —महाभारत

सज्जनों की मित्रता कभी पुरानी नहीं होती।

सच्ची मित्रता में बनावट, सजावट एवं दिखावट नहीं होती।

४. सच्ची मित्रता पानी के साथ कीचड़ की है, पानी सूखते ही कीचड़ का भी मुंह फट जाता है।

५. मुझे ऐसी दोस्ती नहीं चाहिए, जो पाँवों में उलझकर चलने में बाधक हो। —मोर्की

६. आजकल की दोस्ती, कागज का फूल है।
देखने में खूबसूरत, सूंघने में धूल है॥

४१ मित्रता न करने योग्य व्यक्ति

१. बाल-वृद्ध-लुब्ध-मूर्ख-क्लिष्ट-क्लीबैः सह सख्यं न कुर्यात् ।

—चरकसंहिता ६।२५

बालक, बूढ़ा, लोभी, मूर्ख, दुःखी, क्लीब-इनके साथ मित्रता न करे ।

२. उससे कभी मित्रता मत करो ! जिसने तीन मित्र करके छोड़ दिये हैं ।

—लेवेटर

३. लड़के की दोस्ती, जी का जंजाल ।
लड़के की यारी, गधे की सवारी । —हिन्दी कहावत

४. नादान री दोस्ती, जाँन नैं जोखम । —राजस्थानी कहावत

मित्रता-भंग के कारण—

१. विवादो धनसंबन्धो, याचनं स्त्रीषु संगतिः ।
आदानमग्रतः स्थानं, मैत्रीभङ्गस्य हेतवः ।।

—सुभाषितरत्न भाण्डागार, पृष्ठ १६०

विवाद, धन का लेन-देन, याचना- मित्र की स्त्रियों से संसर्ग तथा मित्र के कार्यों में अग्रस्थान का ग्रहण अर्थात् अग्रगण्यता-ये मित्रता टूटने के कारण हैं ।

२. दोस्ती में लेन-देन वैर का मूल । —हिन्दी कहावत

३. कुवाक्यान्तं हि सौहृदम् । —पञ्चतन्त्र ३।५७

कुवाक्य कहने से मित्रता का नाश होता है ।

४२ मित्रता की प्रेरणा

१. मेत्ति भूएसु कप्पए। —उत्तराध्ययन ६।२

प्राणिमात्र से मित्रता रखें!

२. मित्रस्याऽहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। —यजुर्वेद ३६।१८

मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं। हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें!

३. संगच्छध्वं संवदध्वम्। —ऋग्वेद १०।१५।१२

मिलकर चलो और मिल कर बोलो!

४. अज्येष्ठा सो अप्रकनिष्ठा स एते संभ्रातरौ वावृधुः सौभगाय।
—ऋग्वेद ५।६०।५

हम भारतियों में न तो कोई बड़ा है, न छोटा है। हम सब एक भाई जैसे हैं और सब मिलकर उन्नति का प्रयत्न करते हैं।

५. करुं मैं दुश्मनी किससे, अगर दुश्मन भी हो अपना।
मुहब्बत ने नहीं दिलमें, जगह छोड़ी अदावत की!
—उर्दू शेर

संगठन

१. संघे शक्तिः कलौ युगे ।

इस कलिकाल में पारस्परिक संगठन ही बड़ी शक्ति है।

२. घरण जीतै रे लिछमरणा ! —राजस्थानी कहावत

३. संहतिः श्रेयसी पुंसां, स्वकुलैरल्पकैरपि ।
तुषेणापि परित्यक्ता, न प्ररोहन्ति तण्डुलाः ॥
—हितोपदेश १।३६

स्वकुल के सामान्य पुरुषों की एकता भी श्रेष्ठ है। देखो! तुषों दूर के हो जाने पर चावल नहीं उगते।

४. अल्पानामपि वस्तूनां, संहतिः कार्यसाधिका ।
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्, बध्यन्ते मत्तदन्तिनः ॥
—हितोपदेश १।३५

छोटी-छोटी वस्तुओं का भी समूह कार्यसिद्ध करनेवाला हो जाता है। देखो! संगठित तृण भी रज्जु बनकर मत्तहाथी को बांध लेते हैं।

५. पञ्चभिर्मिलितैः किं य-ज्जगतीह न साध्यते ।
—नैषधीय चरित्र

जगत् में ऐसा कौनसा काम है, जिसे पांच व्यक्ति मिलकर न कर सकें?

६. धूमायन्ते व्यपेतानि, ज्वलन्ति संहितानि च।
धृतराष्ट्रोल्मुकानीव, ज्ञातयो भरतर्षभ !

—विदुरनीति ४।६०

भरतश्रेष्ठ धृतराष्ट्र ! जलती हुई लकड़ियां अलग-अलग होने पर धुआं फेंकती हैं और एकत्रित होने पर प्रज्वलित हो उठती हैं। इसी तरह जातिबन्धु भी फूट होने पर दुःख उठाते हैं एवं संगठित होने पर सुखी रहते हैं।

७. अनाधृष्टाः सीदतः सहौजसः।

—शुक्लयजुर्वेद १०।४

संगठित होकर रहने से तुम्हें कोई धमका न सकेगा।

इसी प्रकार सामायिक-पौषध-ध्यान आदि क्रियाओं में भी मन-वचन-काया तीनों संगठित होने पर ही धार्मिक क्रियाएं सफल होती हैं, अन्यथा नहीं।

८ United we stand, devided we fall.

यूनाइटेड वी स्टैंड डिवाइडेड वी फाल।

—केन्टकी का उद्देश्य

संगठित होकर हम खड़े रह सकते हैं, विभाजित होते ही गिर पड़ेंगे।

९. हमें संगठित होकर प्राण देने को प्रस्तुत होना चाहिए, अन्यथा अलग-अलग तो हम प्राण ही दे बैठेंगे।

—फ्रैंकलिन

१०. दूध की नदियाँ

सदा दूध की नदियाँ बहतीं,
जहाँ एकता कैम्प लगाती,
खुशियों में दिन-रात गुजरते,
उदासीनता कोसों जाती;
जो भी करो, शुभ-काम सभी में,
सबल सफलता दौड़ी आती।
अजब एकता के इन्जिन से--
जुड़ी हुई यह जीवन-गाड़ी,
फक-फक कर चलती ही जाती।। सदा० ॥

पर्ण कुटी भी राजमहल का,
इचरजकारी दृश्य दिखाती,
सीधी-साधी पोशाकें भी,
दिव्य वस्त्र-सा रँग लगाती;
रूखी-सूखी बासी रोटी--
पाँचों पकवानों से भी बढ़कर,
तन में जल्दी खून बढ़ाती ।। सदा० ॥

एक-एक को बड़ा समझकर,
बात-बात में आगे करता,
एक-एक को नम्रभाव से,
पूछ-पूछ कर ही पग धरता;
क्षीर-नीर सम एकरूपता--

इस दुनियाँ में बोलो ! क्या-क्या
काम नहीं करके दिखलाती ? सदा० ॥

छोटी-सी संगठित शक्ति एक,
महाशक्ति पर काबू पाती,
हड़तालें संगठित आज भी,
सरकारों का होश भुलाती;
खेल ताश का खेला होगा--
एकाकी ताकत को देखो !
बादशाह को मार भगाती ॥ सदा० ॥

--धनमुनि

११. **तम्बूरे के तीन तार होते हैं**– एक करता है—**ट-र-ड-टुँ**, दूसरा बोलता है—**भ-र-ड़-भूँ**, और तीसरा सुनाता है—**टन्-नन-नन**। श्रोताओं को रस नहीं आता। ज्योंही तीनों तार मिलकर बजते हैं, सुननेवाले मुग्ध हो जाते हैं।

१२. जिस समाज में फूट और पक्षभेद है, वह किस काम का ? आत्मप्रतिष्ठा और आत्मएकता की मूर्ति का समाज चाहिए। अलग-अलग रहकर जितना काम होता है—उससे सौगुणा संघशक्ति से होता है। —अरविन्दघोष

१३. **सामाजिक संगठन**—शरीर के आँख-नाक आदि सभी अंग भिन्न-भिन्न हैं एवं अपना-अपना निश्चित कार्य ही करते हैं, एक दूसरे का नहीं। लेकिन ये सभी शरीर के साथ रहकर करते हैं, अलग होकर नहीं। कटी नाक नहीं सूँघ सकती, उखड़े दाँत नहीं चबा सकते।

दूसरी बात—ये सभी एक-दूसरे के दुःख में भाग लेते हैं जैसे—एक हाथ की हड्डी टूट जाने पर सभी का ध्यान एवं प्रयत्न उसके उपचार में लग जाता है।

तीसरी बात—सभी एक दूसरे के आश्रित हैं, अध्यक्ष नहीं। बच्चों के अंगों में वृद्धों की अपेक्षा सहानुभूति अधिक होती है। अतः उनके घाव आदि जल्दी मिटते हैं। समाज में भी सहानुभूति परमआवश्यक है।

१४. सर्वे यत्र विनेतारः, सर्वे पण्डितमानिनः।
सर्वे महत्त्वमिच्छन्ति, तद् वृन्दमवसीदति॥

—श्राद्धविवरण

जिस संघ-संगठन में सब नेता हैं, सब पण्डितमानी हैं एवं सब बड़प्पन के भूखे हैं, वह संघ नष्ट हो जाता है!

१५. पाँचसौ सुभटों का दल एक राजा के यहाँ नौकरी करने आया। राजा ने परीक्षार्थ उनके सोने की व्यवस्था एक बड़े हॉल में की, एवं एक पलङ्ग देते हुये कहा--तुम्हारे में जो सबसे बड़ा हो, वह इस पर सो जाए। रात भर उन सब में बड़प्पन के लिए विवाद होता रहा। प्रातः सूर्य निकल आया, किन्तु उनमें से कोई सो न सका। राजा को जब सब बातें ज्ञात हुई तो उन्हें विदाई दे दी गई।

कुछ दिनों के पश्चात् पुनः दूसरा दल आया। राजा ने उनकी भी पूर्ववत् व्यवस्था की। सोने के समय कुछ समय तक 'आप बड़े हैं' अतः पलङ्ग पर सोइए, इस प्रकार आपस में मनुहारें की गई, लेकिन कोई भी पलङ्ग पर सोने

के लिए तैयार न हुआ। अन्त में सबने पलङ्ग की ओर अपना-अपना सिर करके फर्श पर ही सो गए। राजा को जब सारी स्थिति का पता चला तो सभी व्यक्तियों को अपनी सेना में स्थान देकर सम्मानित किया।

१६. **अंगुलियाँ एवं अंगूठा—**

तर्जनी— मैं लिखने में, चित्र करने में, संकेत में, मना करने में, चिमटी भरने में, काम आती हूं।

मध्यमा—मैं बीन, चिमटी एवं रुपयों बजाने को के काम में आती हूँ और सबसे बड़ी हूं।

अनामिका— मैं पूजा में और स्वस्तिकादि करने में मुख्य हूँ।

कनिष्ठा—मैं कान खुजलाने में, कष्ट पड़ने पर छेदन-भेदन कराने में, शाकिन्यादि के उपद्रव हरने में और भजन करने में प्रधान हूँ।

अंगुष्ठ— मैं तुम्हारा पति हूँ, देखो लिखना, चित्र करना, ग्रास भरना, चिमटी भरना, चिमटी बजाना, कातना, पींजना, मुट्ठी (गाँठ) बाँधना, दाढ़ी-मूंछ संवारना, शस्त्र चलाना, धोना, पोंछना, काँटा निकालना, गाय दुहना, शत्रु का गला पकड़ना इत्यादि मेरे आश्रय बिना नहीं होते तथा तिलक आदि काम तो खास मेरे से ही होते हैं। फिर भी हमें एक-दूसरे की सहानुभूति अपेक्षित है।

१७. एक घर में सात मता, भलो कठै सु होय ?

—राजस्थानी कहावत

४४ भिन्नता

१. मुंहड़ा देख र टीका काढ़ै । —राजस्थानी कहावतें

२. हाथी रा दांत दिखावण रा और, अने खावण रा और। ,,

३. यूयं वयं वयं यूय–मित्यासीन्मतिरावयो :,
किं जातमधुना येन, यूयं-यूयं वयं-वयम् ।
—भर्तृहरि वैराग्यशतक ६५

पहले तो हम लोगों का विचार यह था कि जो तुम हो, वही हम हैं और जो हम हैं वही तुम हो अर्थात् कोई द्वैत-भाव नहीं था । पर अब क्या बात होगई कि तुम तुम हो और हम हम हैं ? अर्थात् हमारे बीच में भेद-भावना जाग उठी ?

४. मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना, कुण्डे-कुण्डे नवं पयः;
जातौ-जातौ नवाचारा नवा वाणी मुखे-मुखे ।।
—सुभाषित रत्न भाण्डागार पृष्ठ १६५

जितने मस्तक, उतने ही विचार; जितने कुंड-कूप, उतने ही प्रकार का पानी जितनी जातियां, उतने प्रकार के आचार-विचार और जितने मुख, उतने ही प्रकार की वाणी होती है ।

५. Every Shoe fits not every foot —अंग्रेजी कहावत
एवरी शू फिट्स नॉट एवरी फूट ।
मुंहडै जित्ती ही बांता ।

परिशिष्ट

वक्तृत्वकला के बीज
भाग १ से ५ तक में
उद्धृत ग्रन्थों व व्यक्तियों की नामावली

१ ग्रन्थ सूची

अङ्गुत्तर निकाय
अंगिरास्मृति
अग्निपुराण
अथर्ववेद
अर्थशास्त्र
अध्यात्मसार
अध्यात्मोपनिषद्
अन्ययोगव्यवच्छेद द्वात्रिंशिका
अनुयोग द्वार
अपरोक्षानुभूति
अभिधम्मपिटक
अभिधानराजेन्द्र
अभिधानचिन्तामणि
अभिज्ञान शाकुन्तल
अमितिगति श्रावकाचार
अमृतध्वनि
अमर भारती (मासिक)
अवेस्ता
अत्रिस्मृति
अष्टांग हृदय-निदान
आगम और त्रिपिटक:एक अनुशीलन
आचाराङ्गसूत्र
आर्थिक व व्यापारिक भूगोल
आप्त-मीमांसा
आत्मानुशासन
आवश्यकनिर्युक्ति
आवश्यक मलयगिरि
आवश्यक सूत्र
आत्म-पुराण
आतमविकास
आतुर प्रत्याख्यान
आपस्तम्बस्मृति
आवां अद्धी सुर्यश्त
औपपातिक सूत्र
इतिहास समुच्चय
ईशोपनिषद्
इस्लामधर्म
इष्टोपदेश
ईश्वरगीता
उत्तरराम चरित्र

उत्तराध्ययन सूत्र
उत्तराध्ययन बृहद्वृत्ति
उदान
उपदेश तरङ्गिणी
उपदेशप्रासाद
उपदेशमाला
उपदेशसुमनमाला
उपासक दशा
ऋग्वेद
ऋषिभासित
ऐतरेय ब्राह्मण
कठोपनिषद्
कथासरित्सागर
कल्याण (मासिक)
कवितावली
कात्यायन स्मृति
किशन बावनी
किरातार्जुनीय
कीर्तिकेयानुप्रेक्षा
कुमारपालचरित्र
कुमार सम्भव
कुरानशरीफ
कुरुक्षेत्र
कुवलयानन्द
कूटवेद
केनोपनिषद्
कौटिलीय अर्थशास्त्र
खुले आकाश में
गच्छाचार प्रकीर्णक
गरुड़ पुराण
गृहस्थधर्म
गीता
गीता भाष्य
गुर्जरभजनपुष्पावली
गुरुग्रन्थ साहिब
गोम्मटसार
गौतमस्मृति
गोरक्षा-शतक
घटचर्पटपंजरिका
चन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्र
चन्द-चरित्र
चरक संहिता
चरित्र रक्षा
चरकसूत्र
चाणक्यनीति
चाणक्यसूत्र
चित्राम की चोपी
चीनी सुभाषित
छान्दोग्य उपनिषद्
जपुजी साहिब

जागृति (मासिक)
जातक
जाबालश्रुति
जाह्नवी
जीतकल्प
जीवन-लक्ष्य
जीवन सौरभ
जीवाभिगम सूत्र
जैनभारती
जैनसिद्धान्त दीपिका
जैनसिद्धान्त बोलसंग्रह
टॉड राजस्थान इतिहास
टी. बी. हैण्डबुक
डिकेन्स
डेलीमिरर
तत्त्वामृत
तत्त्वार्थ-सूत्र
तन्दुलवैचारिकगाथा
तत्त्वानुशासन
ताओ-उपनिषद्
ताओ-तेह-किंग
तात्त्विक त्रिशती
तिरुकुरल
तीन बात
तैत्तरीय उपनिषद्
दशाश्रुत-स्कन्ध
दशाश्रुत-स्कन्धवृत्ति
दक्षसंहिता
दर्शनपाहुड
दान-चन्द्रिका
दिगम्बर प्रतिक्रमण त्रयी
दीर्घनिकाय
दोहा-संदोह
द्वात्रिंशद् द्वात्रिंशिका
द्रव्य-संग्रह
धन-बावनी
ध्यानाष्टक
धम्मपद
धर्मबिन्दु
धर्मयुग
धर्मसंग्रह
धर्मरत्न प्रकरण
धर्मशास्त्र का इतिहास
धर्मों की फुलवारी
तैत्तिरीय ताण्ड्य महाब्राह्मण
तोरा
थेरगाथा
दशवैकालिक सूत्र
दर्शन-शुद्धि
धर्म-सूत्र

न्याय दीप
नन्दी सूत्र
नवी
नविश्ते
नवभारत टाइम्स (दैनिक)
नवनीत (मासिक)
नवीन राष्ट्र एटलस
नारद पुराण
नारद नीति
नारद परिब्राजकोपनिषद्
निर्णयसिन्धु
नियमसार
निरुक्त
निशीथ चूर्णि
निशीथ भाष्य
निरालम्बोपनिषद्
नीतिवाक्यामृत
नैषधीय चरित्र
पंचतंत्र
पंचास्तिकाय
पंजाबकेशरी
पद्मपुराण
पहेलवी टेक्सट्स्
पब्लियस साइरस
पद्मानन्द पंचविंशति
प्रवचन सार
प्रवचन सारोद्धार
प्रवचन डायरी
प्रश्नव्याकरण सूत्र
प्रशमरति
प्रज्ञापना सूत्र
पातंजल योगदर्शन
पारस्कर स्मृति
प्रास्ताविक श्लोकशतकम्
पुरानी बाइबिल
पुरुषार्थ सिद्धिच्युपाय
पुराण
पूर्व मीमांसा
बृहत्कल्प भाष्य
ब्रह्मग्रन्थावली
ब्रह्मानन्द गीता
बृहदारण्यकोपनिषद्
बृहस्पतिस्मृति
बाइबिल
बुखारी
वीरपश्त्
बुद्ध-चरित्र
बेंदीदाद
बौद्ध-साधक
बंगश्री

भक्तपरिज्ञा प्रकीर्णक
भक्ति-सूत्र
भगवती-सूत्र
भर्तृहरि नीतिशतक
,, वैराग्य शतक
,, शृंगार शतक
भविष्य-पुराण
भावप्रकाश
भाषा श्लोकसागर
भामिनीविलास
भाल्लवीय श्रुति
भूदान पत्रिका
भोजप्रबन्ध
मज्झिमनिकाय
मन्थन
महाभारत
महानिद्देस पालि
महानिशीथ भाष्य
महानिर्वाण तन्त्र
मनुस्मृति
मनोनुशासनम्
मत्स्यपुराण
महाप्रत्याख्यान
मरकूस
मिलाप
मुण्डकोपनिषद्
मुस्लिम
मेडम द स्नाल
मेगजीन डाइजेस्ट
मोहमुद्गर
यश्न्
यश्त्
यशस्तिलकचम्पू
यजुर्वेद
याज्ञवल्क्य स्मृति
यूहन्ना
योगवाशिष्ठ
योगदृष्टि समुच्चय
योगशास्त्र
योगबिन्दु
रघुवंश
रश्मिमाला
राजप्रश्नीय सूत्र
रामचरित मानस
रामसतसई
रामायण
रीड मेगजीन
लूका
व्यवहार चूलिका
व्यवहार-भाष्य

व्यवहार-सूत्र
व्यासस्मृति
व्यास-संहिता
बृहत्पाराशर संहिता
वृहद् द्रव्यसंग्रह
वाल्मीकि रामायण
वशिष्ठ-स्मृति
विचित्रा (मासिक)
विवेकचूड़ामणि
विदुर नीति
विनयपिटक
विवेक विलास
विशेषावश्यक भाष्य
विशेषावश्यक चूर्णि
विश्वकोष
विज्ञान के नए आविष्कार
विसुद्धिमग्गो
विष्णुस्मृति
विश्वमित्र (दैनिक)
वीतराग स्तोत्र
वैद्यक ग्रंथ
वैद्यक-शास्त्र
वैद्य रसराजसमुच्चय
वैशेषिक दर्शन
वैदिक धर्म क्या कहता है ?
वैदिक-विचार विमर्शन
शतपथ ब्राह्मण
श्वेताश्वेतारोपनिषद्
शंकरप्रश्नोत्तरी
शंख स्मृति
शार्ङ्गधर
शान्त सुधारस
शान्तिगीता
श्राद्ध विधि
शास्त्रवार्तासमुच्चय
श्रावकप्रतिक्रमण
शिशुपालवध
शिवपुराण
शिव-संहिता
श्रीमद्भागवत
शील की नववाड़
शुकबोध
शुक्ल युजर्वेद
षट्प्राभृत
स्कन्ध पुराण
स्थानांग सूत्र
सभा तंरग
सचित्र-विश्व कोष
सत्यार्थप्रकाश
समयसार

समवायांग सूत्र
सम्बोधसत्तरि
सप्तव्यसन सन्धान काव्य
सरिता
सर्जना
सवैया शतक
स्वप्न शास्त्र
स्वर-साधना
समाधिशतक
सन्मति तर्कप्रकरण
स्टडीज इन डिसीट
सरल मनोविज्ञान
संयुत्तनिकाय
सामायिक सूत्र
सामवेद
सावधानी रो समुद्र
सिद्धान्त कौमुदी
सिन्दूर प्रकरण
सुखमणि संहिता
सुत्तनिपात
सुभाषितावलि
सुभाषितरत्न खण्ड-मंजूषा
सुभाषित रत्नभाण्डागार
सुभाषित संचय
सुत्तपाहुड
सुबोध पद्माकर
सुभाषित रत्न सन्दोह
सुश्रुत शरीर-स्थान
सूत्रकृतांग सूत्र
सूक्तरत्नावलि
सूक्तमुक्तावलि
सौर परिवार
हउश् मज्दा
हदीश शरीफ
हरिभद्रीयआवश्यक
हनुमान नाटक
हृदय प्रदीप
हृषिकेश
हितोपदेश
हिंगुलप्रकरण
हिन्दुस्तान (दैनिक व साप्ताहिक)
हिन्दसमाचार
क्षेमेन्द्र
त्रिषष्टि शलाकापुरुष चरित्र
ज्ञाता-सूत्र
ज्ञानार्णव
ज्ञान-सार
ज्ञानप्रकाश

व्यक्ति-नामावली २

अफलातून
अबुमुर्ताज
अबीदाउद
अबूबकर केतानी
अल्फान्सीकर
अरविन्द घोष
अरस्तू
आचार्य उमाशंकर
आचार्य श्रीतुलसी
आचार्य रजनीश
आरकिंग
आरजू
आस्निऔमले
ओडोर पारकर
इपिक्टेट्स
इब्राहिम लिंकन
उमास्वाति
एच, मोर
एञ्जिलो
एनीविसेन्ट
एमर्सन
एडीसन
एविड
एलाव्हीलर
एलोसियस
कविराज हरनामदास
कबीर
कन्फ्युसियस
कण्डोर सेट
कांगफ्युत्सी
कार्लाइल
कार्लमार्क्स
कामवेल
क्विकक्
कालूगणी
कुन्दकुन्दाचार्य
कूपर
केटो
कैनेथवालसर
कैम्पिस
कैथराल
कोल्टन
खलील जिब्रान
ग्वाल कवि
गांधी
गिबन
गुरु गोरखनाथ
गुरु नानक
गेटे
ग्रेविल
ग्रेनविल
गोल्डस्मिथ
गोल्डो जी
गौतम बुद्ध
जगन्नाथ कवि
जयचन्द
जयशंकर प्रसाद
जयाचार्य
जवाहरलाल नेहरु
जार्ज चेपमैन

जान मिल्टन
जामी
जॉनसन
जाविदान ए. खिरद
जीनपाली
जुगल कवि
जुन्नेद
जुन्नून
जूवंट
जेंगविल
जे. फरीश
जे. नोफेन
जे. पी. सी. बर्नार्ड
जे. पी. हालेण्ड
जौक
टप्पर
टालस्टाय
टामस कैम्पिस
टालमेज
टी. एल. वास्वानी
ड. ल. जार्ज
डाइट रॉट
डॉ. हरदयालमाथुर
डॉ. एलेग्जी केरेल
डॉ. ग्यास जे रोल्ड

डाड्रिज
डिकेन्स
डिजरायली
डी० जेरोल्ड
डी० एल० मूडी
डेलकार्नेगी
तिरमजी
तुलसीदास
थामस केम्पी
थामस फूलर
थेल्स
थैंकरे
थोरो
दादू
दीपकवि
धनमुनि
धूमकेतु
नकुलेश्वर
नजिन
नलिन
नाथजी
निकोलस
निपट निरंजन
निर्मला हरवंशसिंह
नीत्से

नेपोलियन
प्लुटार्क
प्लेटो
पटोरिया
पद्माकर
परसराम
पीटर वैरो
पीपाकवि
पेस्क
प्रेमचन्द
पेरोसेल्स
पोप
फुलर
फ्रैंकलिन
बर्टन
बनारसीदास
बर्नार्डशा
बलवर
ब्रह्मदत्त कवि
ब्रह्मानन्द
बालजक
बावरी साहिब
बिल्हण कवि
बीचर
बुल्लेशाह

बूलकोट
बेकन
बेताल कवि
बैल
बो. बो.
बोधा
भगवतीचरण वर्मा
भिक्षुगणी
भूधर दास
महात्मा भगवानदीन
मदन द० रियू
महर्षि रमण
मार्कटेन
माण्टेन
माघकवि
मिल्टन
मेरीकोन ए-डी
मुहम्मद-विन-वशीर
मेरी ब्राउन
मेसेंजर
मैकिन्तोस
मैथिलीशरण गुप्त
मोलियर
यशोविजय जी
यूसूफ अस्वात

रज्जबदास
रडयार्ड किपलिंग
रहीम
रविया
रवि दिवाकर
रस्किन
रवीन्द्रनाथ टैगोर
रामकृष्ण परमहंस
रामचरण कवि
रामतीर्थ
रामरतन शर्मा
रिस्टर
रिशर
रूसो
रोम्यांरोला
रोशे
रीशफूको
लाफान्टेन
लावेल
लांगफेलो
लीटन
लीनलिज
लुकमान हकीम
लूथर
लेलिन

लोकमान्य तिलक
व्लेर
व्यावली
वृन्द कवि
वायरन
वायर्स
वारटल
वाल्टेयर
वाशिंगटन इर्विन
विजयधर्मसूरि
विनोबा भावे
विलकाक्स
विलियमपिट
विलियमपेन
विवेकानन्द
शंकराचार्य
शापेनहावर
शिलर
शिवानन्द
शुभचन्द्राचार्य
शेक्सपियर
शेखसादी
स्टैनिलस
स्टील
स्पेंसर

सत्यदेवनारायण सिन्हा
सन्त आगस्तीन
संत ज्ञानेश्वर
संत तुकाराम
सन्त निहालसिंह
सद्गुरुचरण अवस्थी
समर्थगुरु रामदास
सायरस
सिंगुरिनी
स्विट
सिसरो
सुकरात
सुन्दरदास
सूरत कवि
सूरदास
सेलहास्ट
सैनेका
सेमुअल जानसन
सोमदेव सूरि
हजरत अली
हजरत मुहम्मद
हरिभद्र सूरि
हलवर्ट
हयहया
ह्यूम
हाफिज
हावेल
हालीवर्टन
हार्टले
हे एन. भांग
हेनरी वार्ड वीचर
हैजलिट
हैली वर्टन
होमर
होरेश बाल पोल
ब्रायण्ट

लेखक की महत्वपूर्ण रचनाएं

प्रकाशित

१.	एक आदर्श आत्मा	०-४०	**हरकचन्द इन्द्रचन्द नौलखा** माधोगंज, लश्कर ग्वालियर (म० प्र०)
२.	चमकते चांद	०-४०	**रतीराम रामस्वरूप जैन** पो० कैथलमण्डी (हरियाणा)
३.	चरित्र-प्रकाश	२-५०	**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** बालोतरा (राजस्थान)
४.	भजनों की भेंट	०-६०	,, ,,
५.	लोक प्रकाश	१-२५	,, ,,
६.	चौदह नियम	०-२०	**आदर्श साहित्य संघ** पो० चूरु (राजस्थान)
७.	मोक्ष प्रकाश		,, ,,
८.	जैन-जीवन	०-६५	**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** टोहाना (हरियाणा)

९. प्रश्न प्रकाश	०-८०	**श्री जैन श्वे० तेरापन्थी महासभा** ३, पोर्चगीज चर्च स्ट्रीट, कलकत्ता-१
१०. मनोनिग्रह के दो मार्ग	१-२५	**मदनचन्द सम्पतराय बोरड़** दुकान नं० ४०, धानमण्डी, श्रीगंगानगर (राजस्थान)
११. सच्चा धन	०-३०	**श्री दलीपचन्द** **द्वारा : ला० दयाराम बृजलाल जैन**
१२. सोलह सतियां (द्वि. सं.)	२-००	टोहाना मण्डी (हरियाणा)
सोलह सतियां (तृ. सं.)		**श्री चांदमल मानिकचन्द चौरड़िया** पो० छापर, (चूरू, राजस्थान)
१३. ज्ञान के गीत (चौथा संस्करण)	१-००	**लाला दयाराम मंगतराम जैन** टोहानामण्डी (हरियाणा)
१४. ज्ञान-प्रकाश	१-००	**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** पो० भीनासर (राजस्थान)
१५. जीवन प्रकाश (उर्दू)		**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** नाभा (पंजाब)
१६. सच्चा धन (उर्दू)	०-३०	,, ,,
१७. तेरापन्थ एटले शु ?	०-६२	**नेमीचन्द नगीनचन्द जवेरी** 'चन्द्र महल' १३०,शेखमैंमन स्ट्रीट, बम्बई-२
१८. धर्म एटले शु ?	०-७५	
१९. परीक्षक बनो !	०-७५	

२०. वक्तृत्वकला के बीज
(भाग १ से १० तक)
प्रत्येक भाग ५-५०
प्रकाशित ५ भाग
प्रेस में ५ भाग

समन्वय प्रकाशन
द्वारा : मोतीलाल पारख
पो० बाक्स नं० ४२,
अहमदाबाद-२२
एवं
संजय साहित्य संगम
दासबिल्डिग नं० ५,
बिलोचपुरा, आगरा-२

लेखक की अप्रकाशित रचनाएं

हिन्दी :

अवधान-विधि

उपदेश-द्विपञ्चाशिका

उपदेश सुमनमाला

जैनमहाभारत :

जैन रामायण

दौहा-संदोह

व्याख्यान मणिमाला

व्याख्यान रत्नमञ्जूषा

वैदिक विचार विमर्शन (बड़ा)

संक्षिप्त वैदिक विचार विमर्शन

संस्कृत बोलने का सरल तरीका

संस्कृत :

ऐक्यम्

एकाह्निक कालूशतकम्

देवगुरु धर्म द्वात्रिंशिका

प्रास्ताविकश्लोक शतकम्

भाविनी

श्रीकालू कल्याणमन्दिरम्

श्रीभिक्षु शब्दानुशासन वृत्तिद्धि-तप्रकरणम्

गुजराती :

गुर्जर व्याख्यान रत्नावलि

गुर्जर भजन पुष्पावलि

राजस्थानी :

औपदेशिक ढालें

कथा प्रबन्ध

ग्यारह छोटे व्याख्यान

छः बड़े व्याख्यान

धन बावनी

प्रास्ताविक ढालें

सवैया-शतक

सावधानी रो समुद्र

पंजाबी :

पंजाब पच्चीसी

वक्तृत्व कला के बीज

कृति और कृतिकार

श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी के नेतृत्व में आज प्रगति-शिखर पर पहुँच रहा है। मुनि श्री धनराज जी 'प्रथम' (श्री धनमुनि) इस धर्म-संघ के बहुश्रुत विद्वान, सरसकवि, लेखक कुशल संग्रहकार, मधुर-प्रवक्ता और सुयोग्य शिक्षक संत हैं। आप संघ के सर्वप्रथम शतावधानी हैं। वि॰सं॰२००४ माघ कृष्णा १४ रविवार को बम्बई में सर्वप्रथम आपने शतावधान का प्रयोग कर लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया। संस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी तथा उर्दू आदि भाषाओं में आपने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया है।

प्रस्तुत कृति वक्तृत्वकला के बीज आपकी एक श्रमसाध्य अद्वितीय कृति है। वक्तृत्व एवं लेखन के योग्य इतना उपयोगी ... किसी भी ... हुआ होगा ... श (En...

जन्म-वि.सं. ... (हरियाणा)

दीक्षा-वि.सं. ... (राज॰)

कृतियां - लगभग ६०

आवरण पृष्ठ के मुद्रक : मोहन मुद्रणालय, आगरा-२